

THE
HISTORY OF RAJPUTANA

VOLUME III.

PART II.

राजपूताने का इतिहास

जिल्द तीसरी

भाग दूसरा

वीर सेवा मन्दिर
दिल्ली



क्रम संख्या 2762
काल नं० 128.85 उत्तर
खण्ड

THE
HISTORY OF RAJPUTANA

VOL III. Part II.

History of the Banswara State.

BY
MAHĀMAHOPĀDHYĀYA RĀI BAHĀDUR,
Gaurishankar Hirachand Ojha



Printed at the Vedic Yantralaya,

AJMER.



[*All Rights Reserved.*]

First Edition. } . 1937 A. D. { *Price Rs. 4-8-0*

Published by the Author.

Apply for Author's Publications to:—

VYAS & SONS,

Book-Sellers,

AJMER.

राजपूताने का इतिहास

जिल्द तीसरी

भाग दूसरा

बांसवाड़ा राज्य का इतिहास

ग्रन्थकर्त्ता

महामहोपाध्याय

रायबहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा

बाबू चांदमल चंडक के प्रबन्ध से
वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर में छपा

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण

}

विक्रम संवत् १९६३

{

मूल्य ३।।)

बागड़ के वीरशिरोमणि
महारावल उदयसिंह
के
दूसरे पुत्र और बांसवाड़ा राज्य के संस्थापक
महारावल जगमाल
की
पवित्र स्मृति को
सादर समर्पित

भूमिका

राष्ट्र के उत्थान और पतन का बोध इतिहास से ही होता है, इसलिए संसार में इतिहास का स्थान बड़ा ऊंचा है। जिस देश का इतिहास उन्नत है, वही विद्वत्समुदाय की दृष्टि में उन्नत माना जाता है। राजपूताना इतिहास का केंद्र और ऐतिहासिक सामग्री का भण्डार है। यहां की कोई भूमि ऐसी नहीं है, जो अनेक वीरों के रुधिर से न सींची गई हो, परन्तु उनकी अमर कीर्ति अब तक बहुधा अंधकार में ही आवृत है और बहुत थोड़ी सी ही प्रकाश में आई है।

दक्षिणी राजपूताने में बांसवाड़ा राज्य भी ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वहां पुरातत्त्व-सम्बन्धी प्रचुर सामग्री मिलने का क्षेत्र है। ई० स० १६११ (वि० स० १६६८) में वहां के सरवाणिया गांव से ज़मीन के भीतर एक पात्र में गड़े हुए क्षत्रप राजाओं के २३६३ चांदी के सिक्के मिले, जो वि० सं० २३८-४१० (ई० स० १८१-३५३) तक के हैं। एक ही स्थल से एक बार में इतनी बड़ी संख्या में एक ही वंश के सिक्कों का मिलना इतिहास के लिए बड़े महत्व की बात है। विक्रम की बारहवीं शताब्दी के अर्थुणा, पाणाहेड़ा आदि के भग्नावशेष मंदिरों से और शिलालेखों से बागड़ के परमारों तथा तलवाड़ा के शिलालेख से गुजरात के सोलंकी नरेशों के इतिहास पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है। तेरहवीं शताब्दी के मध्य में मेवाड़ के स्वामी सामंतसिंह ने अपना राज्य छूट जाने पर बागड़ में जाकर गुहिलवंशी राज्य की स्थापना की, जिसको अब लगभग ७५० वर्ष से अधिक हो गये हैं। प्रकृति के नियमानुसार कई उलट-फेर होते हुए बागड़ राज्य के भी वि० सं० १५७५ (ई० स० १५१८) के आसपास दो विभाग हो गये, जिनमें एक डूंगरपुर और दूसरा बांसवाड़ा राज्य है।

पर्वतीय प्रदेश होने और आवागमन के साधन सुलभ न होने से विद्वानों का बांसवाड़ा राज्य में बहुधा जाना नहीं हुआ, जिससे वहां के प्राचीन राजवंशों

का इतिहास तो दूर रहा, वर्तमान राजवंश का वास्तविक इतिहास भी अंधकार के आवरण में ढका हुआ है। यही कारण है कि किसी प्रतिष्ठित विद्वान्-द्वारा अब तक ऐसी कोई पुस्तक नहीं लिखी गई, जिससे वहां के वास्तविक इतिहास पर पूर्ण रूप से प्रकाश पड़े।

राजपूताना के अन्य राज्यों की भांति बांसवाड़ा राज्य भी विप-सियों का केन्द्र रहा है। मुसलमानों के आक्रमणों के कारण तो कई साधन नष्ट हुए ही, पर गृहकलह, मेवाड़ के महाराणाओं की चढ़ाइयों, मरहटों और पिंडारियों के उपद्रवों से भी इस राज्य की कम क्षति नहीं हुई। कई बार राजधानी भी हाथ से निकल जाने के अवसर आये। कई देवमंदिर, प्रशस्तियां, पुस्तकें आदि इतिहासोपयोगी साधन वहां के निवासियों की अज्ञानता के कारण नष्ट हो गये तथापि बहुत कुछ सामग्री बची हुई है, जो कम महत्व की नहीं है, परंतु वह सुलभ नहीं है। उसको खोज निकालने के लिए अब तक राज्य अथवा वहां के निवासियों का ध्यान आकर्षित नहीं हुआ है। बाधाएं बहुत होने से बाहर के विद्वान् भी इस ओर कम प्रवृत्त हुए हैं। वस्तुतः यह कार्य राज्य की सहायता और सहयोग पर ही निर्भर है। यदि बांसवाड़ा राज्य वहां के प्राचीन स्थानों की रक्षा और पुरातत्त्व-संबंधी वस्तुओं की खोज का कार्य आरंभ करे तो वहां के इतिहास में नवजीवन आ सकता है।

उदयपुर राज्य के बृहत् इतिहास वीरविनोद के लिखे जाने के समय बांसवाड़ा राज्य के अर्थूणा गांव में, जो पहले समृद्धिशाली नगर था, मेरा जाना हुआ। उस समय वहां के मंदिरों के भग्नावशेष और शिलालेखों को देख मेरे आश्चर्य का पारावार नहीं रहा। राजपूताना म्यूज़ियम (अजमेर) का आध्यक्ष होने के बाद मेरा कई बार उस राज्य में दौरा हुआ और वहां के कई प्राचीन स्थानों को देखने का अवसर मुझे मिला। उस समय मेरे हृदय में मातृभाषा हिंदी में वहां का विस्तृत इतिहास न होने की बात खटकी। फलतः मैंने पुरातत्त्व-संबंधी अनुसंधान के साथ-साथ वहां के इतिहास की सामग्री भी संग्रह करना प्रारंभ कर राजपूताने

के इतिहास में उसको प्रकाशित करने का संकल्प किया। राज्य ने भी मेरे इस कार्य में यथासाध्य हाथ बंटाया और पिछले कुछ शिलालेखों की छापें या नकलें तथा ताम्रपत्रों की नकलें एवं बड़वे की ख्यात की नकल मेरे पास भेज दी। इस प्रकार संग्रहीत सामग्री तथा अन्य साधनों के आधार पर बांसवाड़ा राज्य के इतिहास की रचना का प्रयत्न किया गया है।

इतिहास लेखन में मुख्यतः प्राचीन समय की लिखी हुई पुस्तकों, पुरानी वंशावलियों, बड़वे, भाटों, राणीमंगों तथा अन्य व्यक्तियों की लिखी हुई ख्यातों, विदेशी और एतद्देशीय विद्वानों-द्वारा रचित संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फ़ारसी, अंग्रेज़ी आदि विविध भाषाओं की पुस्तकों तथा काव्यों, शिलालेखों, दानपत्रों, सिक्कों, राजकीय पत्र-व्यवहार, बहीखातों, प्राचीन सनदों (फ़रमान) आदि का उपयोग किया जाता है, परंतु बांसवाड़ा राज्य से प्राप्त सामग्री में उपर्युक्त बातों का बहुत कुछ अभाव है।

इस राज्य से संबंध रखनेवाली प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकें अब तक देखने में नहीं आईं। यदि राज्य-द्वारा उनकी खोज होती तो कुछ तो अवश्य मिल जातीं। कुछ हस्तलिखित ब्राह्मण-ग्रंथ बांसवाड़ा के निवासियों के यहां मेरे देखने में आये। उनमें से केवल दो एक में ही वहां के राजाओं के नाम (जिनके समय पुस्तक लिखी गई है) और पुस्तक लिखने के संवत् दिये हैं।

पुरानी वंशावलियां भी इस राज्य में अवश्य होनी चाहियें, परंतु राज्य ने उनकी भी कोई खोज नहीं की है। मेरे बहुत खोजने पर केवल एक स्थान से १५० वर्ष पूर्व की लिखी हुई वहां के राजाओं की वंशावली मिली है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से उपयोगी है। शिलालेखों से उसमें दो एक स्थान पर संवत् का भले ही मिलान न हो, पर उसमें लिखी हुई घटनाएं और अधिकांश संवत् मिल जाते हैं।

पुरानी कोई भी ख्यात इस राज्य में नहीं है और न वहां राणीमंगों की ख्यात है। वहां से केवल बड़वे की ख्यात की नकल ही

आई है, जो सत्य-मार्ग से वंचित करती है । उसमें लिखित कई पुरानी घटनाएं विश्वास-योग्य नहीं हैं, क्योंकि उनकी वास्तविकता अन्य साधनों से सिद्ध नहीं होती । उसमें दिये हुए कई संवत् भी अशुद्ध हैं ।

विदेशी और एतद्देशीय विद्वानों ने अपनी रचनाओं में इस राज्य के संबंध में बहुत कम लिखा है, जिसका कारण यही हो सकता है कि राजनैतिक दृष्टि से यह राज्य विशेष महत्त्व का नहीं रहा तथा वहां के राजाओं को अपने राज्य से बाहर जाकर वीरता प्रदर्शित करने का अवसर नहीं मिला । गत पचास वर्षों में राजपूताने में इतिहास की तरफ लोगों का अनुराग बढ़ा है, जिससे कतिपय विद्वानों ने इस राज्य का थोड़ा-थोड़ा इतिहास भी लिखा है, जो दस-पांच पृष्ठों से अधिक नहीं है और उससे वहां के इतिहास की विशेष रूप से पूर्ति नहीं होती ।

शिलालेखों की छापें तथा दानपत्रों की नकलें जो राज्य से आई हैं, उनसे वहां के इतिहास पर सम्यक् रूप से प्रकाश नहीं पड़ता । वहां से प्राप्त पिछले शिलालेख केवल मृत-वीरों का स्मरण दिलाते हैं । वे भी अधिकांश क्षिगड़े हुए और बहुत भ्रष्ट खुदे हैं । राज्य ने वहां के शिलालेखों की नकलें और छापें तैयार करने के लिए पंडित करुणाशंकर शास्त्री को नियत किया, जिसके धर्म से कुछ सहायता अवश्य मिली है ।

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इस राज्य पर महारावल जगमाल के वंशजों का ४०० वर्ष से शासन होने पर भी उनकी कोई विस्तृत प्रशस्ति अथवा शिलालेख नहीं है, जो वहां के इतिहास के लिए उपयोगी हो । इसका यही कारण हो सकता है कि प्रारंभ से ही बांसवाड़ा के नरेशों का ध्यान इतिहास के संरक्षण की तरफ नहीं गया । बहुधा उनमें विद्या-प्रेम की कमी होने से उनके दरबार में कभी कोई ऐसा विद्वान भी नहीं रहा, जो अपनी रचनाओं-द्वारा उनकी कीर्ति को अमर करता । वहाँ के नरेशों के बनवाये हुए उल्लेखयोग्य देवमंदिर, तालाब और बावलियां

आदि भी कम देखने में आई हैं । उनकी युद्ध-वीरता की गाथाएं भी विशेष रूप से लोक-प्रसिद्ध नहीं हैं, जिससे उनकी कीर्ति देशव्यापी होती ।

बांसवाड़ा से आई हुई दानपत्रों की नकलें भी वहां के इतिहास के संबंध में कोई विशेष बात प्रकट नहीं करतीं । वर्तमान राजवंश के छांदी के सिके तो स्वतंत्र रूप से चलते ही न थे । वहां से आये हुए कुछ शिलालेखों और दानपत्रों के संवत् भी विश्वास के योग्य नहीं हैं ।

राजकीय पत्र-व्यवहार, बहीखातों, पुरानी सनदों से इतिहास की बहुत कुछ कमी पूरी हो जाती है, परंतु बांसवाड़ा राज्य से पत्र-व्यवहार, बही-खाते आदि मिल नहीं सके । संभवतः राज्य में उनका अस्तित्व नहीं है । राज्यों के दफ्तर पहले मंत्रियों आदि के यहां रहते थे । जब राजा उनसे अप्रसन्न हो जाता तो वे (मंत्री आदि) उपयोगी कागज़-पत्रों को छिपा देते अथवा उन्हें नष्ट कर डालते थे । यही कारण है कि राजपूताना के राज्यों में ऐसी सामग्री कम प्राप्त होती है । फिर भी कुछ राज्यों में ऐसी सामग्री बची हुई है, परंतु वह वहां के शासकों की उस ओर अभिरुचि न होने से नष्ट होती जाती है ।

ऐसी परिस्थिति में बांसवाड़ा राज्य का सर्वाङ्ग-पूर्ण इतिहास लिखा जाना बहुत कठिन है, तथापि जितनी सामग्री उपलब्ध थी और जो खोज से प्राप्त हुई, उसके आधार पर इस इतिहास का निर्माण हुआ है । जनश्रुतियां और बड़बे-भाटों की ख्यातें ज्यों की त्यों स्वीकार नहीं की जाती हैं, क्योंकि काल पाकर उनमें मनगढ़ंत बातें भी जोड़ दी जाती हैं । इसलिए पुष्ट प्रमाणों की भित्ति पर जो बात युक्तिसङ्गत हो, उसी को ग्रहण किया जाता है । बांसवाड़ा राज्य का इतिहास लिखने में मैंने भी वैसा ही किया है । यह मैं ऊपर बतला चुका हूं कि बांसवाड़ा राज्य में प्राचीन ऐतिहासिक वस्तुओं की खोज कम ही हुई है । संभव है कि खोज से भविष्य में और कुछ नूतन बातों पर प्रकाश पड़े । उस समय इस इतिहास में भी परिवर्तन के स्थल उपस्थित हो सकते हैं; तो भी मुझे विश्वास है कि मेरा यह इतिहास भावी इतिहास-लेखकों को पथ-प्रदर्शक का काम अवश्य देगा ।

बांसवाड़ा राज्य का यह इतिहास लगभग तीन वर्ष हुए, तैयार हो चुका था, परंतु मेरी वृद्धावस्था के कारण शारीरिक शक्ति ठीक न रहने तथा कुछ अन्य बाधाएं उपस्थित हो जाने से इसको प्रकाशित करने में बहुत अधिक विलंब हुआ है। जहां तक हो सका, इस इतिहास के लिखने में बहुत सावधानी रक्खी गई है, फिर भी भूल मनुष्य मात्र से होती है और मैं भी इसका अपवाद नहीं हूं। लेखक-दोष से कुछ स्थलों पर त्रुटियां रह गई हैं। इसके लिए अंत में शुद्धिपत्र लगा दिया गया है; तो भी अशुद्धियां रह जाना संभव है। आशा है पाठक उनके लिए मुझे सूचित करेंगे, ताकि द्वितीय संस्करण में उचित संशोधन कर दिया जाय।

मैं उन ग्रन्थकर्त्ताओं का, जिनके ग्रन्थों की नामावली अन्त में दी गई है, अत्यन्त अनुग्रहीत हूं। इस ग्रन्थ के प्रणयन में मुझे अपने पुत्र प्रोफ़ेसर रामेश्वर ओझा, एम० ए०, तथा निजी इतिहास विभाग के कार्यकर्ता पं० नाथूलाल व्यास तथा पं० चिरंजीलाल व्यास ने सहयोग दिया है, जिनका नामोल्लेख करना मैं आवश्यक समझता हूं।

अजमेर
वि० सं० १९६३ }

गौरीशंकर हीराचंद ओझा.

विषय-सूची

पहला अध्याय

भूगोल-सम्बन्धी वर्णन

विषय	पृष्ठांक
स्थान और क्षेत्रफल	१
सीमा	२
पर्वत श्रेणी	२
नदियां	२
भीलें	३
जलवायु	३
ज़मीन और पैदावार	४
जंगल	५
पशु-पक्षी	५
खाने	५
सड़कें	५
जनसंख्या	६
धर्म	६
जातियां	६
उद्योग	६
वेष-भूषा	७
भाषा	७
लिपि	७
दस्तकारी	८
व्यापार	८

विषय	पृष्ठांक
त्योहार ...	८
मेले ...	८
ढाकझाने और तारघर ...	६
शिक्षा ...	६
अस्पताल ...	६
तहसील ...	६
न्याय ...	१०
जागीर, भोम आदि ...	१०
सेना ...	११
आय-व्यय ...	११
सिक्का ...	११
वर्ष और मास ...	१२
तोपों की सलामी और खिराज ...	१२
प्राचीन और प्रसिद्ध स्थान ...	१२
बांसवाड़ा ...	१२
तलवाड़ा ...	१४
गढ़ी ...	१६
पाणादेड़ा ...	१७
अर्थूणा ...	१७
चींच (छीछ) ...	२०
नौगामां ...	२२
बागीदौरा ...	२२
कलिंजरा ...	२३
कुशलगढ़ ...	२४

(३)

दूसरा अध्याय

बांसवाड़ा के प्राचीन राजवंश

(गुहिलवंश के अधिकार से पूर्व)

विषय	पृष्ठांक
क्षत्रप	२५
परमार	३२
सोलंकी	३६

तीसरा अध्याय

गुहिल वंश	४०
सामंतसिंह का वागड़ पर अधिकार करना ...	४१
बांसवाड़े के दीवान के कथन की समीक्षा ...	४४
बांसवाड़ा राज्य का डूंगरपुर से पृथक् होना ...	५६

चौथा अध्याय

महारावल जगमाल से समरसिंह तक

जगमाल	६४
गुजरात के सुलतान बहादुरशाह का वागड़ का आधा भाग पुनः जगमाल को दिलाना	६४
धणवीर को निकालकर चित्तोड़ दिलाने में महारावल का महाराणा की सेना में सम्मिलित होना ...	७०
महारावल की मृत्यु और संतति	७१
महारावल के समय के शिलालेख	७२

विषय	पृष्ठांक
महारावल के समय के अन्य कार्य	७३
जयसिंह	७४
प्रतापसिंह	७५
डूंगरपुर के स्वामी आसकरण से युद्ध ...	७५
हजीरों की सहायतार्थ महाराणा उदयसिंह के साथ महारावल प्रतापसिंह का जाना	७६
महारावल का बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार करना	७८
मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह (प्रथम) का बांसवाड़े पर सेना भेजना	७९
महारावल प्रतापसिंह का जोधपुर के राव चंद्रसेन को अपने यहां रखना	७९
महारावल के समय के शिलालेख	८०
महारावल का बेहंत और संतति	८१
मानसिंह	८१
उग्रसेन	८३
चौहान मानसिंह का उपद्रव करना और उग्रसेन का उसको बांसवाड़े से निकालना	८३
मानसिंह का शाही दरबार में जाकर बादशाह से बांसवाड़े का क्रमान प्राप्त करना	८७
महारावल का चौहान मानसिंह को राठोड़ सूरजमल के द्वारा मरवाना	८७
बादशाह अकबर का मिर्जा शाहखान को सेना देकर बांसवाड़े पर भेजना	८९
डूंगरपुर के स्वामी कर्मसिंह के साथ महारावल उग्रसेन का युद्ध	९३
महारावल के समय के शिलालेख और उसकी मृत्यु...	९०
उदयभाण	९१

विषय	पृष्ठांक
समरसिंह (समरसी)	६२
महारावल की गद्दीनशीनी	६२
महारावल का बादशाह जहांगीर के पास मांडू जाना	६२
बादशाह शाहजहां का महारावल को मनसब देना ...	६३
मेवाड़ के महाराणाओं से बांसवाड़ा के नरेशों का राजनैतिक संबंध	६३
महाराणा जगतसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना ...	६४
बादशाह शाहजहां का मेवाड़ से बांसवाड़े को पृथक् करना	६७
औरंगज़ेब का महाराणा राजसिंह के नाम बांसवाड़े का फ़रमान होना	६८
महाराणा राजसिंह का बांसवाड़े पर अपने प्रधान फ़तहचंद को सेना देकर भेजना	६९
महारावल के समय के शिलालेख और दानपत्र आदि	१००
महारावल का देहान्त	१०२
महारावल की राणियां और संतति	१०२
महारावल का व्यक्तित्व	१०३

पांचवां अध्याय

महारावल कुशलसिंह से उम्मेदसिंह तक

कुशलसिंह	१०४
महाराणा राजसिंह का डांगल ज़िले के २७ गांव खालसे करना	१०४
बांसवाड़ा राज्य का महारावल के नाम फ़रमान होना	१०४
ख्यात और महारावल कुशलसिंह	१०६
कुशलगढ़ का आबाद होना	१०७

विषय	पृष्ठांक
महारावल के समय के शिलालेखादि...	१०८
महारावल का देहांत और उसकी संतति	१११
अजयसिंह ...	११२
महाराणा जयसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना	११२
मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह (दूसरा) की चढ़ाई	११३
महारावल के अन्य कार्य ...	११४
महारावल के समय के शिलालेखादि	११४
महारावल का देहांत और संतति ...	११५
भीमसिंह ...	११६
विष्णुसिंह...	११७
उदयपुर के महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) का पंचोली बिहारीवास	
को सेना देकर बांसवाड़े पर भेजना ...	११७
महारावल का मरहटों से मेल करना	११६
मरहटे सेनापतियों का बांसवाड़े से लूट खसोट-द्वारा रुपये	
लेना ...	११६
महाराणा संग्रामसिंह का बांसवाड़े पर फिर सेना भेजना	१२०
महारावल की बहिन का विवाह ...	१२२
महारावल का देहांत ...	१२२
महारावल की राखियां व संतति ...	१२३
महारावल के समय के शिलालेख तथा ताम्रपत्र	१२३
महारावल के समय बांसवाड़ा राज्य की स्थिति	१२६
उदयसिंह ...	१२७
धार की सेना का आकर लूट-मार करना	१२७
महारावल के समय के शिलालेख आदि	१२८
पृथ्वीसिंह ...	१३०
धार के स्वामी आनंदराव का बांसवाड़े में आना	१३०

विषय	पृष्ठांक
महारावल का सितारे जाकर शाहू राजा से मिलना...	१३१
राणा रत्नसिंह के पुत्रों को मारकर बांसवाड़ावालों का संथ पर अधिकार करना	१३३
लूणावाड़ा के राणा बख्तसिंह से युद्ध होना ...	१३४
महारावल के समय बांसवाड़ा की स्थिति ...	१३५
महारावल का देहांत	१३६
महारावल की राणियां और संतति	१३६
महारावल के समय के बने हुए महल, बाग आदि ...	१३७
महारावल के समय के शिलालेख व दानपत्र ...	१३७
महारावल का व्यक्तित्व	१४०
विजयसिंह	१४१
बांसवाड़े पर महाराणा भीमसिंह की चढ़ाइयां ...	१४१
धार के स्वामी आनंदराव (दूसरा) की बांसवाड़े पर चढ़ाई	१४३
खुदादादखां सिंधी का वागड़ में उपद्रव करना ...	१४४
होल्कर के सेनापति रामदीन का उपद्रव ...	१४५
महारावल का देहांत	१४६
महारावल के समय के शिलालेख व ताम्रपत्र ...	१४६
महारावल के समय बांसवाड़ा राज्य की स्थिति ...	१४८
उम्मेदसिंह	१४६
नवाब करीमखां का बांसवाड़े में आना ...	१४६
अंग्रेज़-सरकार से संधि	१५०
महारावल उम्मेदसिंह का देहांत	१५५
महारावल की संतति	१५५
महारावल के समय के शिलालेख व दानपत्र ...	१५५

छठा अध्याय

महारावल भवानीसिंह से वर्तमान महारावल सर पृथ्वीसिंहजी तक

विषय	पृष्ठांक
भवानीसिंह	१५७
अंग्रेज़-सरकार से खिराज के सम्बन्ध में अहदनामा होना	१५७
ई० स० १८२३ में खिराज सम्बन्धी अंग्रेज़ सरकार से नया अहदनामा होना	१५९
पोलिटिकल एजेंट का शासनकार्य में हस्तक्षेप करना	१६३
महारावल के अंग्रेज़ सलाहकार को मारने का प्रयत्न	१६३
महारावल का शासन-कार्य व्यवस्थित रूप से चलाने का इक़रार करना	१६४
महारावल का देहांत और संतति	१६६
महारावल के समय के शिलालेख	१६६
बहादुरसिंह	१६७
महारावल की गद्दीनशीनी	१६७
महारावल का देहांत	१६८
लक्ष्मणसिंह	१६९
महारावल का राज्याभिषेक	१६९
बांसवाड़ा के भीलों का मोखेरी पर हमला करना ...	१६९
सिपाही विद्रोह	१७०
अंग्रेज़ सरकार से गोद लेने की सनद मिलना ...	१७१
बेणेश्वर के मंदिर के लिए डूंगरपुर और बांसवाड़ा के बीच तफ़रार पैदा होना	१७२
महारावल का रेलवे निकालने के लिए ज़मीन देने का इक़रार करना	१७३
बांसवाड़ा राज्य की सलामी की १५ तोपें नियत होना	१७३

विषय	पृष्ठांक
महारावल का कुशलगढ़ के राव से विरोध ...	१७३
महारावल का दीवानी फौजदारी की अदालतें नियत करना	१७८
अपराधियों के सम्बन्ध में अंग्रेज़ सरकार के साथ अहदनामा होना	१७६
बांसवाड़े में असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट का नियत होना	१८३
अस्पताल की स्थापना	१८४
ओरीवाड़े के ठिकाने पर दीलतसिंह का नियत होना	१८४
विलायती और मकरानी लोगों को नौकरी से हटाना	१८५
गुढ़े के ठाकुर हिम्मतसिंह का विद्रोही होकर मारा जाना	१८५
गढ़ी के राव रत्नसिंह और महारावल के बीच मनोमालिन्ध्य होना	१८६
बांसवाड़े में पाठशाला की स्थापना	१८७
ढाकखाना खोला जाना	१८७
दास प्रथा की रोक होना	१८७
सोदलपुर के दल्ला रावत का बखेड़ा करना ...	१८८
बापीदल के मुखिया सआदतखां का गिरफ्तार होना	१८६
बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ राज्यों के बीच सीमा सम्बन्धी झगड़ा होना	१८६
भीलों का उपद्रव	१९०
लेफ्टिनेंट चार्ल्सयेट का असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट नियत होना	१९२
अंग्रेज़ सरकार से महारावल के लिए भंडा आना ...	१९२
सरदारों से समझौता होना	१९२
सीमा सम्बन्धी झगड़ों का निर्णय होना ...	१९८
महारावल का शासन कार्य से पृथक् होना ...	१९६
महारावल के बनवाये हुए महल आदि ...	१९६

विषय	पृष्ठांक
महारावल के अन्य कार्य	२००
महारावल का परलोकवास	२०१
महारावल का व्यक्तित्व	२०१
शंभुसिंह	२०२
महारावल का जन्म और गद्दीनशीनी	२०२
कौंसिल-द्वारा शासन प्रबन्ध	२०२
महाराजकुमार पृथ्वीसिंह का विवाह	२०४
महारावल को राज्याधिकार मिलना	२०४
महारावल के समय के अन्य कार्य	२०४
महारावल का देहांत और संतति	२०५
महारावल पृथ्वीसिंहजी	२०५
जन्म तथा शिक्षा	२०५
महाराजकुमार चंद्रवीरसिंह का जन्म	२०६
दिल्ली दरबार में सम्मिलित होना	२०६
गोविंदगिरि साधु का भीलों को बहकाना	२०६
महारावल को राज्याधिकार मिलना	२०७
यूरोपीय महासमर में महारावल की सहायता	२०७
दक्षिणी राजपूताने के पोलिटिकल एजेंट का दफ्तर बांसवाड़ा से हटना	२०७
महारावल को खिताब मिलना	२०८
महारावल की शासन कार्यों में अभिरुचि	२०८
महारावल के लोकोपयोगी कार्य	२०९
महारावल के बनवाये हुए महल आदि	२११
महारावल के जीवन पर विचार	२११
महारावल की राणियां और संतति	२१२

सातवां अध्याय

महारावल के समीपी सम्बन्धी और मुख्य-मुख्य सरदार

विषय	पृष्ठांक
सरदारों के दर्जे आदि ...	२१४
महारावल के निकट के सम्बन्धी ...	२१५
चंदुजी का गुढ़ा ...	२१५
धीपलदा ...	२१५
सरवन ...	२१६
गोड़ी तेजपुर ...	२१६
दीलतपुरा ...	२१६
शंकरसिंह ...	२१६
सागरोद ...	२१७
कांदू ...	२१७
तेजपुर ...	२१६
सुरपुर ...	२१६
प्रथम वर्ग के ताज़ीमी सरदार ...	२२०
मोलां (मोटा गांव) ...	२२०
मेतवाला ...	२२२
अर्थूणा ...	२२३
गढ़ी ...	२२४
गनोड़ा ...	२२७
खेड़ा-रोहानिया ...	२२७
नवा गांव ...	२२८
मौर ...	२२८
कुशलगढ़ ...	२२८
गोपीनाथ का गुढ़ा (तलवाड़ा) ...	२३४

विषय	पृष्ठांक
ओरीवाड़ा	२३५
कुशलपुरा	२३५
द्वितीय वर्ग के सरदार	२३६

परिशिष्ट

१—गुहिल से लगाकर बागड़ के राजा सामंतसिंह तक मेवाड़ के राजाओं की वंशावली	२३७
२—बागड़ के राजा सामंतसिंह से लगाकर महारावल उदयसिंह तक की वंशावली	२३६
३—महारावल जगमाल से लेकर वर्तमान महारावल सर पृथ्वी-सिंहजी तक बांसवाड़ा के राजाओं की वंशावली ...	२४०
४—बांसवाड़ा राज्य के इतिहास का कालक्रम ...	२४१
५—बांसवाड़ा राज्य के इतिहास के प्रणयन में जिन-जिन पुस्तकों से सहायता ली गई उनकी सूची ...	२४६
६—अनुक्रमणिका—	
(क) वैयक्तिक	२५२
(ख) भौगोलिक	२७६

चित्र-सूची

चित्र	पृष्ठांक
(१) बांसवाड़ा के प्राचीन महल	१२
(२) महारावल लक्ष्मणसिंह	१६६
(३) महारावल सर पृथ्वीसिंहजी, के० सी० आई० ई०	२०५

ग्रन्थकर्ता-द्वारा रचित तथा संपादित ग्रन्थ आदि ।

स्वतन्त्र रचनाएं—

	मूल्य
(१) प्राचीन लिपिमाला (प्रथम संस्करण)	... अप्राप्य
(२) भारतीय प्राचीन लिपिमाला (द्वितीय परिवर्धित संस्करण)	... रु० ४०)
(३) सोलंक्रियों का प्राचीन इतिहास—प्रथम भाग	... अप्राप्य
(४) सिरौही राज्य का इतिहास	... अप्राप्य
(५) बापा रावल का सोने का सिक्का	... ॥)
(६) वीरशिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह	... ॥=)
(७) * मध्यकालीन भारतीय संस्कृति	... ३)
(८) राजपूताने का इतिहास—पहली जिल्द (दूसरा संशोधित और परिवर्धित संस्करण)	... ७)
(९) राजपूताने का इतिहास—दूसरा खंड	... अप्राप्य
(१०) राजपूताने का इतिहास—तीसरा खंड	... रु० ६)
(११) राजपूताने का इतिहास—चौथा खंड	... रु० ६)
(१२) राजपूताने का इतिहास—तीसरी जिल्द, (पहला भाग, डूंगरपुर राज्य का इतिहास)	... रु० ४)
(१३) राजपूताने का इतिहास—तीसरी जिल्द (दूसरा भाग, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास)	... रु० ४॥)
(१४) उदयपुर राज्य का इतिहास—पहली जिल्द	... अप्राप्य
(१५) उदयपुर राज्य का इतिहास—दूसरी जिल्द	... रु० ११)
(१६) † भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की सामग्री	... ॥)
(१७) ‡ कर्नल जेम्स टॉड का जीवनचरित्र	... १)
(१८) † राजस्थान-ऐतिहासिक-दन्तकथा, प्रथम भाग*** ('एक राजस्थान निवासी' नाम से प्रकाशित)	... अप्राप्य

* प्रयाग की हिन्दुस्तानी एकेडेमी-द्वारा प्रकाशित । इसका उर्दू अनुवाद भी उक्त संस्थान ने प्रकाशित किया है । गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी (अहमदाबाद) ने इस पुस्तक का गुजराती अनुवाद प्रकाशित किया है, जो वहां से १) रु० में मिलता है ।

† काशी नागरीप्रचारिणी सभा-द्वारा प्रकाशित ।

‡ जलविज्ञान प्रेस बांकीपुर से प्राप्त ।

(१६) × नागरी अंक और अक्षर

सम्पादित—

(२०) * अशोक की धर्मलिपियां—पहला खंड (प्रधान शिलामिलेख)	रु० ३)
(२१) * सुलेमान सौदागर	„ १।)
(२२) * प्राचीन मुद्रा	„ ३)
(२३) * नागरीप्रचारिणी पत्रिका (त्रैमासिक) नवीन संस्करण भाग १ से १२ तक	प्रत्येक भाग „ १०)
(२४) कोशोत्सव स्मारक संग्रह	३)
(२५-२६) † हिन्दी टॉड राजस्थान—पहला और दूसरा खंड (इनमें विस्तृत सम्पादकीय टिप्पणियों-द्वारा टॉड- कृत 'राजस्थान' की अनेक ऐतिहासिक चोटियां शुद्ध की गई हैं)	रु० ४)
(२७) जयानक-प्रणीत 'पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य' सटीक	(प्रेस में)
(२८) जयसोमरचित 'कर्मचंद्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यम्'	(प्रेस में)
(२९) * मुंहणोत नैणसी की ख्यात—दूसरा भाग	रु० ४)
(३०) गद्य-रत्न-माला (हिन्दी)—संकलन	रु० १।)
(३१) पद्य-रत्न-माला (हिन्दी)—संकलन	रु० ॥।)

× हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग-द्वारा प्रकाशित ।

* काशी नागरीप्रचारिणी सभा-द्वारा प्रकाशित ।

† खड्गबिन्दास प्रेस (बांकीपुर) द्वारा प्रकाशित ।

—:०:—

ग्रन्थकर्ता—द्वारा रचित पुस्तकें 'व्यास पराड सम्स', बजमेर के कहां
मिलती हैं ।

राजपूताने का इतिहास

जिल्द तीसरी

भाग दूसरा

बांसवाड़ा राज्य का इतिहास

पहला अध्याय

भूगोल-सम्बन्धी वर्णन

बांसवाड़ा राज्य वागड़ (प्राचीन डूंगरपुर राज्य) का पूर्वी हिस्सा है । उसका अर्थ कोई कोई 'बांस की भाड़ी से रक्षित स्थान' करते हैं ।

यह राज्य राजपूताने के बिल्कुल दक्षिणी भाग में $23^{\circ} 3'$ और $23^{\circ} 55'$ उत्तर अक्षांश तथा $73^{\circ} 52'$ और $74^{\circ} 47'$ पूर्व देशांश के बीच स्थित है । इसका क्षेत्रफल 1886 वर्ग मील है ।

(१) जहां इस समय राजधानी बांसवाड़ा है, वहां पहले बांसों की झाड़ी थी और अब भी इसके समीपवर्ती प्रदेश में बांसों की प्रचुरता है । इसी कारण इस कस्बे का नाम 'बांसवाड़ा,' 'बांसवाहाल' और 'बांसवाला' लिखा मिलता है ।

बांसवाड़ा राज्य की रियासत में लिखा है कि रावल जगमाल ने (वि० सं० १२८७-१६०१ = ई० स० १२३०-१२४४) बांसना भील को मारकर उसकी पाल (पत्नी) की जगह नया कस्बा आबाद किया, जो उस (बांसना) के नाम से बांसवाड़ा कहलाया (अर्सेकिन; बांसवाड़ा राज्य का राजेडियर, पृष्ठ १२६); परन्तु यह कथा भातों की गदंत जान पड़ती है, क्योंकि रावल जगमाल के समय से पहले के शिलालेखों से बांसवाड़े का विद्यमान होना पाया जाता है—

बांसवाड़ा राज्य के उत्तर में प्रतापगढ़, उदयपुर और डूंगरपुर; पश्चिम में डूंगरपुर और सूथ; दक्षिण में पंचमहाल का भाखोद परगना, भावुआ और इंदोर के पेटलावद परगने का कुछ अंश सीमा तथा पूर्व में सैलाना, रतलाम और प्रतापगढ़ राज्यों के अंश हैं। उत्तर से दक्षिण तक लंबाई लगभग ५८ मील और पूर्व से पश्चिम तक अधिक से अधिक चौड़ाई अनुमान ५० मील है।

इस राज्य का मध्यवर्ती तथा पश्चिमी भाग खुला मैदान है, जो उपजाऊ है, किन्तु दक्षिण और पूर्व के हिस्से पहाड़ी हैं। इस प्रदेश में पहाड़ियां बहुधा उत्तर से दक्षिण की ओर चली गई हैं, जो १३०० से १७०० फुट तक ऊंची हैं। कुशलगढ़ से ६ मील उत्तर की एक पहाड़ी १६८८ फुट ऊंची है।

बांसवाड़ा राज्य की मुख्य नदी माही है, जो बहुधा सालभर नदिया बहती है।

माही (मही, मही-सागर)—इस नदी का निकास ग्वालियर राज्य के आमभरा परगने से है। यह ग्वालियर, धार, भावुआ, रतलाम और सैलाना राज्यों में बहती हुई राजपूताना में प्रवेश कर, दो मील तक रतलाम और बांसवाड़ा की सीमा बनाकर पूर्व में खांदू के पास बांसवाड़ा राज्य में प्रवेश करती है और अनुमान ४० मील उत्तर में बहती हुई उदयपुर और डूंगरपुर राज्य की सीमा तक चली जाती है। वहां से यह पश्चिम में मुड़कर बांसवाड़ा और डूंगरपुर राज्यों की सीमा पर बहती हुई, गुजरात के महीकांठा तथा रेवाकांठा राज्यों में प्रवेशकर खंभात की खाड़ी में जा

.....स्वस्ति संवत् १५३६ आषाढ सुदि १ पूर्व महाराजाधिराजश्रीसोम-दासविजयराज्ये अथेह श्रीबांसवालाग्रामात् युवराजश्रीगंगदास एतैः भट्ट-सोमदत्त एतेभ्यः चीतलीग्रामे भूमिहल ४ च्यारि उदकधारया शासनपत्र-प्रसादीकृतं ए भूमि प्रयागि संकल्पकरी.....।

चीतली गांव के लेख की छाप से।

गिरती है। बांसवाड़ा राज्य तथा उसकी सीमा के आस-पास इसका बहाव करीब १०० मील है। इसके तट ऊंचे होने के कारण इसका जल खेती के काम में नहीं आता।

अनास—यह नदी मध्य भारत से निकलती है और बांसवाड़ा राज्य में प्रवेशकर उत्तर और उत्तर पश्चिम में ३८ मील बढ़कर पिपलाय गांव के निकट माही में मिल जाती है। तट ऊंचे होने के कारण इसका जल भी खेती के काम में नहीं आता।

हारन—यह नदी बांसवाड़ा राज्य की दक्षिण-पूर्वी पहाड़ियों से निकलती है और उत्तर तथा उत्तर पश्चिम में बहती हुई लिलवानी गांव के निकट अनास में जा गिरती है। इसके तट बहुत ऊंचे नहीं हैं, जिससे इसका जल खेती के काम में आता है।

परो (पराव)—यह नदी प्रतापगढ़ राज्य से निकलती है। सेम-लिया गांव के पास इस राज्य में प्रवेश करने के उपरान्त, यह उधर की पहाड़ियों का जल लेती हुई दक्षिण-पश्चिम में ३० मील बढ़कर, पारगांव के पास माही में मिलती है। पोन्नन और पांडिया नाम के नाले इसी में मिलते हैं। इसका जल खेती में सहायक है।

चाप—यह नदी कलिंगरा से उत्तर-पूर्व की पहाड़ियों से निकलती है और उत्तर तथा पश्चिम में बहती हुई गढ़ी से उत्तर-पश्चिम में माही में जा मिलती है। नागदी, कागदी और कलोल इसके सहायक नाले हैं। इसका बहाव करीब ३८ मील है और इसका जल खेती के काम में आता है।

इस राज्य में प्राकृतिक भील कोई नहीं है। कृत्रिम भीलों में भी कोई बड़ी भील नहीं है। छोटी भीलें नोगामा, तलवाड़ा, बागीदोरा, वजवाना, आसन, गनोड़ा, घाटोल, खोडन, मेतवाला, अर्थूणा, कलिंगरा और बाई तालाब (राजधानी के निकट) हैं।

यहां का जलवायु सामान्यतः आरोग्यप्रद नहीं है। वर्षाऋतु के बाद दो महीने तक लोगों में प्रायः मलेरिया की शिकायत हो जाती है। उष्णकाल

जलवायु

में यहां गर्मी १०८° तक पहुंच जाती है और शीतकाल में कभी-कभी जल भी जम जाता है। बांसवाड़ा राज्य में वर्षा की औसत लगभग ३८ इंच है। यहां ई० स० १८६३ में ६५ इंच से कुछ अधिक और १८६६ में केवल १४ इंच वर्षा हुई थी।

इस राज्य की भूमि का अधिकांश भाग खेती के लिए अच्छा है। उसमें खरीफ़ (सियालू) और रबी (उन्हालू) दोनों फ़सलें होती हैं। खरीफ़ का आधार वृष्टि है और रबी कुओं और तालाबों से होती ज़मीन और पैदावार है। माळ की ज़मीन में दोनों फ़सलें बहुधा बिना जल के ही हो जाती हैं, तो भी रबी की फ़सल खरीफ़ की फ़सल से बहुत कम होती है। इस राज्य के पश्चिम और दक्षिण ओर की समतल भूमि भूरी और रेतीली है, जो खेती के लिए बहुत उपयोगी है। राजधानी से दक्षिण-पश्चिम में तथा वहां से ५-१४ मील तक की ज़मीन काली (माळ) है, जिसमें रबी की फ़सल भी अच्छी होती है। राजधानी से पश्चिम और उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूर्व की मिट्टी लाल और पथरीली होने से वहां भूरी या काली भूमि के समान अच्छी पैदावार नहीं होती। चौथी क्रिस्म की मिट्टी बेरंगी अर्थात् भूरी-काली मिली हुई है और उसकी पैदावार एकसी नहीं है। पूर्व की तरफ़ के पहाड़ी प्रदेश के नीचे के हिस्सों की भूमि कहीं काली, कहीं बेरंगी और कहीं भूरी है, इसलिए भूमि के अनुसार वहां पैदावार अधिक या कम होती है। खरीफ़ की फ़सल में मुख्य पैदावार मक्का, जवार, तिल, माल, चावल, उड़द, मूंग, कुलथी, ग्वार, कपास, कोदरा, बट्टी, कुरी, सन और मिर्च आदि हैं। रबी की फ़सल में मुख्य पैदावार गेहूं, जौ, चना, सरसों, अफ़ीम और जीरा हैं। गन्ने की खेती भी इस राज्य में होती है। पहाड़ों के ढालू हिस्सों में, जहां हल नहीं चल सकते, वहां भी ज़मीन खोदकर भील वगैरह मक्का बोते हैं, जिसको वालरा (प्राकृत में वल्लर) कहते हैं। शाकों में बैंगन, आलू, शकरकंद, रतालू, अरबी, गोभी, प्याज, लहसुन, ककड़ी आदि कई प्रकार के शाक और फलों में आम, केला, दाड़िम, खरबूजा, शहतूत, बेर, करौंदा और टींबरू (आबनूस) आदि यहां उत्पन्न होते हैं।

राज्य के आधे से अधिक भाग (विशेष कर उत्तर पूर्व) में जंगल है। इसमें सागवान, शीशम, आबनूस, बबूल, इमली, बड़, पीपल, हल्दू, सालर, जंगल महुआ, ढाक, धौ, कदम्ब आदि के वृक्ष हैं। बांस पहाड़ों में होते हैं। आम और महुआ अधिकतर खेतों की मेड़ों पर लगाये जाते हैं। खजूर के वृक्ष तर ज़मीन में पाये जाते हैं। जंगल की पैदावार में लकड़ी और घास के अतिरिक्त शहद, मोम, गोंद और लाख आदि हैं। राज्य के जंगल का कुछ अंश आज कल सुरक्षित है।

पालतू पशुओं में गाय, बैल, भैंस, घोड़ा, ऊंट, गधा, भेड़, बकरी आदि हैं। वन्य पशुओं में बाघ, चीता, भेड़िया, रीछ, सूअर, सांभर, चीतल, हिरण, नीलगाय, जरख, भेड़ला (चार सींगवाला हिरण), सियार, लोमड़ी, खरगोश आदि पाये जाते हैं। पक्षियों में मोर, तोता, कोयल, तीतर, कबूतर, बटेर, हरियल, चील, कौआ, गिद्ध, शिकरा, बाज़, जंगली मुर्ग आदि हैं। जल के निकट रहनेवाले पक्षियों में सारस, बगला, टिटिहरी, बतख और जलमुर्ग आदि हैं। जल-जन्तुओं में कछुआ, घड़ियाल, अनेक प्रकार की मछलियां और केकड़ा आदि पाये जाते हैं।

इस राज्य में उल्लेखनीय खान कोई नहीं है। जनश्रुति है कि तल-वाड़ा के पास सोने की एक खान थी। खमेरा और लोहारिया में लोहे की खानें हैं, किन्तु कई वर्षों से ये बंद पड़ी हैं। तलवाड़ा, खानें चींच और अचलपुरा में सफ़ेद पत्थर की, जो इमारतों के काम में आता है, खानें हैं। चूने का पत्थर कई स्थानों में मिलता है।

बांसवाड़ा राज्य में कोई रेलवे नहीं है, किन्तु पूर्व में राज्य के नज़दीक बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे के रतलाम और नामली तथा दक्षिण-पूर्व में गोधरा-रतलाम ब्रांच पर भैरोंगढ़ स्टेशन है। गुजरात की तरफ़ का व्यापार बढ़ाने के लिए दोहद (बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे) स्टेशन बांसवाड़ा राज्य के निकट पड़ता है, जहां बांसवाड़े से भालोद होकर जाना पड़ता है। इसलिए राज्य ने भालोद

पहुँचने के लिए अपनी सीमा में पक्की सड़क बनाना शुरू किया है, जिसका अधिकांश भाग बन भी चुका है। इससे व्यापार में वृद्धि होकर आमद-
रफ्त में सुविधा होगी। बाक़ी तमाम इलाक़े में मोटरों, बैल-गाड़ियों, तांगों
आदि के लिए कच्ची सड़कें बनी हुई हैं, जो चातुर्मास में बहुधा बिगड़
जाती हैं।

इस राज्य में अब तक छः बार मनुष्य-गणना हुई है, जिसके अनुसार
यहां की जनसंख्या ई० स० १८८१ में १५२०४५, ई० स० १८९१ में २११६४१,
जन संख्या ई० स० १९०१ में १६५३५०, ई० स० १९११ में १८७४६८,
ई० स० १९२१ में २१६५२४ और ई० स० १९३१ में
२६०६७० (कुशलगाढ़ सहित) थी। ई० स० १९०१ में मनुष्य-संख्या के अधिक
घटने का कारण वि० स० १९५६ (ई० स० १८९८-९९) का भयंकर
दुष्काल था।

इस राज्य में प्रचलित धर्म हिन्दू, इस्लाम और जैन हैं। हिन्दू
धर्म में शैव, वैष्णव तथा शाक्त और जैनों में श्वेताम्बर, दिगम्बर एवं
धर्म थानकवासी (टूँडिये) हैं। मुसलमानों में शिया और
सुन्नी हैं, जिनमें अधिक संख्या सुन्नी लोगों की है।
शिया मत के माननेवालों में बोहरे मुख्य हैं। भील और मीणे भी, जिनकी
संख्या इस राज्य में अधिक है, हिन्दू देवी-देवताओं के उपासक हैं। ईसाई
धर्म के प्रचार के लिए यहां मिशन भी नियत है।

बांसवाड़ा राज्य में सब से अधिक संख्या भीलों और मीणों की है,
जिनकी गणना जंगली जातियों में की जाती है। इसका कारण उनका
जातियां जंगलों और पहाड़ियों में रहना ही है। हिन्दुओं में
ब्राह्मण, राजपूत, महाजन, कायस्थ, चारण, भाट, सुनार,
दरोया, दरजी, लुहार, सुथार (बढ़ई), कुम्हार, माली, नाई, धोबी,
जाट, गुजर, कुनबी, मोची, बलाई, गाडरी, ढोली, मेहतर आदि अनेक
जातियां हैं।

यहां के निवासी अधिकतर खेती करते हैं। कुछ लोग पशु-पालन

से भी अपना निर्वाह करते हैं। कई लोग व्यापार, नौकरी, दस्तकारी, मज़दूरी आदि करते हैं। व्यापार करनेवालों में महाजन और बोहरे मुख्य हैं। कुछ महाजन नौकरी और खेती भी करते हैं। ब्राह्मण पूजा-पाठ तथा पुरोहिताई करते हैं, किन्तु कोई-कोई खेती, व्यापार एवं नौकरी भी करते हैं। भील पहले खेती तथा मज़दूरी के अतिरिक्त चोरी-धाड़े का पेशा भी करते थे, किन्तु अब राज्य की ओर से वे खेती-बारी के काम में लगाये गये हैं, तो भी कहतसाली में वे अपना पुराना पेशा कभी-कभी कर ही बैठते हैं।

इस राज्य के निवासियों की सामान्य पोशाक पगड़ी, कुरता, लंबा अंगरखा और धोती है। ग्रामीण एवं भील आदि जंगली लोग पगड़ी के स्थान पर पोतिया (मोटा वस्त्र) बांधते हैं और कमर तक छोटा अंगरखा पहनते हैं। आजकल साफ़े तथा टोपी का प्रचार भी बढ़ने लगा है। बोहरे तथा मुसलमान प्रायः अंगरखा व पाजामा पहनते हैं। स्त्रियों की पोशाक में घाघरा (लहंगा), साड़ी और चोली (कांचली) मुख्य हैं। कुछ स्त्रियां कुरती भी पहनती हैं। मुसलमान स्त्रियां पाजामा, लंबा कुरता और ओढ़नी (दुपट्टा) का प्रयोग करती हैं। भीलों, किसानों और ग्रामीण लोगों की स्त्रियों के लहंगे कुछ ऊंचे होते हैं। भीलों की स्त्रियों के हाथों में पीतल व लाख की चूड़ियां तथा पैरों में घुटनों तक बहुधा पीतल के ज़ेवर होते हैं। बोहरों की स्त्रियां बाहर जाते समय प्रायः लहंगा, दुपट्टा और वुरका पहनती हैं।

यहां की प्रधान भाषा वागड़ी है, जो गुजराती से अधिक सम्बन्ध रखती है। कुछ लोग मालवी भी, जिसे रांगड़ी कहते हैं, बोलते हैं। ब्राह्मण, राजपूत, महाजन आदि उसे राजस्थानी के मिश्रण के साथ बोलते हैं।

लिपि यहां की नागरी है, किन्तु वह घसीटरूप में लिखी जाती है। उसमें कुछ गुजराती वर्णों का भी प्रयोग होता है और लिखने में शुद्धता का विचार बहुत कम रक्खा जाता है।

आजकल सरकारी दफ्तरों में अंग्रेज़ी का भी प्रयोग होने लगा है ।

यहां दस्तकारी आदि का काम न तो अधिक होता है और न सुन्दर। देहात में लोग खादी बुनते हैं । कुछ लोग सोना, चांदी, पीतल आदि के ज़ेवर तथा हाथीदांत व नारियल की चूड़ियां बनाते हैं । लाख की चूड़ियां, लकड़ी के खिलौने, पलंग के पाये तथा रंगई का काम भी यहां पर होता है । राज्य के जेलखाने में कैदियों-द्वारा गलीचे, आसन, दरियां, निवार आदि भी बनते हैं ।

इस राज्य में परतापुर, पारोदा और कुशलगढ़ व्यापार के लिए मुख्य हैं । इस राज्य का व्यापार मालवा तथा गुजरात से अधिक होता है ।

राज्य से बाहर जानेवाली वस्तुओं में अन्न, रुई, घी, तिल, मसाले, महुआ, इमारती लकड़ी, गोंद, लाख आदि हैं । बाहर से आनेवाली वस्तुओं में सोना, चांदी आदि सब धातुएं, कपड़ा, नमक, तंबाकू, पीतल तथा तांबे के बर्तन, शकर, पेट्रोल, मिट्टी का तेल, नारियल और सूखा मेवा आदि हैं ।

हिन्दुओं के मुख्य त्योहार रक्षाबंधन, दशहरा (नवरात्रि), दिवाली और होली हैं । गनगौर और तीज स्त्रियों के मुख्य त्योहार हैं । दशहरे पर

महारावल की सवारी बड़ी धूमधाम के साथ निकलती है । मुसलमानों के मुख्य त्योहार दोनों ईदें (इदुलफ़ितर और इदुलजुहा) तथा मोहर्रम (ताजिया) हैं । भीलों के त्योहारों में भी दशहरा, दिवाली तथा होली मुख्य हैं । वे लोग इन दिनों में ख़ूब शराब पीकर नाच, गान आदि आमोद-प्रमोद करते हैं । वे हाथ में डंडे लेकर एक प्रकार का नाच, जिसे 'गैर' कहते हैं, करते हैं । इनकी स्त्रियां भी इन उत्सवों में ख़ूब भाग लेती हैं ।

इस राज्य में प्रसिद्ध मेला कोई नहीं होता । राजधानी में राजराजेश्वर का मेला वर्तमान महारावल के राज्याभिषेकोत्सव पर प्रतिवर्ष पौष मास में दो सप्ताह तक होता है, जिसमें आस पास के बहुत लोग एकत्रित होते हैं ।

इस राज्य में सरकारी डाकखाने और तारघर अधिक नहीं हैं। बांसवाड़ा, तलवाड़ा, गढ़ी, परतापुर और कुशलगढ़ में डाकखाने हैं तथा बांसवाड़ा और कुशलगढ़ में तारघर भी हैं। जहां डाक-
डाकखाने और तारघर
खाने नहीं हैं, वहां राज्य की ओर से हरकारों-द्वारा डाक पहुंचाने की व्यवस्था है।

पहले यहां शिक्षा का कोई प्रबंध न था। विद्यार्थी खानगी मदरसों में पढ़ते थे। आजकल राज्य की ओर से शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध हो गया है और राजधानी में एक मिडिल स्कूल तथा महाराणी कन्या-
शिक्षा
पाठशाला है। मुसलमानों और बौद्धों की धार्मिक शिक्षा के लिए इस्लामिया स्कूल है, जिसको राज्य से सहायता दी जाती है, एवं मिशनरियों-द्वारा भी शिक्षा-प्रचार होता है। इनके अतिरिक्त प्रारंभिक शिक्षा के लिए बड़ोदिया, कलिंजरा, घागीदोग, चींच, मोटागढ़, तलवाड़ा, बोरी, खोडण, सरेड़ी, पारोदा, लोहारिया, खमेरा, घाटोल, भूंगड़ा, दानपुर और परतापुर में सरकारी प्रारंभिक पाठशालाएं हैं। गढ़ी ठिकाने में एक स्कूल है, जिसमें छठी क्लास तक पढ़ाई होती है। इनके अतिरिक्त आजणा, नौगामा, चोपासाग, आसोड़ा, चांदरवाड़ा, शेलकाटी और कोटड़े में प्रारंभिक पाठशालाएं गढ़ी के सरदार की तरफ से चलती हैं। इसी तरह अयूणा, खांदू और मनोड़ा में प्रारंभिक पाठशालाएं वहां के सरदारों की तरफ से हैं। कुशलगढ़ इलाके में वहां के सरदार की तरफ से स्कूलें हैं।

पाश्चात्य विधि से चिकित्सा जारी होने से पूर्व लोग वैद्यों तथा हकीमों से इलाज कराते थे, किन्तु अब बांसवाड़ा, कुशलगढ़ और गढ़ी में
अस्पताल
अस्पताल खुल गये हैं, जहां चीरफाड़ का काम भी होता है। वैद्य और हकीम लोग भी अपनी शैली से इलाज करते हैं।

बांसवाड़ा राज्य दो भागों में विभक्त है, जो उत्तरी तथा दक्षिणी भाग के नाम से प्रसिद्ध हैं। मालसे की सारी ज़मीन का प्रबन्ध
तहसील
माल के महकमे के अधीन है, जिसकी सहायता के लिए दो तहसीलवार व पटवारी नियत हैं।

पहले न्याय-विधान प्राचीन प्रणाली से होता था। कई दीवानी मुकदमे पंचायतों-द्वारा भी तय होते थे, किन्तु आज-कल नई प्रणाली से न्याय होने लगा है। रेवेन्यू अफसर को दूसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट के और दोनों तहसीलदारों को तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट के अधिकार प्राप्त हैं। वे दीवानी मामलों में १०० रुपये तक के मुकदमों का फैसला कर सकते हैं। उनके फैसलों की अपीलें सिविल जज और मजिस्ट्रेट के पास होती हैं। मजिस्ट्रेट को प्रथम श्रेणी के अधिकार प्राप्त हैं। सिविल जज १०००० रुपये तक के दीवानी दावे सुन सकता है। अब सबसे बड़ी अदालत कौंसिल है, जो मजिस्ट्रेट और सिविल जज के फैसलों की अपीलें सुनती है तथा उनके अधिकार के बाहर के सब दीवानी और फौजदारी मामलों का फैसला करती है। पहले दर्जे के सरदारों में से कुछ को (जीवित काल के लिए) फौजदारी मुकदमों में दूसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट के अधिकार प्राप्त हैं और दीवानी मामलों में मुंसिफ के।

कुशलगढ़ का राव इस विषय में स्वतन्त्र है और वह अपने इलाके में दीवानी व फौजदारी के मुकदमों का स्वयं फैसला करता है, किन्तु बड़े मामले पोलिटिकल एजेंट की अनुमति से तय होते हैं और प्राण-दंड तथा जन्म-कैद की सज़ाएं एजेंट गवर्नर जनरल राजपूताना की आज्ञा से होती हैं।

राज्य की भूमि खालसा, जागीर और माफ़ी (धर्मादा) में बंटी हुई है। खालसे की भूमि का बंदोबस्त हो गया है और वहां का हासिल नक़द रुपयों में लिया जाता है। जागीरें राजाओं के भाई-बेटों को उनके निर्वाह के लिए और सरदारों को बहुधा राज्य की रक्षार्थ की हुई बड़ी सेवा के उपलक्ष्य में मिली हुई हैं। उनके तीन दर्जे हैं, जो सोलह, बत्तीस और गुड़बंदी कहलाते हैं। इनमें मोलां (मोटा गांव), अर्थूणा, गद्दी, मेतवाला, गनोड़ा, खांदू, सूरपुर, तेजपुर, कुशलपुरा, कुशलगढ़, गोपीनाथ का गुड़ा और ओड़वाड़ावाले प्रथम श्रेणी के सरदार 'सोलह' कहलाते हैं। महारावल के भाइयों को दी हुई जागीरों की गणना भी 'सोलह' में ही होती है। उनको छद्म (खिराज) देने

के अतिरिक्त अपनी पूरी जमीयत के साथ राज्य की सहायता करनी पड़ती है तथा दरबार व त्योहारों के अवसर पर उपस्थित होना पड़ता है। वे राज्य की आज्ञा के बिना गोद नहीं ले सकते। माफ़ी और धर्मादा की भूमि मंदिरों, ब्राह्मणों, चारणों आदि को पुण्यार्थ दी हुई है। इन्हें न तो खिराज देना पड़ता है और न हासिल, किन्तु ये अपनी ज़मीन दूसरे को बेच या दे नहीं सकते।

जागीरदारों की जमीयत के सवारों तथा पैदल सैनिकों के अतिरिक्त राज्य की ओर से १८ सवार और २५६ पुलिस के सिपाही हैं। इनके अति-
 सेना रिक्त पैदल सैनिकों की एक नवीन पलटन भी बनाई गई है, जो 'पृथ्वी राइफ़ल्स' कहलाती है। उसमें १३४ सिपाही हैं।

राज्य के खालसे की वार्षिक आय अनुमान ६६६००० रुपये और लगभग इतना ही व्यय है। आय के मुख्य स्रोत ज़मीन का हासिल, चुंगी
 आय-व्यय (सायर), पक्साइज़ (मादक द्रव्यों की बिक्री), जंगल, स्टॉप (कोर्ट फ़ी), सरदारों की छट्ठंद आदि हैं। खर्च के मुख्य स्रोत पुलिस, फ़ौज, हाथखर्च, महलों का खर्च, पब्लिक वर्क्स, धर्मादा, शिक्षा, सरकार का खिराज आदि हैं।

बांसवाड़ा राज्य में पहले बादशाह शाह आलम (दूसरा) का फ़ारसी लेखवाला सालमशाही (शाह आलमशाही) रुपया चलता था। उसके लिए
 सिक्का बांसवाड़े में टकसाल भी थी, क्योंकि उस समय के कई सिक्कों पर 'ज़र्ब बांस (वाड़ा)' लेख पढ़ा जाता है। अधिकतर यहां तांबे के पैसे ही बनते रहे, जिनपर एक तरफ़ 'अ' के नीचे 'रयासत बांसवाला' और 'संवत्' तथा दूसरी तरफ़ लकीरों एवं बिंदियों से बना हुआ कांच की हंडी के जैसा चित्र है। ई० स० १८७० में कर्नल जे० पी० निक्सन ने बांसवाड़े की टकसाल के बारे में राजपूताना के एजेंट गवर्नर जेनरल को रिपोर्ट की कि महारावल अपने सिक्के बनाने के हक़ का दावा करता है, जिसपर पीछे से सरकार ने यह आज्ञा दी कि देशी राज्यों की

दकसालों का बना हुआ कोई सिक्का बांसवाड़ा राज्य में दाखिल न होने पावे, परन्तु उन्हीं दिनों महारावल लक्ष्मणसिंह ने सोने, चांदी और तांबे के सिक्के बनवाना शुरू कर दिया, जिनके दोनों ओर एक दूसरे से मिले हुए सांकेतिक अक्षरों का लेख है, जो शिव के किसी नाम का सूचक बतलाया जाता है। ये लक्ष्मणशाही सिक्के कहलाते थे। उक्त महारावल के रुपये, अठन्नियां और चवन्नियां शुद्ध चांदी की बनती थीं, क्योंकि उसका यह मत था कि मिलावटवाली चांदी के सिक्के दान में देना धर्मविरुद्ध है। ई० स० १६०४ (वि० सं० १६६१) में सालमशाही और लछुमनशाही सिक्कों के स्थान में कलदार सिक्का जारी हुआ।

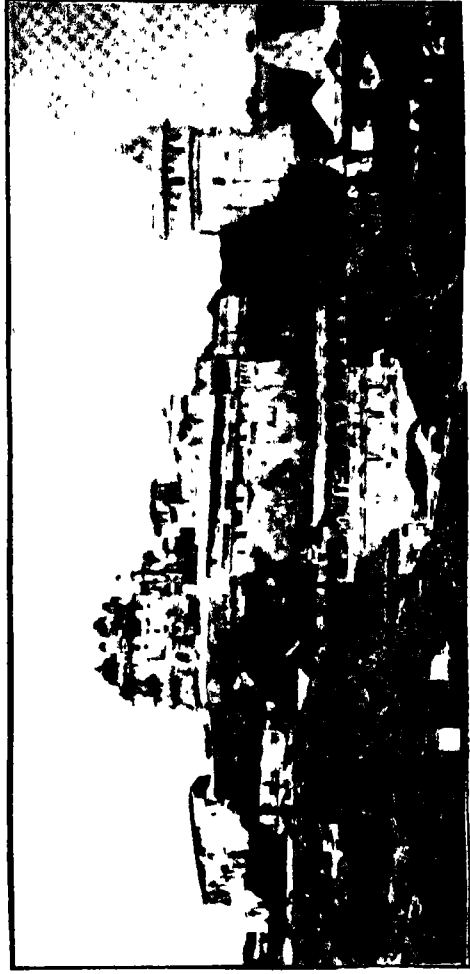
इस राज्य में वर्ष आषाढ़ सुदि १ को प्रारंभ होकर ज्येष्ठ वदि अमावास्या को समाप्त होता है और महीने सुदि १ से प्रारंभ होकर वदि अमावास्या को समाप्त होते हैं। इसलिए संवत् 'आषाढ़ादि' और मास 'अमांत' कहलाते हैं।

ईस्वी सन् की १८ वीं शताब्दी के आस-पास बांसवाड़ा राज्य ने मराठों को खिराज देना स्वीकार किया और ई० स० १८१८ (वि० सं० १८७५) में यह राज्य अंग्रेज सरकार के संरक्षण में आया तब से राज्य को १५ तोपों की सलामी का सम्मान प्राप्त है और अंग्रेज सरकार को १७५०० रुपये कलदार सालाना खिराज के दिये जाते हैं।

इस राज्य में प्राचीन एवं प्रसिद्ध स्थान बहुत हैं, जिनमें से मुख्य-प्राचीन और प्रसिद्ध स्थान मुख्य का वर्णन नीचे किया जाता है—

बांसवाड़ा—यह कस्बा बांसवाड़ा राज्य की राजधानी है। इसके विषय में मेजर अर्सकिन ने लिखा है कि बांसवाड़ा के पहले राजा जगमाल ने बांसना (बांसिया) भील को मारकर ई० स० १५३० (वि० सं० १५८७) में इसे आबाद किया, परन्तु यह कथन जनश्रुति या भाटों की ख्यातों के आधार पर लिखा हुआ प्रतीत होता है। बांसवाड़ा तो वि० सं० १५३६ (ई० स० १६७६) के पहले से ही आबाद था, जैसा कि ऊपर

राजपूताने का इतिहास—



बांसवाड़ा के प्राचीन राजमहल

बतलाया जा चुका है'। यह भी प्रसिद्धि है कि बांसवाड़े का क़स्बा पहले वर्तमान बांसवाड़े से दो मील दक्षिण में संचाई माता के पहाड़ के नीचे बसा था और पीछे से यहां बसाया गया। यह क़स्बा चारों तरफ़ कोट से घिरा हुआ है। यहां की आबादी ई० स० १९३१ की मनुष्यगणना के अनुसार १०४४४ है। यहां कई बड़े-बड़े मंदिर भी बने हुए हैं, जो सोलहवीं शताब्दी से पूर्व के नहीं हैं। बाज़ार अच्छा है, शहर में बिजली की रोशनी और टेलीफ़ोन का प्रबन्ध है। तारघर-सहित पोस्ट आफ़िस, संस्कृत पाठशाला, अंग्रेज़ी मिडिल स्कूल, महाराणी कन्यापाठशाला, हैमिल्टन पुस्तकालय, घंटाघर, अस्पताल और म्यूनिसिपैलिटी भी यहां है। राजमहल एक ऊंची पहाड़ी पर बने हुए हैं, जो बड़ी दूर से दृष्टिगोचर होते हैं। वर्तमान महारावलजी को शिल्पकला से अनुराग होने से उन्होंने राजमहलों में कई सुन्दर स्थान बनवाकर यहां की शोभा बढ़ा दी है। शहर-विलास महल से दूर-दूर का दृश्य नज़र आता है। बांसवाड़ा क़स्बे के पूर्व में बाई तालाब है, जो महारावल जगमाल की ईडरवाली राणी लासबाई का बनवाया हुआ है। उसकी पाल पर एक छोटा महल भी बना है। वहां से थोड़ी दूर पर एक बाग़ में वहां के कई राजाओं की छत्रियां (स्मारक) बनी हुई हैं। बस्ती से बाहर कचहरियां, लाइब्रेरी, कुशलबाग़ महल, राजराजेश्वर का मंदिर, मद्रसा, अस्पताल, अनाथालय, राजपूत बोर्डिंग हाउस, पावर हाउस और गोशाला बनी हुई हैं तथा पास ही कनेडियन मिशन का चर्च है। नदी के तट पर नृपतिनिवास नामक सुन्दर कोठी और दीवान का बंगला बना

(१) हुंगरपुर राज्य के चीतली गांव से मिले हुए महारावल सोमदास के समय के वि० सं० १५३६ आषाढ़ सुदि १ (ई० स० १४७६ ता० २० जून) के दो शिलालेखों से पाया जाता है कि उक्त महारावल का कुंवर गंगदास बांसवाड़े में रहता था और वहां रहते समय उसने चीतली (चीतरी) गांव में ४ हल की भूमि भट्ट सोमदत्त को दान की थी।

मूल लेख के लिए देखो पृ० २ में टिप्पण।

‘मिराते सिक्ंदरी’ से भी वि० सं० १५७७ (ई० स० १५२०) में गुजरात के सुलतान मुज़फ़्फ़रशाह की सेना का बांसवाड़े पर चढ़ाई करना पाया जाता है।

बेले; हिस्ट्री ऑफ़ गुजरात; पृ० २७२।

हुआ है। बांसवाड़े से ६ मील दूर विठ्ठलदेव गांव में नीलकंठ महादेव के समीप नदी के तट पर वर्तमान महारावलजी का बनवाया हुआ सरिता-निवास नामक सुन्दर राज्य-प्रासाद है; एवं बांसवाड़े से दो मील दक्षिण में एक पहाड़ पर जगमेरु नाम का स्थान है, जहां रावल जगमाल अपने भाई पृथ्वीराज के साथ की लड़ाइयों के समय रहा था। वहां उस समय के बने हुए गढ़ी के द्वार आदि के विह्वल अव तक विद्यमान हैं।

तलवाड़ा—बांसवाड़े से लगभग ८ मील पश्चिम में तलवाड़ा नाम का बड़ा गांव है। यहां लक्ष्मीनारायण और गोगरेश्वर (गोकर्णेश्वर) महादेव के मन्दिरों के अतिरिक्त संभवनाथ का विशाल जैन-मन्दिर है। इस मन्दिर की टूटी हुई जैन-मूर्तियों में से कुछ तो नदी में बहादीं और कुछ मन्दिर के पीछे की खावड़ी में डाल दी गई हैं। क्रिस्वे के बाहर वि० सं० की ११ वीं शताब्दी के आस-पास का बना हुआ जीर्ण सूर्यमन्दिर है। इसमें सूर्य की मूर्ति एक कोने में रखी हुई है और बाहर के चबूतरे पर सूर्य का रथ (एकचक्र) टूटा हुआ पड़ा है। उसके निकट श्वेत पत्थर की बनी हुई नवग्रहों की मूर्तियां हैं, जिनमें से ३ टूटी हुई हैं। सूर्य-मन्दिर के पास ही वि० सं० की बारहवीं शताब्दी के आस-पास का बना हुआ लक्ष्मीनारायण का मन्दिर है, जिसके नीचे का हिस्सा प्राचीन और ऊपर का नया है। मूर्ति सभामंडप में पड़ी हुई है। एक ताक में ब्रह्मा की मूर्ति भी है।

सूर्य-मन्दिर के निकट ही एक और जैन-मन्दिर है, जिसका थोड़ा ही अंश अवशेष रहा है। बाहर एक खेत में वहां की दो दिगंबर मूर्तियां पड़ी हैं, जो कारीगरी की दृष्टि से बहुत उत्तम हैं। उनमें से एक के नीचे वि० सं० ११२३ (ई० सं० १०६६) का लेख है। इस मन्दिर के सामने ही थोड़ी दूर पर गदाधर का जीर्ण-मन्दिर है, जिसकी छत में आवू पर के

(१) इस मन्दिर को गदाधर का मन्दिर कहते हैं और वैसा मानने का कारण यह है कि मन्दिर के पुराने गरुड़-स्तंभ पर कई यात्रियों ने अपने-अपने नाम खुदवाये हैं, जिनमें से एक में—“संवत् १६१६ वर्ष वैशाख (ख) मासे सुकल (शुक्ल) पक्षे ४ दिने महाराज श्रीगदाधरजी” लेख है। इससे निश्चित है कि उक्त संवत् में भी यह मन्दिर गदाधर का ही माना जाता था।

प्रसिद्ध विमलशाह के मंदिर जैसी सुन्दर कारीगरी है। कारीगरी की दृष्टि से इस मंदिर की समता करनेवाला दूसरा कोई मंदिर यहां नहीं है। इस मंदिर की प्राचीन मूर्ति का अब पता नहीं है। यहां के लुहारों ने इसमें गदाधर की नई मूर्ति बिठलाई है। इसके सभामंडप में एक गणपति की मूर्ति रखी हुई है, जिसके आसन पर चारों ओर अक्षरों में खुदा हुआ सात पंक्तियों का गुजरात के सोलंकी राजा सिद्धराज जयसिंह का लेख है, जिसका कितना एक अंश प्रतिदिन जल चढ़ाने से बिगड़ गया है, तो भी उससे मालूम होता है कि सोलंकी-वंशी राजा कर्ण के पुत्र जयसिंह ने, जो सिद्धराज कहलाता था, नरवर्मा (मालवे का परमार राजा) को जीतकर यहां गणपति का मंदिर बनवाया था^१। गणपति का वह मंदिर कौनसा था, यह जाना

(१) ॐ ॐ गणपतये नमः ॥

आसी.....चौलुक्यवंशोद्भवो
[राजा] कर्णानरेश्वरो हतरिपुर्व्विख्यातकीर्तिस्ततः ॥
तत्सूनुर्जयसिंहदेवनृपतिः श्रीसिद्धराजाभिधः
.....यस्य.....पः ॥

नरवर्म [कृतोन्नम] परमर्दि येन मर्दितः ।

सिद्धपेन गणनाथमंदिरं कारितं हि.....मनोहरं ।

मूल लेख से ।

उपर्युक्त लेख से अनुमान होता है कि गुजरात के सोलंकी राजा सिद्धराज जयसिंह ने मालवे के परमार राजा नरवर्मा पर चढ़ाई की थी, जिसको परास्त करने पर उस(जयसिंह)ने यहां गणपति का मंदिर बनवाया होगा। नरवर्मा सिद्धराज जयसिंह से लड़ता हुआ ही मृत्यु को प्राप्त हुआ, परंतु उसके पुत्र यशोवर्मा ने युद्ध बराबर जारी रखा और १२ वर्ष तक यह लड़ाई चली। अन्त में यशोवर्मा के कैद होने पर सोलंकीयों और परमारों के बीच का यह युद्ध समाप्त हुआ।

नहीं जाता, क्योंकि यहां कई टूटे-फूटे प्राचीन मंदिर हैं, परन्तु यह निश्चित है कि यह मूर्ति उसी गणपति के मंदिर से लाकर यहां रखी गई है।

तालाब की पाल के पास एक पहाड़ी पर देवी का प्राचीन मंदिर है, जिसका जीर्णोद्धार हो चुका है। मंदिर में नई मूर्ति बिठलाई गई है, जो बहुत भद्दी है। मंदिर के बाहर सिंदूर से भरी हुई महिषासुरमर्दिनी की तीन मूर्तियां पड़ी हैं। तालाब की पाल पर ब्राह्मणों तथा वहां के ठाकुरों की कई छत्रियां बनी हैं। वहां एक पुराना सुंदर कुंड भी है और उसके सामने सोमेश्वर महादेव का मंदिर है, जिसके सभा-मंडप में दो विष्णु की और एक वामन की मूर्ति पड़ी हुई है। उसके निकट एक दूसरा शिवालय है, जिसमें शिव की खडित त्रिमूर्ति और पार्वती की मूर्ति है। इन मंदिरों के पास नवग्रह की अनुमान पौने दो फुट ऊंची मूर्तियां दो टुकड़ों में बनी हुई पड़ी हैं और एक दूसरी शिला पर नवग्रहों की मूर्तियां अंकित हैं। पास में ब्रह्मा, विष्णु और पार्वती की मूर्तियां पड़ी हैं। कुंड के निकट एक छोटासा मंदिर है, जिसमें शेषनाग की खडित मूर्ति है। इन मंदिरों और इधर-उधर पड़ी हुई अनेक मूर्तियों के देखने से विश्वय होता है कि प्राचीन काल में यह एक बड़ा वैभवशाली नगर था। शिलालेखों में इसका नाम 'तलपाटक' मिलता है, जिसका अपभ्रंश तलवाड़ा है।

गढ़ी—बांसवाड़े से अनुमान २२ मील पश्चिम में चाप नदी के बायें किनारे पर यह गांव है। यह प्रथम थ्रेणी के चौहान सरदार का ठिकाना है,

(१) देशेऽस्य पत्तनवरं तलपाटकाख्यं

परयांगनाजनजितामरसुंदरीकं ॥

अस्ति प्रशस्तमुरमंदिरवैजयन्ता-

विस्तारुद्धादिननाथकरप्रचारं ॥ ४ ॥

अर्थण से मिले हुए परमार राजा विजयराज के समय के वि० सं० ११६९ वैशाख सुदि ३ (ई० सं० ११०६ ता० ५ अप्रेल) सोमवार के लेख से। यह शिलालेख पहले किसी अपभनाथ के जनमंदिर में लगा हुआ था और इस समय राजपूताना म्यूजियम् (अजमेर) में सुरक्षित है।

जिसकी उपाधि 'राव' है। प्राचीनता की दृष्टि से यह स्थान महत्व का नहीं है। यहां के बाग में सरदारों की कई छत्रियां हैं, जिनमें से वि० सं० १८६७ (ई० सं० १८११) से पूर्व की कोई नहीं है। यहां प्राइमरी स्कूल, अस्पताल और पुस्तकालय हैं। ठिकाने के अधीनस्थ गांवों में, सात प्रारंभिक पाठ-शालाएं हैं, जो ठिकाने के खर्च से चलती हैं।

पाणाहेड़ा—बांसवाड़े से १४ मील पश्चिम में यह गांव है। शिलालेखों में इसका नाम 'पांशुलाखेटक' लिखा मिलता है। यहां के नागोला तालाब की पाल पर मंडलीखर का शिवालय है, जिसको बागड़ के परमार राजा मंडलीक ने वि० सं० १११६ (ई० सं० १०५६) में बनवाया था। उसके बाहर के एक ताक में उक्त संवत् का शिलालेख लगा है, जिसके कई टुकड़े हो गये हैं और एक तिहाई अंश जाता रहा है। बचा हुआ अंश मालवा एवं बागड़ के परमारों के इतिहास के लिए बड़े महत्व का है। उसमें मालवे के परमार राजा मुंज, सिंधुराज, भोज और जयसिंह के अतिरिक्त बागड़ के परमार राजा धनिक से लगाकर मंडलीक तक की पूरी वंशावली और उनका कुछ कुछ वृत्तांत दिया है। भोज के उत्तराधिकारी (पुत्र) जयसिंह का वि० सं० १११२ (ई० सं० १०५५) का एक ताम्रपत्र ही पहले मिला था, परन्तु पाणाहेड़ा के लेख से यह भी ज्ञात हो गया कि वि० सं० १११६ (ई० सं० १०५६) तक वह (जयसिंह) विद्यमान था। उक्त मंदिर के बनवानेवाले मंडलीक के विषय में उक्त लेख में लिखा है कि उसने बड़े बलवान् सेनापति कन्ह को पकड़कर हाथी और घोड़ों सहित जयसिंह के सुपुर्द किया। कन्ह किस राजा का सेनापति था यह अब तक ज्ञात नहीं हुआ। बागड़ के परमारों का इस लेख से मिलनेवाला वृत्तांत आगे लिखा जायगा।

अर्थूणा—बांसवाड़े से अनुमान ३० मील दक्षिण-पश्चिम में अर्थूणा नामक प्राचीन कस्बा है। प्राचीन अर्थूणा नगर बागड़ के परमार राजाओं की

(१) भक्त्याकार्यत मंदिरं सररिपोस्तत्पांशुलाखेटके.....॥३८॥

पाणाहेड़ा के शिलालेख से।

राजधानी था। वर्तमान क़स्बा प्राचीन नगर के भग्नावशेष के पास नया बसा हुआ है। प्राचीन नगर के खंडहर और कई मंदिर अभी क़स्बे के बाहर विद्यमान हैं, जिनमें सबसे पुराना मंडलेश्वर (मंडनेश) का शिवालय है। इस मंदिर को यहां के परमार राजा मंडलीक (मंडनदेव) के पुत्र चामुंडराज ने अपने पिता की स्मृति में वि० सं० ११३६ फाल्गुन सुदि ७ (ई० सं० १०८० ता० ३१ जनवरी) शुक्रवार को बनवाया था। उसके साथ एक मठ भी था। मंदिर का मुख्य-द्वार तथा कोट गिर गये हैं। मंदिर के बाहर बहुत बड़ा नंदी है, जिसका सिर टूटा हुआ है। गुंबज के भीतर तथा निज-मंदिर के द्वार आदि पर बड़ी सुंदर कारीगरी का काम है। द्वार के दोनों तरफ, नीचे ब्रह्मा, ऊपर विष्णु और सबसे ऊपर शिव की मूर्ति है। द्वार पर गणेश और उसपर लकुलीश की मूर्ति है, जिससे अनुमान होता है कि यहां के मठाधीश लकुलीश^१ (पाशुपत) संप्रदाय के कनफड़े साधु होंगे। निजमंदिर में शिवलिंग, पार्वती तथा उमा-महेश्वर की मूर्तियां हैं। मंदिर के बाहरी ताकों में भैरव, तांडवनृत्य करते हुए शिव और चामुंडा की मूर्तियां हैं। यह शिव-पंचायतन मंदिर था, परंतु इसके चारों कोनों के छोटे-छोटे मंदिर

(१) लकुलीश या लकुटीश शिव के १८ अवतारों में से पहला माना जाता है। प्राचीन काल में पाशुपत (शैव) संप्रदायों में लकुलीश संप्रदाय बहुत प्रसिद्ध था और अब तक सारे राजपूताना, गुजरात, मालवा, बंगाल, दक्षिण आदि में लकुलीश की मूर्तियां पाई जाती हैं। लकुलीश की मूर्ति के सिर पर जैन-मूर्तियों के समान केश होते हैं, जिससे कोई-कोई उसको जैन-मूर्ति मान लेते हैं, परन्तु वह जैन नहीं, किन्तु शिव के अवतार की एक मूर्ति है। वह द्विभुज होती है, उसके बायें हाथ में लकुट (दंड) रहता है, जिससे लकुलीश तथा लकुटीश नाम पड़े और दाहिने हाथ में बांजोरा नामक फल होता है, जो शिव की त्रिमूर्तियों के मध्य के दो हाथों में से एक में पाया जाता है। वह मूर्ति पद्मासन बैठी हुई होती है। लकुलीश उध्वरेता (जिसका बायें कर्भो स्थलित न हुआ हो) माना जाता है, जिसका चिह्न मूर्ति पर स्पष्ट होता है। इस समय इस प्राचीन संप्रदाय का अनुयायी कोई नहीं रहा। परन्तु प्राचीन काल में इसके माननेवाले बहुत थे। इस संप्रदाय के साधु कनफड़े (नाथ) होते थे और वे ही शिव-मंदिरों के पुजारी या मठाधीश होते थे।

नष्ट हो गये हैं, जिनके चिह्न मात्र अब अवशिष्ट हैं। इस मंदिर के एक ताक में संवत् ११३६ फाल्गुन सुदि ७ (ई० स० १०८० ता० ३१ जनवरी) शुक्रवार की बड़ी प्रशस्ति लगी है, जो कविता और इतिहास की दृष्टि से बड़ी उपयोगी है। उसमें वहां के कितने ही परमार राजाओं की वंशपरंपरा और उनके कार्यों का उल्लेख है। इस मंदिर के सामने एक पहाड़ी पर भग्नप्राय चार शिव-मंदिर हैं, जिनके आसपास गणेश, शिव, ब्रह्मा, विष्णु, नवग्रह, तांडवनृत्य करते हुए शिव, चामुंडा, भैरव, दिक्पाल आदि की खंडित मूर्तियां पड़ी हैं।

उक्त पहाड़ी से दक्षिण में कुछ दूर गंगेला (गमेला) तालाब में होकर पश्चिम में जाने पर एक सुंदर खुदाईवाला दो मंजिला द्वार आता है, जो उधर के मंदिर-समूह का मुख्य द्वार होना चाहिये। वह मंदिर-समूह 'हनुमानगढ़ी' के नाम से प्रसिद्ध है। उस समूह में एक हनुमान का, एक वराह का, एक विष्णु का और तीन शिव के मंदिर हैं। विष्णु-मंदिर में बंसी बजाते हुए कृष्ण, ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा १८ भुजाओंवाली विष्णु की त्रिमूर्ति एवं पार्वती और पूतना आदि की मूर्तियां रखी हुई हैं। निकट ही पाषाण का बना हुआ एक कुंड है, जिसके सामने नीलकंठ का बड़ा मंदिर है। उसमें नवग्रह, चामुंडा और उमा-महेश्वर आदि की मूर्तियां रखी हुई हैं। निज-मंदिर में शिवलिंग के पास प्रह्वने के लिए नौ सीढ़ियां उतरनी पड़ती हैं। वहां शिवलिंग के अतिरिक्त पार्वती, गणपति और दो उमा-महेश्वर की मूर्तियां हैं। चातुर्मास में यह मंदिर जल से भर जाता है। हनुमान-गढ़ी के मंदिर-समूहों में यह सब से बड़ा मंदिर है और इसकी खुदाई भी बड़ी सुन्दर है। इसके निकट एक और शिवालय है, जो टूट गया है। उसके एक ताक में परमार राजा चामुंडराज के समय का आधा बिगड़ा हुआ वि० सं० ११३७ (ई० स० १०८०) का शिलालेख था, जो इस समय अजमेर के राजपूताना म्यूज़ियम में सुरक्षित है।

इसके निकट एक छोटे से मंदिर में हनुमान की एक विशाल मूर्ति है, जिसकी चरण-चौकी पर वि० सं० ११६५ (ई० स० ११०८) का परमार राजा

विजयराज के समय का ६ पंक्तियों का लेख खुदा हुआ है। उसपर बहुत सिंदूर लगा हुआ था, जिसको बड़े श्रम से हटाने पर उसके संवत् आदि का पता लगा। यह हनुमान की मूर्ति या तो किसी अन्य मंदिर से लाकर यहां खड़ी की गई हो अथवा मंदिर का द्वार किसी पुराने मंदिर से लाकर लगाया गया हो ऐसा प्रतीत होता है, क्योंकि इसके छवने के मध्य में लंकुलीश की मूर्ति है।

यहां पर कई जैन-मंदिर भी थे। अब जैनियों ने उनके पत्थर, द्वार आदि ले जाकर दूर-दूर के गांवों में नये मंदिर खड़े कर लिये हैं। वर्तमान अर्धूणा गांव का जैन-मंदिर भी पुराने जैन-मंदिरों के पत्थरों से बनाया गया है।

एक पहाड़ी पर के टूटे हुए जैन-मंदिर में परमार राजा चामुंडराज के समय के दो शिलालेख बिगड़ी हुई दशा में मिले हैं, जिनमें से एक वि० सं० ११५६ (ई० स० ११०२) का और दूसरा भी उसी समय के आस-पास का है, जिसमें संवत् के अंतिम दो अंक नष्ट हो गये हैं। ये दोनों भी इस समय राजपूताना म्यूजियम् (अजमेर) में सुरक्षित हैं। उक्त जैन-मंदिर की कई दिगम्बर जैन-मूर्तियां इधर-उधर पड़ी हैं। इनके अतिरिक्त यहां और भी कई टूटे हुए मंदिर विद्यमान हैं।

चींच (छाँछ)—वांसवाड़े से १० मील दक्षिण-पश्चिम में चींच नाम का पुराना गांव है। यहां विक्रम की बारहवीं शताब्दी के आस-पास का पाषाण का बना ब्रह्मा का मन्दिर है, जिसका सभा-मंडप विशाल है और स्तंभों की खुदाई सुन्दर है। उसमें करीब ६ फुट ऊंची सुन्दर कारीगरी के साथ बनी हुई ब्रह्मा की प्राचीन मूर्ति थी, जिसका थोड़ासा अंश टूट जाने से निजमन्दिर के बाहर रख दी गई है। चारों दिशाओं में इस मूर्ति के चार मुख हैं और यह वेदी पर स्थित थी। इसके खंडित होने के कारण आपा-ढादि वि० सं० १५६३ (चैत्रादि १५६४) अमांत वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि १ (ई० स० १५३७ ता० २६ अप्रैल) गुरुवार और अनुराधा नक्षत्र के दिन महारावल जगमाल के समय वैसी ही छोटी चतुर्मुख ब्रह्मा की मूर्ति उसी वेदी पर स्थापित की गई, जिसका बराबर पूजन होता है।

यह नई मूर्ति पुरानी मूर्ति के समान सुन्दर नहीं है। इस मन्दिर में लक्ष्मी-नारायण, शेषशायी, ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर की मूर्तियाँ हैं। एक स्तम्भ पर वि० सं० १५५२ (ई० सं० १४६५) का लेख है, जिससे ज्ञात होता है कि कल्ला के बेटे देवदत्त ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था।

मन्दिर के बाहर के चौक में वि० सं० १५७७ (ई० सं० १५२०) का एक लेख खुदा है, जिसमें जगमाल को महारावल लिखा है। मन्दिर के बाहर संगमरमर के छः टुकड़ों पर नवग्रहों की मूर्तियाँ बड़ी सुन्दरता से खुदी हुई पड़ी हैं, जिनके ऊपर का भाग तोड़ दिया गया है। मन्दिर से सटा हुआ एक तालाब है, जिसपर एक घाट बना हुआ है, जो ब्रह्मा का घाट कहलाता है।

गांध के निकट आंबलिया तालाब की पाल पर देवी छींछा का प्राचीन मन्दिर है, जिसका जीर्णोद्धार हो चुका है। मन्दिर के निकट एक पत्थर खड़ा है, जिसपर महारावल समरसिंह के समय का आषाढ़ादि वि० सं० १६८४ (चैत्रादि १६८५) अमांत वैशाख (पूर्णिमांत जेष्ठ) वदि १० (ई० सं० १६२८ ता० १८ मई) रविवार का लेख है। उसका आशय यह है कि रायराया महारावल उग्रसेन के पोते और उदयभान के बेटे समरसी के राज्य-समय सोलंकी नानक के बेटे देवीदास आदि ने भगवती छींछा का मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर के निकट सूर्य का एक प्राचीन मन्दिर है, जो खंडित हो गया है और सूर्य का एक चक्ररथ उसके बाहर पड़ा हुआ है।

गांध में वाराही माता का प्राचीन मन्दिर था, जो टूट गया है। दूसरा मन्दिर लक्ष्मीनारायण का है, जो वि० सं० की सोलहवीं शताब्दी के आस-पास का बना हुआ प्रतीत होता है। इसके विषय में यह प्रसिद्धि है कि यह मन्दिर चौहानों ने बनवाया था।

बांसवाड़ा के एक ठोरे के यहां से मिले हुए मालवे के परमार राजा भोज के समय के वि० सं० १०७६ माघ सुदि ५ (ई० सं० १०२० ता० ३ जनवरी) के दान-पत्र में लिखा है—‘हमने कोंकण विजय के उत्सव पर बलिष्ठगोत्री माध्यंदिनी शाखावाले ब्राह्मण चामन के बेटे भायल को,

जिसके पूर्वज चौंच गांव से आये थे, स्थली-मण्डल^१ के व्याघ्रदोरक^२ ज़िले के घटपट्टक गांव में १०० निवर्तन (बीघा) भूमि दान की।^३ इससे पाया जाता है कि यह गांव उक्त संवत् से भी पूर्व विद्यमान था।

नौगामां—बांसवाड़े से अनुमान १३ मील दक्षिण-पश्चिम में यह पुराना गांव है। शिलालेखों में इसका नाम नूतनपुर मिलता है। यहां पर शांतिनाथ का दिगंबर जैन-मंदिर है, जिसको वागड़ (डूंगरपुर) के स्वामी महारावल उदयसिंह के समय मूलसंघ, सरस्वती गच्छ और बलात्कारण के श्रीकुंदकुंदाचार्य के परंपरागत आचार्य विजयकीर्ति गुरु के उपदेश से हुंभड़ जाति के खैरजगोत्री दोसी चांपा के वंशजों ने बनवाकर वि० सं० १५७१ कार्तिक सुदि २ (ई० स० १५१४ ता० १६ अक्टोबर) के दिन प्रतिष्ठा करवाई।

वागीदौरा—यह भी एक पुराना स्थान है और बांसवाड़े से दक्षिण-पश्चिम में लगभग १६ मील दूर है। मालवे के परमार राजा भोजदेव के वि० सं० १०७६ (ई० स० १०२०) के दानपत्र में तथा अर्थूणा के मंडलेश्वर के मंदिर की वि० सं० ११३६ (ई० स० १०८०) की प्रशस्ति में भी इसका नाम 'व्याघ्रदोरक' मिलता है। इससे पाया जाता है कि वि० सं० की ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्व भी यह गांव विद्यमान था और एक ज़िले का मुख्य स्थान माना जाता था।

(१) 'स्थली' वागड़ के एक विभाग का प्राचीन नाम होना चाहिये। यह नाम वागड़ के परमार राजा चासुंडराज के समय के वि० सं० ११२७ चैत्र वदि २ (ई० स० ११०१ ता० १७ फरवरी) सोमवार के अत्रकाशित लेख में भी मिलता है—

स्थलीजनपदे.....पृथ्वीपतिवरानन.....॥ ३४ ॥

(२) स्थलीमंडले घा(व्या)घ्रदोरभोगांतःपातिवटपट्टके

ए. इं. जि. ११, पृ० १८२।

अर्द्धाष्टमशते देशे व्याघ्रदोरकसंभवे ।.....[७७] ।

अर्थूणा के मंडलेश्वर के मंदिर की वि० सं० ११३६ की प्रशस्ति।

कलिंजरा—कलिंजरा गांव बांसवाड़े से १६ मील दक्षिण-पश्चिम में हारन नदी के दाहिने किनारे पर बसा है। यह पहले व्यापार का केन्द्र तथा दक्षिणी तटस्थलों का मुख्य स्थान था। यहां पर एक बड़ा शिखरबंद पूर्वाभिमुख जैन-मंदिर है। उसके दोनों पार्श्व में और पीछे एक-एक शिखरबंद मंदिर बना है तथा चौतरफ़ देवकुलिकाएं हैं। यह मंदिर दिगंबर जैनों का है और ऋषभदेव के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें छोटी-बड़ी कई मूर्तियां हैं। एक मंदिर में पार्श्वनाथ की खड़ी मूर्ति है, जिसके आसन पर वि० सं० १५७८ फाल्गुन सुदि ५ (ई० स० १५२२ ता० १ फ़रवरी) का लेख है। पार्श्वनाथ की दूसरी बैठी हुई मूर्ति पर वि० सं० १६६० अमांत ध्रावण वदि १० (ई० स० १६०३ ता० २१ अगस्त) का लेख है। निज-मंदिर में मुख्य प्रतिमा आदिनाथ की है, जो पीछे से वि० सं० १८६१ वैशाख सुदि ३ (ई० स० १८०४ ता० १२ मई) को स्थापित की गई है। उसका परिकर पुराना है, जिसपर वि० सं० १६१७ अमांत माघ वदि २ (ई० स० १५६१ ता० २ फ़रवरी) का लेख है। नीचे का आसन भी पुराना है, जिसपर वि० सं० १५७८ फाल्गुन सुदि ५ (ई० स० १५२२ ता० १ फ़रवरी) का लेख है। इसके पास एक और मूर्ति है, जो आपाढ़ादि वि० सं० १६५२ (चैत्रादि १६५३) वैशाख सुदि ५ (ई० स० १५९६ ता० २२ अप्रैल) की है। निज-मंदिर के सामने के मंडप में कई पाषाण व पीतल की छोटी-छोटी मूर्तियां हैं, जिनमें सबसे पुरानी आपाढ़ादि वि० सं० १२३५ (चैत्रादि १२३६) वैशाख सुदि ८ (ई० स० ११७६ ता० १६ अप्रैल) की और दूसरी वि० सं० १४४४ वैशाख सुदि ५ (ई० स० १३८८ ता० ११ अप्रैल) की है। इस मंदिर का समय-समय पर जीर्णोद्धार होता रहा है। इसमें पत्थर का बना पुरुष का एक बहुत बड़ा सिर रक्खा हुआ है, जिसमें दाढ़ी भी बनी है। इसके बाहर वि० सं० १७५७, १७७५ और १७९२ (ई० स० १७००, १७१८ और १७३५) के शिलालेख दीवार के पास गड़े हुए हैं, परन्तु वे इतिहास के लिए उपयोगी नहीं हैं। कलकत्ते का बिशप (सबसे बड़ा पादरी) हेबर राजपूताने की यात्रा करता हुआ ई० स० १८२४ (वि० सं० १८८१) के आस-पास कलिं-

जरा पहुंचा था। उसने उक्त मंदिर का तथा उक्त बड़े सिर का उल्लेख किया है और देवकुलिकाओं के द्वार की शाखाओं में खुदी हुई पुरुषों की छोटी-छोटी मूर्तियों के हाथ में डंडे तथा सिर पर लम्बी गोल टोपी देखकर लिखा है कि पेसी टोपियां हिन्दुस्तान में अब पहनने में नहीं आती और वे ईरान के पर्सिपोलिस (Persepolis) नगर की मूर्तियों की टोपियों से मिलती हुई हैं। हैबर ने इस मंदिर की कारीगरी आदि की विशेष प्रशंसा की है, परन्तु वास्तव में यह एक साधारण जैन-मंदिर है, जो न तो अधिक पुराना है और न सुन्दर ही। जैन-मंदिर के पास एक विष्णु मंदिर था, जो अब बिल्कुल नष्ट हो गया है। उसके बाहर एक बिगड़ा हुआ शिलालेख वि० सं० १४४३ (ई० स० १३८६) का है। कृष्णार्या तालाब की पाल पर एक प्राचीन शिव-मंदिर है, जिसका जीर्णोद्धार बांसवाड़े के नागर मणिशंकर ने करवाया था। वर्तमान महारावलजी ने कलिजरे का पट्टा अपने छोटे राजकुमार नृपतिसिंह को जागीर में दिया है।

कुशलगढ़—बांसवाड़े से अनुमान ३५ मील दक्षिण में कुशलगढ़ नाम का एक क़स्बा है, जो उक्त ठिकाने का मुख्य स्थान है। यह इस समय बांसवाड़े से स्वतंत्र और दक्षिणी राजपूताने के पोलिटिकल एजेंट के अधीन है, अतएव इसका वृत्तांत अलग लिखा जायगा।

दूसरा अध्याय

बांसवाड़ा के प्राचीन राजवंश

(गुहिलवंश के अधिकार से पूर्व)

गुहिलवंशियों के पूर्व बांसवाड़े पर किस-किस राजवंश का अधिकार रहा, यह निश्चित रूप से नहीं जाना जाता, क्योंकि इस राज्य से अधिक प्राचीन शिलालेखादि नहीं मिले हैं। अब तक के शोध से इतना ही ज्ञात होता है कि पहले यहां क्षत्रपवंशियों एवं परमारों का राज्य रहा था और परमारों को गुजरात के सोलंकीयों ने हराकर यहां अपना अधिकार करलिया, पर यहां से परमारों का अस्तित्व न मिटा और तेरहवीं शताब्दी तक वे सामंत रूप से यहां टिके रहे, फिर उन(परमारों)को कमज़ोर देख गुहिलवंशी सामंतसिंह ने मेवाड़ से दक्षिण की तरफ़ जाकर बागड़ में गुहिलवंश के राज्य की स्थापना की।

क्षत्रप

क्षत्रप, जाति के शक थे। ईरान और अफ़ग़ानिस्तान के बीच के शकस्तान (सीथिया) प्रदेश से उनका भारत में आना माना जाता है। शिलालेखों और सिक्कों के अतिरिक्त 'क्षत्रप' शब्द संस्कृत साहित्य में कहीं नहीं मिलता। यह प्राचीन ईरानी भाषा के 'क्षत्रपावन' शब्द से बना है, जिसका अर्थ देश या ज़िले का शासक होता था। राजपूताना और उसके निकटवर्ती प्रदेशों पर क्षत्रपों की दो शाखाओं के राज्य रहे, जिनमें से एक ने मथुरा के आस-पास के प्रदेश और दूसरी शाखा ने राजपूताना, मालवा, गुजरात, काठियावाड़, कच्छ तथा दक्षिण के कितनेक अंश पर शासन

(१) जे० एम० कैम्बेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि प्रेसिडेन्सी, जिल्द १, भाग १, पृ० २१, टिप्पण ६।

किया। विद्वानों ने पिछली शाखा का 'पश्चिमी क्षत्रप' नाम से परिचय दिया है। इसी शाखा के क्षत्रपों का राज्य बांसवाड़े पर होना निश्चित है, क्योंकि इस राज्य के सरवाणिया नामक गांव से दिसम्बर ई० सन् १६११ (वि० सं० १६६८) में क्षत्रपवंशियों के चांदी के २३६३ सिक्के एक पात्र में गड़े हुए मिले, जो हमारे पास पढ़ने के लिए भेजे गये। उनसे निश्चित है कि इस प्रदेश पर इस वंश का राज्य रहा था। क्षत्रपों के शिलालेखों तथा सिक्कों में 'महाराजाधिराज,' 'परमेश्वर,' 'परमभट्टारक' आदि उपाधियां नहीं मिलतीं, किन्तु उनके स्थान पर राजा को 'राजा' और 'महाक्षत्रप' तथा राजकुमारों को, जो ज़िलों पर शासन करते थे, 'राजा' और 'क्षत्रप' ही लिखा हुआ मिलता है। इनमें एक अनूठी रीति यह थी कि राजा के जितने पुत्र होते वे सब अपने पिता के पीछे क्रमशः राज्य के स्वामी बनते और उन सब के पीछे ज्येष्ठ पुत्र का बेटा यदि जीवित होता तो राज्य पाता। राजा और उसके पुत्र आदि (ज़िलों के शासक) अपने अपने नाम के सिक्के बनवाते थे, जो बहुत छोटे होते और जिनपर बहुधा शक संवत् रहता था। ये सिक्के द्रम्म

(१) राजपूताना म्यूजियम् (अजमेर) की ई० सं० १६१३ की रिपोर्ट; पृ० ३-४।

(२) उदाहरण के लिए एक महाक्षत्रप और एक क्षत्रप के सिक्कों पर के लेख की नकल नीचे दी जाती है—

‘राज्ञो महाक्षत्रपस दामसेनपुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस विजयसेनस’।

ई० जे० रैप्सन; कैटेलाँग ऑव् दि कॉइन्स ऑव् आंध्र डिनेस्टी, दि वेस्टर्न क्षत्रप्स, दि त्रैक्यूटक डिनेस्टी एण्ड दि बोधि डिनेस्टी, पृ० १३०-३१।

(३) ‘राज्ञो मह(हा)क्षत्रपस दामसेनपुत्रस राज्ञः क्षत्रपस विजयसेनस’।

ई० जे० रैप्सन; कैटेलाँग ऑव् दि कॉइन्स ऑव् आंध्र डिनेस्टी, दि वेस्टर्न क्षत्रप्स, दि त्रैक्यूटक डिनेस्टी एण्ड दि बोधि डिनेस्टी, पृ० १२६-३०।

(४) द्रम्म—चार आने के मूल्य का चांदी का छोटा सिक्का था और वि० सं० की बारहवीं शताब्दी के आस पास तक रुपयों के साथ यह भी चलता था, ऐसा वि० सं० ११३६ की अय्यूणा के मंडलेश्वर महादेव के मंदिर की बड़ी प्रशस्ति से ज्ञात होता है—

कहलाते थे, जिनपर बहुधा एक नरफ राजा का सिर तथा शक संवत् का अंक एवं दूसरी ओर विरुद्ध सहित अपने तथा अपने पिता के नामवाला लेख तथा मध्य में सूर्य, चन्द्र, मेरु और गंगा नदी सूचक चिह्न रहते थे।

इन क्षत्रपों का संक्षिप्त वृत्तांत, वंशवृत्त तथा महाक्षत्रपों और क्षत्रपों की समय सहित तालिका हमने राजपूताने के इतिहास की पहली जिल्द (पृ० ६६-११० प्रथम आवृत्ति) में दी है। सरवाणिया से मिले हुए उपर्युक्त सिक्रे शक सं० १०३ से २७५ (वि० सं० २३८ से ४१०=ई० सं० १८१ से ३५३) तक के निम्नलिखित महाक्षत्रपों और क्षत्रपों के हैं—

१—महाक्षत्रप रुद्रदामा के पुत्र महाक्षत्रप रुद्रसिंह (प्रथम) के—

चार सिक्रे, शक सं० १०३, १०५, १० [×^१] और ११४ (वि० सं० २३८, २४०, २४६=ई० सं० १८१, १८३ और १६२) के।

२—महाक्षत्रप ईश्वरदत्त के—

राज्यवर्ष प्रथम के ६ सिक्रे।

३—महाक्षत्रप रुद्रसिंह (प्रथम) के पुत्र क्षत्रप रुद्रसेन (प्रथम) का—

एक सिक्रे शक सं० १२[१] (वि० सं० २५६=ई० सं० १६६) का।

४—महाक्षत्रप रुद्रसिंह (प्रथम) के पुत्र महाक्षत्रप रुद्रसेन प्रथम के—

११ सिक्रे, जिनमें से एक बिना संवत् का और १० शक सं० १३५, १३८, १४२, १[××] और १४[×] (वि० सं० २७०, २७३, २७७=ई० सं० २१३, २१६ और २२०) के।

दापितो रूपकः सार्द्धः प्रतिकर्पटकोटिकाम् ॥ ॥ ७२ ॥

तत्थोच्छपनके तेन वणिजां प्रतिमंदिरम् ॥

चैत्र्यां द्रम्मः पवित्र्यां च द्रम्म एकः प्रदापितः ॥ ७३ ॥

मूल लेख की छाप से।

(१) सिक्रों पर जो अङ्क अस्पष्ट हैं अथवा नहीं उठे उनके लिए [×] यह चिह्न लगाया गया है।

५—महाक्षत्रप रुद्रसिंह (प्रथम) के पुत्र महाक्षत्रप दामसेन के—

१३ सिक्के, शक सं० १५०, १५२, १५५, १५७ और १५[×]
(वि० सं० २८५, २८७, २९० और २९८=ई० स० २२८, २३०, २३३
और २३५) के ।

६—महाक्षत्रप रुद्रसेन (प्रथम) के पुत्र क्षत्रप दामजदश्री के—

२ सिक्के, शक सं० १५५ और १५[×] (वि० सं० २९०=ई०
स० २३३) के ।

७—महाक्षत्रप दामसेन के पुत्र क्षत्रप वीरदामा के—

१७ सिक्के, शक सं० १५८=६०, १[××] और १५[×] (वि०
सं० २९३-९५=ई० स० २३६-३८) के ।

८—महाक्षत्रप दामसेन के पुत्र क्षत्रप यशोदामा के—

२ सिक्के शक सं० १[××] के ।

९—महाक्षत्रप दामसेन के पुत्र महाक्षत्रप यशोदामा के—

४ सिक्के, शक सं० १६[०] और १६१ (वि० सं० २९५-९६=
ई० स० २३८-३९) के ।

१०—महाक्षत्रप दामसेन के पुत्र क्षत्रप विजयसेन के—

८ सिक्के, शक सं० १६० (वि० सं० २९५=ई० स० २३८) के ।

११—महाक्षत्रप दामसेन के पुत्र महाक्षत्रप विजयसेन के—

१०५ सिक्के, जिनमें से ८ सिक्के बिना संवत् के, १२ सिक्के
अस्पष्ट संवत् के और शेष ८५ सिक्कों पर शक सं० १६१-६२, १६४-
७२, १६[×] और १७[×] (वि० सं० २९६-९७, २९९-३०७=ई०
स० २३९-४०, २४२-५०) के ।

१२—महाक्षत्रप दामसेन के पुत्र महाक्षत्रप दामजदश्री (दूसरा) के—

६५ सिक्के, जिनमें से १६ बिना संवत्वाले और शेष ४९ सिक्के
शक सं० १७२, १७४-७६ और १७[×] (वि० सं० ३०७, ३०९-
११=ई० स० २५०, २५२-५४) के ।

१३—क्षत्रप वीरदामा के पुत्र महाक्षत्रप रुद्रसेन (दूसरा) के—

३८३ सिक्रे, जिनमें से १६३ बिना संवत्वाले और २२० सिक्रे शक संवत् १७८-६१, १६४, १६६, १[xx], १७[x], १८[x], और १९[x] (वि० सं० ३१३-३२६, ३२६ और ३३१=ई० सं० २५६-६६, २७२ और २७४) के ।

१४—महाक्षत्रप रुद्रसेन (द्वितीय) के पुत्र क्षत्रप विश्वसिंह के—

१४७ सिक्रे, जिनमें से ८२ बिना संवत् के, १४ अस्पष्ट संवत्वाले और शेष ५१ शक संवत् १ [xx], १६ [x], १६८-२०० और २ [xx] (वि० सं० ३३३-३५=ई० सं० २७६-७८) के ।

१५—महाक्षत्रप रुद्रसेन (द्वितीय) के पुत्र महाक्षत्रप विश्वसिंह के—

२७ सिक्रे, जिनमें से २५ बिना संवत्वाले और २ अस्पष्ट संवत् के ।

१६—महाक्षत्रप रुद्रसेन (द्वितीय) के पुत्र क्षत्रप भर्तृदामा के—

१४७ सिक्रे, जिनमें से ६४ बिना संवत् के, ७ अस्पष्ट संवत्वाले और शेष ४६ शक सं० २००, २०[३], २०४ और २[xx] (वि० सं० ३३५, ३३[८] और ३३६=ई० सं० २७८, २८[१] और २८२ के ।

१७—महाक्षत्रप रुद्रसेन (द्वितीय) के पुत्र महाक्षत्रप भर्तृदामा के—

३२७ सिक्रे, जिनमें से १४४ बिना संवत् के, ४६ अस्पष्ट संवत्वाले और १३७ शक सं० २०६-१५, २[xx] और २१[x] (वि० सं० ३४१-५०=ई० सं० २८४-६३) के ।

भर्तृदामा के १३० सिक्रे ऐसे थे, जिनपर लेख अस्पष्ट थे और उनमें से अधिकतर बिना संवत् के या अस्पष्ट संवत्वाले थे, अतएव यह निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता कि वे उसके क्षत्रपकाल के थे या महाक्षत्रपकाल के ।

१८—महाक्षत्रप भर्तृदामा के पुत्र क्षत्रप विश्वसेन के—

३८५ सिक्रे, जिनमें से १२५ बिना संवत्वाले, ६१ अस्पष्ट संवत्वाले और १९९ शक सं० २१५-१८, २२०-२६, २[xx], २१ [x] और २२[x] (वि० सं० ३५०-५३, ३५५-६१=ई० सं० २६३-६६, २६८-३०४) के ।

१६—स्वामिजीवदामा के पुत्र क्षत्रप रुद्रसिंह (द्वितीय) के—

१६० सिक्के, जिनमें से ६० बिना संवत् के १०, अस्पष्ट संवत्-
वाले और ६० शक सं० २२६-३६, २[××], २२[×] और २३[×]
(वि० सं० ३६१-३७१=ई० सं० ३०४-३१४) के ।

२०—क्षत्रप रुद्रसिंह (द्वितीय) के पुत्र क्षत्रप यशोदामा (द्वितीय) के—

१५७ सिक्के, जिनमें से २१ बिना संवत् के, १८ अस्पष्ट संवत्-
वाले और ११८ शक संवत् २३६-४५, २४७-४८, २५४, २[××],
२३[×] और २४ [×] (वि० सं० ३७४-८०, ६८२-८३, ३८६=ई०
सं० ३१७-२३, ३२५-२६ और ३३२) के ।

२१—महाक्षत्रप स्वामिरुद्रदामा के पुत्र महाक्षत्रप स्वामिरुद्रसेन (तृतीय)
के—

४३ सिक्के, जिनमें से ८ बिना संवत्वाले, ११ अस्पष्ट संवत्-
वाले और २४ शक सं० २७०, २७२-७३, २७५, २[××] और २७
[×] (वि० सं० ४०५, ४०७-८, ४१०=ई० सं० ३४८, ३५०-५१, ३५३) के ।

१३४ सिक्के किसी रुद्रसेन के किसी पुत्र (नाम नहीं) के । १५
सिक्के दामसेन के किसी पुत्र के ।

४५ सिक्के लेख अस्पष्ट होने से यह नहीं जाना जा सकता है कि वे
किसके थे ।

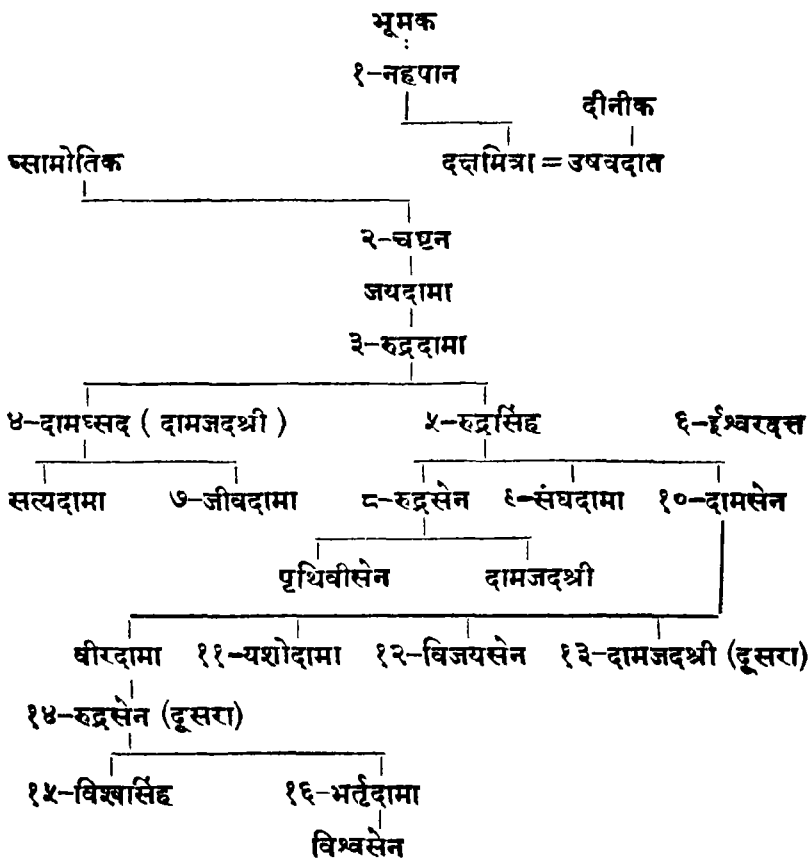
५५ सिक्के ऐसे थे, जिनपर कोई लेख नहीं, किन्तु दोनों तरफ चहरे की
छाप थी । राजपूताने में क्षत्रपवंशी राजाओं के सिक्कों का ऐसा बड़ा संग्रह
अन्यत्र कहीं नहीं मिला । केवल कुछ सिक्के पुष्कर, आहाड़, नगरी
(मध्यामिका) आदि से मिले हैं । उक्त संग्रह से यह निश्चित है कि बांस-
वाड़ा राज्य पर इन क्षत्रपों का राज्य अनुमान २०० वर्ष तक रहा था ।

इन क्षत्रपों में से महाक्षत्रप रुद्रसेन (तीसरे) के पश्चात् चार और
महाक्षत्रपों ने राज्य किया था, परन्तु उनके सिक्के उक्त संग्रह में नहीं थे ।
अंतिम राजा स्वामिरुद्रसिंह से गुप्त वंश के महाप्रतापी राजा चंद्रगुप्त
(दूसरा) ने, जिसका विरुद्ध 'विक्रमादित्य' था, शक सं० ३१० (वि० सं०

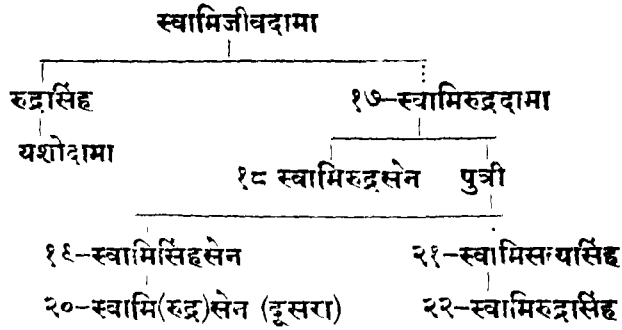
४४५=ई० स० ३८८) के आस पास क्षत्रप राज्य को अपने राज्य में मिलाकर उक्त राज्य की समाप्ति कर दी, जिससे राजपूताने पर से उनका अधिकार उठ गया।

इन पश्चिमी क्षत्रपों का पूरा वंश-वृक्ष नीचे दिया जाता है, जिससे इन सिकों का संबंध ज्ञात होगा—

क्षत्रपों का वंशवृक्ष



(१) इस वंशवृक्ष में जो अंक दिये हैं वे महाक्षत्रपों के और बिना अंकवाले नाम क्षत्रपों के सूचक हैं।



क्षत्रपों के पीछे यहां गुप्तों, हर्षों, कन्नौज के बैसवंशी राजा हर्ष और कन्नौज के रघुवंशी प्रतिहारों (पड़िहारों) का राज्य रहना संभव है, परन्तु उनका कोई शिलालेख, ताम्रपत्र या सिक्का अब तक यहां नहीं मिला।

परमार

वागड़ के परमार मालवे के परमारवंशी राजा वाक्पतिराज के दूसरे पुत्र डंबरसिंह^१ के वंशज थे। उनके अधिकार में वागड़ तथा छुप्पन का प्रदेश था। संभव है कि डंबरसिंह को वागड़ का इलाका ज़ागीर में मिला हो। उसके पीछे धनिक हुआ, जिसने महाकाल के मन्दिर (उज्जैन) के समीप धनेश्वर का देवालय बनवाया^२। धनिक के पीछे उसका भतीजा चच्च^३ और

(१) मेरा; राजपूताने का इतिहास; जि० १, प्रथम संस्करण, पृ० २०६।

(२) अत्रार्शी(सी)त्परमारवंशविततौ लब्धा(ब्धा)न्वयः पार्थिवो नाम्ना श्रीधनिको धनेस्व(श्व)र इव त्यागैककल्पद्रुमः ॥२६॥
श्रीमहाकालदेवस्य निकटे हिमपांडुरं।

श्रीधनेश्वर इत्युच्चैः कीर्त्तनं यस्य राजते ॥२७॥

वि० सं० १११६ का पाणाहेड़ा का शिलालेख।

(३) चच्चनामाभवत्तस्माद्भ्रातृसूनुर्महानृपः...॥२८॥

पाणाहेड़ा का शिलालेख।

फिर कंकदेव' हुआ। मालवे के परमार राजा श्रीहर्ष (सीयक दूसरा) ने कर्णाटक के राठोड़ राजा खोटिकदेव पर चढ़ाई की, उस समय कंकदेव उस(श्रीहर्ष)के साथ था। नर्मदा के किनारे खलिघट्ट नामक स्थानमें युद्ध हुआ, जिसमें कंकदेव हाथी पर सवार होकर लड़ता हुआ मारा गया। इस लड़ाई में श्रीहर्ष की विजय हुई। उसने आगे बढ़कर निजाम-राज्यान्तर्गत मान्य-खेट (मालखेड़) नगर को, जो राठोड़ों की राजधानी थी, वि० सं० १०२६ (ई० स० ६७२) में लूटा^२। कंकदेव के चंडण और उस(चंडण)के सत्य-राज नामक पुत्र हुआ, जिसका वैभव सुप्रसिद्ध राजा भोज ने बढ़ाया। यह गुजरातवालों से लड़ा था। उसकी स्त्री राजश्री चौहान-वंश की थी^३। सत्यराज के लिंबराज और मंडलीक नामक दो पुत्र थे, जिनमें से ज्येष्ठ

(१) तस्यान्वये करिकरोद्धुरवा(वा)हुदण्डः ।

श्रीकंकदेव इति लब्ध(व्य)जयो व(व)भूव...॥१७॥

आरूढो गजपृष्ठमद्भुतस(श)रा सारै रणो सर्वतः

कर्णाटाधिपतेर्व(र्व)लं विदलयंस्तन्नर्मदायास्तटे ।

श्रीश्रीहर्षनृपस्य मालवपतेः कृत्वा तथारिक्त्यं

यः स्वर्गी सुभटो ययौ सुरवधूनेत्रोत्पलैरर्चितः...१६॥

वि० सं० ११३६ की अर्थुणा की प्रशस्ति से ।

यः श्रीखोटिकदेवदत्तसमरः श्रीसीयकार्थे कृती ।

रेवायाः खलिघट्टनामनि तटे युध्वा(दध्वा) प्रतस्थे दिवम्॥२६॥

पाणाहेड़ा के लेख की छाप से ।

(२) विक्रमकालस गण अउणत्तीसुत्तरे सहस्रमिम (१०२६)।

मालवनरिंदवाडीए लूडिए मन्नखेडमिम ॥

धनपाल; पाइअलच्छीनाममाला (भावनगर संस्करण), पृ० ४५ ।

(३)कीर्त्तिपु चाहमानमहतां वंशोद्धवा लभ्यते ।

राजश्रीः सहजेव येन सहजश्रीमन्मतिः स्वामिना...॥३२॥

पाणाहेड़ा के शिलालेख की छाप से ।

(लिंबराज) उसका उत्तराधिकारी हुआ । उसके पीछे उसका छोटा भाई मंडलीक, जिसे मंडनदेव भी कहते थे, बागड़ का स्वामी हुआ । वह मालवे के परमार राजा भोज और उसके उत्तराधिकारी (पुत्र) जयसिंह (प्रथम) का सामंत रहा । उसने प्रबल सेनापति कन्ह को पकड़कर घोड़ों और हाथियों सहित जयसिंह के सुपुर्द किया और वि० सं० १११६ (ई० सं० १०५६) में पाणाहेड़ा गांव (बांसवाड़ा राज्य) में अपने नाम से मंडलेश्वर नामक शिव-मंदिर बनवाया^१ । उसका पुत्र चामुंडराज था, जिसने वि० सं० ११३६ (ई० सं० १०७६) में अर्थूणा नगर (बांसवाड़ा राज्य) में अपने पिता मंडलीक के निमित्त मंडनेश (मंडलेश्वर) का विशाल शिवालय निर्माण करवाया^२ । उसने सिंधुराज को नष्ट किया । यह सिंधुराज कहां का था, इसका पता नहीं चलता । उसके समय के चार शिलालेख, वि० सं० ११३६ फाल्गुन सुदि ७ (ई० सं० १०८० ता० ३१ जनवरी) शुक्रवार, वि० सं० ११३७ माघ सुदि ११ (ई० सं० १०८१ ता० २४ जनवरी) रविवार, (आषाढादि) वि० सं० ११५७ (चैत्रादि ११५८) अमांत चैत्र (पूर्णिमांत

(१) श्रीमंडलीक इत्यस्य लघुभ्राताभवे(व)न्नृपः ॥३४[॥]

येनादाय रणे कन्हं दंडाधीसं(शं) महाव(ब)लं ।

अर्पितं जयसिंहाय सा[श्रं] गजसमन्विवं(तं) ॥३६॥

भक्त्याकार्यत मंदिरं स्मररिपोस्तत्पांशुलाखेटके ।...॥३८॥

पाणाहेड़ा के शिलालेख की कृप से ।

(२) जातो यस्य रविद्युतेर्गुणनिधि-

श्रामुंडराजः सुतः ॥ [४६]

नतरिपुधृतचूडालग्ननीलेद्धसो(शो)चि-

र्मधुकरनिकरंव(ब)च्छन्नपादांवु(बु)जेन ।

रुचिरमिदमुदारं कारितं धर्मधाम्ना

त्रिदशगृहमिह श्रीमंडलेशस्य तेन । [६६] ।

अर्थूणा के मंडलेश्वर के मंदिर के शिलालेख की कृप से ।

वैशाख) वदि २ (ई० स० ११०१ ता० १८ मार्च) सोमवार और वि० सं० ११५६ (ई० स० ११०२) के मिले हैं । उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र विजयरज हुआ, जिसका सांघि-विग्रहिक, वालभ जाति के कायस्थ राज-पाल का पुत्र बामन था । उसके समय के दो शिलालेख वि० सं० ११६५ फाल्गुन सुदि २ (ई० स० ११०६ ता० ४ फरवरी) गुरुवार और वि० सं० ११६६ वैशाख सुदि ३ (ई० स० ११०६ ता० ५ अप्रैल) सोमवार के मिले हैं । उसके पीछे के किसी राजा का शिलालेख न मिलने से उसके उत्तराधिका-रियों के नामों का पता नहीं चलता ।

मालवे के परमार और गुजरात के सोलंकियों के बीच बहुत दिनों से वैर चला आता था, इसलिए मालवे के परमार राजा नरवर्मा ने सिद्ध-राज जयसिंह के यात्रा में होने के कारण अवसर पाकर गुजरात पर चढ़ाई कर दी । इसका बदला लेने के लिए सिद्धराज जयसिंह ने यात्रा से लौटकर मालवे पर चढ़ाई की । उस समय वह वागड़ में होकर आगे बढ़ा, जहां उसने अधिकार कर लिया । फिर उसका नरवर्मा से युद्ध हुआ । यह युद्ध १२ वर्ष तक चलता रहा । इस बीच नरवर्मा वि० सं० ११६० (ई० स० ११३३) में मर गया । तब उस (नरवर्मा) के पुत्र यशोवर्मा ने युद्ध निरं-तर जारी रक्खा, परन्तु अन्त में वह कैद हुआ और मालवे पर सोलंकियों का अधिकार हो गया । नरवर्मा पर विजय प्राप्त होने की प्रसन्नता में सिद्ध-राज जयसिंह ने बांसवाड़ा राज्य के तलवाड़ा गांव में एक मन्दिर बनवाकर उसमें गणपति की मूर्ति स्थापित की, जिसके आसन पर पांच पंक्तियों का लेख खुदा हुआ है । उससे अनुमान होता है कि मालवे की विजय के साथ ही वागड़ पर सोलंकियों का अधिकार हो गया, जिससे परमार सोलंकियों के सामंत हो गये । उनको मेवाड़ के गुहिलवंशी सामंतसिंह ने निकाल कर वागड़ पर वि० सं० १२३२ (ई० स० ११७५) के लगभग अपना अधिकार जमा लिया, जिसका वर्णन यथाप्रसङ्ग उदयपुर राज्य तथा डूंगरपुर राज्य के इतिहास में विस्तृतरूप से किया जा चुका है ।

सोलंकी

गुजरात के सोलंकी दक्षिण के सोलंकियों के वंशधर थे । दक्षिण के सोलंकियों के राज्य-समय उनके छोटे भाइयों को लाट और काठियावाड़ में जागीरें मिलीं, परन्तु पीछे से काठियावाड़ के सोलंकियों का कन्नौज के प्रतिहारों की अधीनता में रहना पाया जाता है ।

वि० सं० ६६८ (ई० स० ६४१) में सोलंकी मूलराज ने, जो राजा का पुत्र था, काठियावाड़ की तरफ से बढ़कर गुजरात के चावड़ावंशी राजा सामंतसिंह को, जिसका वह (मूलराज) भानजा था, मार डाला और गुजरात का राज्य छीन लिया । फिर मूलराज ने अणहिलवाड़ा से उत्तर की तरफ राज्य बढ़ाना आरंभ किया एवं आवू के परमार राजा धरणीवराह को परास्तकर उसका राज्य भी अपने अधीन कर लिया । वि० सं० १०५२ (ई० स० ६६५) के लगभग उसकी मृत्यु होने पर उसका पुत्र चामुंडराज गुजरात का स्वामी हुआ, जिसने मालवे के परमार राजा विन्धुगज को, जो भोज का पिता था, युद्ध में मारा । वह (चामुंडराज) विषयासक्त था, इसलिए उसकी बहिन चात्रिणीदेवी ने उसे राज्यच्युत कर उसके पुत्र वल्लभराज को गुजरात का स्वामी बनाया, परन्तु वह केवल छः मास तक ही जीता रहा । अनन्तर उसका छोटा भाई दुर्लभराज राजगद्दी पर बैठा । दुर्लभराज के पीछे उसके छोटे भाई नागराज का पुत्र भीमदेव राज्याधिकारी हुआ । उसके समय में सुलतान महमूद गज़नवी ने जब वि० सं० १०८२ (ई० स० १०२५) में गुजरात पर चढ़ाई कर सोमनाथ के प्रतिष्ठ मंदिर को तोड़ा, उस समय भीमदेव भागकर कच्छ (कंथकोट का किला) में चला गया । भीमदेव जब सिंध विजय करने गया था, उन दिनों मालवे के परमार राजा भोज के मंत्री कुलचंद्र ने गुजरात की राजधानी अणहिलवाड़े पर चढ़ाई कर उस नगर को लूटा । इसका बदला लेने के लिए भीमदेव ने मालवे पर चढ़ाई की, परन्तु उन्हीं दिनों भोज रोग-ग्रस्त होकर मर गया । तब भीमदेव मालवे की राजधानी धारा नगरी पर अधिकार कर वहां से

लौटा। वि० सं० ११२० (ई० स० १०६३) के लगभग वह अपने पुत्र कर्ण को राज्य देकर तीर्थ-स्थान में जाकर तपस्या करने लगा। कर्ण ने वि० सं० ११२०-११५० (ई० स० १०६३-१०९३) तक राज्य किया। उसके समय में मालवे के परमार राजा उदयादित्य ने गुजरात पर चढ़ाई कर कर्ण को परास्त किया।

कर्ण का पुत्र सिद्धराज जयसिंह बड़ा वीर और पराक्रमी राजा था। वि० सं० ११५० (ई० स० १०९३) के लगभग वह गुजरात का स्वामी हुआ। मालवे के परमारों और सोलंकीयों में बहुत समय से वैर चला आता था, इस कारण मालवे के परमार राजा नरवर्मा ने, जब कि सिद्धराज जयसिंह अपनी माता सहित सौराष्ट्र में सोमनाथ की यात्रा को गया हुआ था, गुजरात पर चढ़ाई कर दी। बिना राजा के बलवान् शत्रु का विनाश होना कठिन समझकर जयसिंह के मंत्री (सांतु) ने उस (नरवर्मा) से पूछा कि आप किस शर्त पर लौट सकते हैं ? इसपर उसने उत्तर दिया कि यदि तुम जयसिंह की उपर्युक्त यात्रा का पुण्य मुझे दे दो तो मैं लौट जाऊं। सांतु ने वैसा ही किया, जिसपर नरवर्मा पीछा लौट गया। यात्रा से आने पर जयसिंह ने जब यह बात सुनी, तब वह मंत्री पर क्रुद्ध हुआ और उसने मालवे पर अपनी विशाल सेना के साथ चढ़ाई कर दी। वह (सिद्धराज जयसिंह) इस चढ़ाई के समय वागड़ में होकर मालवे की तरफ गया था, इसलिए नरवर्मा पर विजय प्राप्त करने के अनन्तर उसने बांसवाड़ा राज्य के तल-वाड़ा गांव में एक मंदिर बनवाकर उसमें गणपति की मूर्ति स्थापित की। उक्त मूर्ति के आसन पर लेख है, जिसमें जयसिंह की नरवर्मा पर विजय होने का उल्लेख है, परन्तु मूर्ति पर प्रतिदिन पानी गिरने से उस लेख का अधिकांश भाग धिस गया है, जिससे उसका संवत् पढ़ा नहीं जाता। नरवर्मा, जयसिंह से युद्ध करता हुआ ही वि० सं० ११६० (ई० स० ११३२) में मर गया। अनन्तर उसके पुत्र यशोवर्मा ने, उसका उत्तराधिकारी होकर, युद्ध निरन्तर जारी रक्खा। बारह वर्ष तक परमारों से युद्ध करने के पीछे जयसिंह ने मालवे की राजधानी धारा नगरी में प्रवेश किया और यशोवर्मा

को कैद कर वह अपने साथ ले गया। उसने मालवे के अवन्ति (उज्जैन) नगर में नागर जाति के ब्राह्मण महादेव को अपनी तरफ से शासक (हाकिम) नियत किया। वि० सं० ११६६ (ई० सं० ११४२) के लगभग सिद्धराज जयसिंह का देहांत होने पर उसका कुटुम्बी कुमारपाल गुजरात का राजा हुआ। उसके समय में भी गुजरात के सोलंकी राज्य की अवस्था उन्नत रही। वि० सं० १२३० (ई० सं० ११७४) में उस (कुमारपाल) की मृत्यु हुई। उसके उत्तराधिकारी अजयपाल के समय गुजरात के राज्य की अवन्ति शुरू हुई और मेवाड़ के गुहिलवंशी नरेश सामंतसिंह ने उसको लड़ाई में घायल किया, जिसका बदला लेने के लिए गुजरातवालों ने उस (सामंतसिंह) को मेवाड़ से निकाल दिया। तब उसने वागड़ की तरफ बढ़कर बचे हुए परमारों को, जो सोलंकियों के अधीन सामंत की भांति वहां रहा करते थे, निकालकर वहां अपना अधिकार कर लिया, किन्तु उस (सामंतसिंह) को सोलंकियों ने वहां भी न टिकने दिया और महाराजा भीमदेव (दूसरा, भोला भीम) के समय सोलंकियों का पुनः वहां अधिकार हो गया।

मेवाड़ राज्य के जयसमुद्र (ढेबर) भील के निकटवर्ती वीरपुर (गातोड़) गांव से मिले हुए वि० सं० १२४२ (ई० सं० ११८५) के ताम्रपत्र से स्पष्ट है कि उस समय वागड़, गुजरात के सोलंकी राज्य के अन्तर्गत था और गुजरातवालों ने गुहिलवंशी विजयपाल के पुत्र अमृतपाल को वहां का राजा बना दिया था। उस (भीमदेव) का वागड़ पर ही अधिकार न रहा, किन्तु कुछ वर्षों तक उसका मेवाड़ पर भी अधिकार रहा था, जैसा कि वि० सं० १२६३ (ई० सं० १२०६) के आढाड़ गांव से मिले हुए सोलंकी महाराजा भीमदेव के समय के ताम्रपत्र से प्रकट है। डूंगरपुर राज्य के दीवड़ा गांव के वि० सं० १२५३ (ई० सं० ११९६) के लेख में महाराजा भीमदेव का नाम है, परन्तु उसके पीछे के वागड़ के लेखों में उसका नाम नहीं मिलता। सामंतसिंह के वंशधर सीहड़देव के दो शिलालेखों में से एक वि० सं० १२७७ (ई० सं० १२२१) का मेवाड़ राज्य के जगत् गांव से (जो उन दिनों

वागड़ में था) और दूसरा वि० सं० १२६१ (ई० स० १२३५) का डूंगरपुर राज्य के बड़ोदा (वटपद्रक) गांव से मिल चुका है, जिनसे ज्ञात होता है कि भीमदेव (भोला भीम) के समय में ही सामंतसिंह के वंशधरों ने वि० सं० १२७७ (ई० स० १२२१) से पूर्व सोलंकियों का वागड़ से अधिकार डठा दिया था ।

तीसरा अध्याय

गुहिल वंश

बांसवाड़ा के स्वामी सूर्यवंशी क्षत्रिय हैं। वे अहाड़ा^१ गुहिलोंत कहलाते हैं और 'महारावल' उनकी उपाधि है। इस राजवंश का विकास डूंगरपुर के राजवंश से हुआ है, जिसका विस्तृत वर्णन उदयपुर व डूंगरपुर राज्यों के इतिहास में किया जा चुका है, अतएव यहां उसका संक्षिप्त परिचय ही दिया जाता है—

अन्य राजवंशों की भांति गुहिलवंशी नरेशों का भी छठी शताब्दी से पहले का इतिहास अंधकार में छिपा है। उनका क्रमबद्ध इतिहास राजा गुहिल से मिलता है। उनके प्राचीन एवं विश्वस्त शिलालेखों में गुहिल से ही वंशावली आरंभ की गई है। मि० कार्लाइल को ई० स० १८६६ (वि० सं० १६२६) में गुहिल के २००० चांदी के सिक्के आगरे से मिले थे, जिनसे अनुमान होता है कि वह प्रदेश उस (गुहिल) के अधिकार में रहा होगा, क्योंकि पीछे भी उसके आस-पास के प्रदेश पर बहुत समय तक गुहिलवंशियों का राज्य रहा था। अनन्तर भोज, महेन्द्र, नाग और शील (शीलादित्य) नामक राजा हुए। उदयपुर राज्य के भोमट प्रांत के सामोली गांव से शीलादित्य का वि० सं० ७०३ (ई० स० ६४६) का शिलालेख मिला है तथा उसके सिक्के भी मेवाड़ में मिल गये हैं, जिनसे निश्चित है कि उस समय मेवाड़ में गुहिलवंशियों का राज्य स्थायी रूप से जम चुका था। फिर अपराजित राजा हुआ, जो वि० सं० ७१८ (ई० स० ६६१) में मेवाड़ में राज्य करता था। कुंडा गांव के वि० सं० ७१८ (ई० स० ६६१) के लेख

(१) विक्रम की दसवीं शताब्दी के लगभग अहाड़ा (आघाटपुर) गुहिलवंश की दूसरी राजधानी थी, जो उदयपुर से उत्तर-पूर्व में लगभग १½ मील दूर है। वहां रहने से गुहिलवंश की एक शाखा अहाड़ा कहलाई।

से प्रकट है कि वह (अपराजित) प्रतापी नरेश था और उसने गुहिलवंश की राज्य-लक्ष्मी बढ़ाई थी। उसके पीछे महेन्द्र और कालभोज (बापा राघव) राजा हुए। कालभोज (बापा) के लिए प्रसिद्ध है कि वह एकलिङ्ग शिव का परमभक्त था और उसने मोरियों से चित्तोड़ का दुर्ग छीनकर दूर-दूर तक अपनी विजय-पताका फहराई थी। वि० सं० ८१० (ई० स० ७५३) में उस (बापा) ने राज्य त्यागकर संन्यास लिया। उसकी राजधानी एकलिङ्गजी के निकट नागदा नगर थी। उसका पुत्र खुंमाण (प्रथम) हुआ, जिसके पीछे मत्तट, भर्तृभट, सिंह, खुंमाण (दूसरा), महायक और खुंमाण (तीसरा) ने क्रमशः अपने पैतृक राज्य को प्राप्त किया। खुंमाण (तीसरा) के पीछे भर्तृभट (दूसरा), अल्लट, नरवाहन, शालिवाहन और शक्तिकुमार मेवाड़ के स्वामी हुए, जिनका समय शिलालेखों से वि० सं० ६६६ से १०३४ (ई० स० ६४२ से ९७७) तक स्पष्ट है। शक्तिकुमार के समय मालवे के परमार राजा मुंज ने आक्रमण कर चित्तोड़ पर अधिकार कर लिया और उस (मुंज) ने आहाड़ को भी तोड़ा था।

शक्तिकुमार का पुत्र अंवाप्रसाद, सांभर के चौहान वाक्पतिराज (दूसरा) के द्वारा मारा गया। उस (अंवाप्रसाद) के पीछे क्रमशः शुचि-वर्मा, नरवर्मा, कीर्तिवर्मा, योगराज, वैरट, हंसपाल और वैरिसिंह राजा हुए। वैरिसिंह का उत्तराधिकारी विजयसिंह हुआ, जिसका वि० सं० ११६४-११७३ (ई० स० ११०७-१११६) तक मेवाड़ का राजा होना निश्चित है। फिर अरिसिंह, चोड़सिंह, विक्रमसिंह और रणसिंह (कर्णसिंह) ने एक दूसरे के पीछे राज्य पाया। रणसिंह के ज्येष्ठसिंह, माहप और राहप नामक पुत्र थे। माहप और राहप को मेवाड़ में सीसोदे की जागीर मिली, जिससे वे तथा उनके वंशधर सीसोदिया कहलाये तथा उनकी उपाधि 'राणा' हुई। राहप के वंशधर इस समय उदयपुर राज्य के स्वामी हैं।

ज्येष्ठसिंह मेवाड़ का स्वामी रहा और 'रावल' उसकी उपाधि रही। उसके सामंतसिंह तथा कुमारसिंह नामक दो पुत्र थे, जिनमें से सामंतसिंह

सामंतसिंह का वागड़ पर
अधिकार करना

ने पिता का राज्य मिलने पर गुजरात के सोलंकी राजा अजयपाल से युद्धकर उसे घायल किया, इससे गुजरातवालों से उसका वैर हो गया। उसके सामन्त भी उससे रुष्ट थे। ऐसा अवसर पाकर गुजरातवालों ने उसको वहां से निकाल दिया। तब उसने वि० सं० १२३६ (ई० स० ११७६) के पूर्व वागड़ में जाकर बड़ोदा के सरदार चौरसीमल को मारकर वहां पर अपना राज्य जमाया, परन्तु गुजरातवालों ने वहां भी उसे स्थिरता पूर्वक रहने न दिया।

वागड़ का राज्य सोलंकीयों के अधिकार में चले जाने एवं सोलंकीयों-द्वारा गुहिलवंशी अमृतपाल को उसके दिये जाने पर भी सामंतसिंह के वंशज निराश न हुए और अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। ज्योंही उन्होंने गुजरात के महाराजा भीमदेव (दूसरा) की कमज़ोरी का अवसर पाया त्योंही वागड़ का राज्य पीछा अपने अधिकार में कर लिया। सामंतसिंह के पीछे जयतसिंह, सीहड़देव, विजयसिंहदेव (जयसिंहदेव), देवपालदेव (देदू), धीरसिंहदेव (वरसी रावल) और भचुंड वागड़ के स्वामी हुए, जिनकी राजधानी बड़ोदा (वटपद्रक, डूंगरपुर राज्य) थी। भचुंड का पुत्र डूंगरसिंह हुआ, जिसने वि० सं० १४१५ (ई० स० १३५८) के लगभग डूंगरपुर बसाकर वहां अपनी राजधानी स्थापित की।

डूंगरसिंह का उत्तराधिकारी कर्मसिंह (पहला) और उसके पीछे कान्हड़देव तथा प्रतापसिंह (पाता रावल) क्रमशः वागड़ की गद्दी पर बैठे। अनन्तर गोपीनाथ (गैपा रावल) वि० सं० १४८३ (ई० स० १४२६) के लगभग वागड़ का स्वामी हुआ। उसके समय में वि० सं० १४८६ (ई० स० १४३३) में गुजरात के सुलतान अहमदशाह की चढ़ाई हुई। उस समय उसने गुजरात की सेना को नष्टकर उसकी संपत्ति छीन ली। फिर उसने वागड़ में बसनेवाले भीलों का दमनकर वहां शांति स्थापित की। तदनन्तर मेवाड़ के महाराणा कुंभकर्ण (कुंभा) की चढ़ाई होने पर मेवाड़ की

सेना से लड़ना उचित न समझकर वह कुछ समय के लिए पहाड़ों में चला गया।

गोपीनाथ का पुत्र सोमदास भी वीर था। उसके समय में मांडू के सुलतान महमूद खिलजी और गयासुद्दीन की वि० सं० १५१६ तथा १५३० (ई० सं० १४५६ और १४७४) में चढ़ाईयां हुईं। इनमें से पिछली चढ़ाई में डूंगरपुर को सुलतान ने तोड़ा था। वि० सं० १५३६ (ई० सं० १४८०) में सोमदास का देहांत होने पर उसका पुत्र गंगदास वागड़ के सिंहासन पर बैठा, जिसने ईडर की १८००० सेना से युद्ध किया था।

महारावल गंगदास का पुत्र उदयसिंह युद्धप्रिय नरेश था। कुंवर-पदे में वह मेवाड़ के महाराणा रायमल के साथ, मालवे के सेनापति जफ़रखां के साथ के युद्ध में, विद्यमान था। सिंहासनारूढ़ होने के पीछे उसने गुजरात के सुलतान मुज़फ़्फ़रशाह के विरुद्ध ईडर का राज्य राठोड़ राव रायमल को दिलाने में मेवाड़ के स्वामी महाराणा संग्रामसिंह (सांगा) के साथ रहकर वि० सं० १५७१ (ई० सं० १५१४) में निज़ामुलमुल्क (गुजरात के सरदार) से युद्ध किया। उसका बदला लेने के लिए गुजरात के सुलतान मुज़फ़्फ़रशाह की सेना ने वि० सं० १५७७ (ई० सं० १५२०) में वागड़ में प्रवेशकर डूंगरपुर को बरबाद किया। वहां से जब गुजरात की सेना सागवाड़े की तरफ़ होती हुई लौटी तो कुंवर जगमाल ने बांसवाड़े की तरफ़ से बढ़कर उसका मुकाबला किया।

अपने पिता मुज़फ़्फ़रशाह से गुजरात के शाहज़ादे बहादुरशाह के रूठकर डूंगरपुर आने पर महारावल उदयसिंह ने उसे शरण दी। वह (उदयसिंह) गुजरात का राज्य बहादुरशाह को दिलाने का पक्षपाती था, इसलिए गुजरात के सरदारों ने जब बहादुरशाह के छोटे भाई नासिरखां को गुजरात का सुलतान बनाकर मुग़ल बादशाह बाबर से, जो उन दिनों भारत पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा था, सहायता देने को पत्र भेजा, तो महारावल ने वह पत्र छिन्नाकर बहादुरशाह के पास भेज दिया। फिर बहादुरशाह के सुलतान होने पर उसके विरोधी अफ़सर अज़दुलमुल्क

और मुहाफ़िज़ख़ां भागकर हूंगरपुर चले गये। महारावल ने उनको अपने वहां रक्खा। इसपर नाराज़ होकर वि० सं० १५८३ (ई० सं० १५२६) में सुलतान बहादुरशाह ससैन्य वागड़ में आया, तब महारावल उस (सुलतान) के पास उपस्थित हो गया, जिससे वह अपना कोप शांत होने पर लौट गया।

वि० सं० १५८३ (ई० सं० १५२७) में मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (सांगा) ने भारत में पुनः हिन्दू-साम्राज्य की स्थापना करने की इच्छा से दिल्ली के मुगल बादशाह बाबर पर चढ़ाई की, उस समय महारावल उदयसिंह और उसका कुंवर जगमाल भी १२००० सेना सहित महाराणा के साथ रहे। भरतपुर राज्य में खानवे के पास युद्ध हुआ, जिसमें महारावल उदयसिंह वि० सं० १५८४ चैत्र सुदि १४ (ई० सं० १५२७ ता० १७ मार्च) को वीर-गति को प्राप्त हुआ और कुंवर जगमाल घायल होकर गिर गया।

महारावल उदयसिंह के पृथ्वीराज और जगमाल नामक दो पुत्र हुए, जिनमें से ज्येष्ठ पृथ्वीराज के वंशज हूंगरपुर और छोटे जगमाल के वंशज बांसवाड़ा के स्वामी हैं।

महारावल उदयसिंह के इन दोनों पुत्रों में पृथ्वीराज बड़ा था, यह बात प्रायः सब इतिहास-लेखकों ने स्वीकार की है और बांसवाड़ा के स्वामी भी सदा से ऐसा ही मानते रहे हैं। यही नहीं, बांसवाड़ा के दीवान के कथन की समीक्षा अंग्रेज़ सरकार में भी वे अब तक अपने को महारावल उदयसिंह के छोटे पुत्र जगमाल के वंशज होना ही लिखते रहे हैं, किन्तु अभी कुछ महीनों पूर्व हमारे पास बांसवाड़ा के दीवान का एक पत्र आया, जिसमें यह बतलाने की चेष्टा की गई है कि 'जगमाल, महारावल उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र था और पृथ्वीराज छोटा, तथा अपने इस कथन की पुष्टि में निम्नलिखित प्रमाण दिये हैं—

(१) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ज़्यादा में जगमाल को महारावल उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र लिखा है।

(२) जोधपुर के कविराजा बांकीदान के यहां की एक पुस्तक में भी जगमाल के महारावल उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र होने का उल्लेख है ।

(३) सुन्नणपुर गांव के वि० सं० १५७५ पौष वदि १२ के शिलालेख में जगमाल को 'महाकुंवर' लिखा है, जिसका अर्थ ज्येष्ठ पुत्र होता है ।

(४) नौगांवा के एक खेत पर के वि० सं० १५८४ के लेख में जगमाल को 'महाकुंवर' लिखा है, जो ज्येष्ठ होने का सूचक है ।

उपर्युक्त दलीलों के आधार पर हमसे यह आग्रह किया गया कि जगमाल को महारावल उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र मानना चाहिये; परन्तु जगमाल के उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र होने की कथा लोक-प्रसिद्ध नहीं है और वह परंपरागत जनश्रुति एवं इतिहास के विरुद्ध पड़ती है, अतएव इतिहास की विशुद्धि के लिए बांसवाड़ा के दीवान के कथन की जांच करना आवश्यक है कि उसमें वास्तविकता का अंश कितना है ?

(१) ई० स० १६३१ ता० ४ अगस्त (वि० सं० १६८८ श्रावण वदि ६) को बांसवाड़ा राज्य की तरफ से भेजी हुई बड़वे की ख्यात की प्रतिलिपि में लिखा है—

“महारावल उदयसिंह की राणी राजकुंवरी—वीरसिंह की पुत्री—से महाराजकुमार जगमाल हुआ, जो बांसवाड़े आया और दूसरी राणी सोनगरी पन्नाकुंवरी—विजयसिंह की पुत्री—से छोटा कुंवर पृथ्वीसिंह (पृथ्वीराज) उत्पन्न हुआ, जो डूंगरपुर रहा ।

“महाराणा सांगा (संग्रामसिंह) ने दिल्ली के बादशाह अकबर के चित्तोड़ पर आक्रमण करने के समय रायराया महारावल उदयसिंह को बुलवाया, तब वह अपने छोटे कुंवर पृथ्वीसिंह को डूंगरपुर की रक्षा का भार देकर महाराजकुमार जगमाल सहित चित्तोड़ गया । फिर महाराणा सांगा और उदयसिंह ने पीले खाल पर जाकर उक्त बादशाह से युद्ध किया । महाराणा का मुक़ाम गांव सीकरी में रहा । उस युद्ध में उदयसिंह मारा गया और जगमालसिंह के ८४ घाव लगे । फिर रणक्षेत्र को सम्हाला गया तो घायलों में जगमाल नहीं मिला । इसके पीछे उसी मार्ग से बाबा मानभारती उज्जैन

के चढ़ाव के मेले से लौटता हुआ निकला । उसने जगमालसिंह को बट-वृत्त के नीचे घायल पड़ा हुआ देखा । वह (मानभारती) उस (जगमाल) के पास गया और उसके पैरों में स्वर्ण केलङ्कर देखकर उसने विचार किया कि यह कोई अमीर है । तदनन्तर उसने उस (जगमाल) को पालकी में उठवा लिया और मार्ग में उसकी मरहम-पट्टी की । तब तीसरे दिन जाकर जगमाल मुंह से बोला । मानभारती ने पूछा कि तुम कौन हो ? इसपर उसने अपना पता न बताया, परन्तु तीन महीने तक वह उसके साथ रहा और घावों की पीड़ा से अच्छा हुआ ।

“मानभारती गुजरात में भ्रमण करता हुआ ईडर पहुँचा । वहाँ जगमाल को कुँप पर स्नान करते हुए देख, उस (जगमाल) की वहाँ ससुराल होने से स्त्रियों ने उसको पहिचान लिया । उन्होंने जाकर राव इंद्रभाण से कहा—‘आपके जवाई (जामाता) तो कुँप पर बाबाजी की मंडली में हैं’ । इसपर इंद्रभाण वहाँ जाकर जगमाल से मिला । फिर उसने साधु-मंडली-सहित उसको महलों में बुलवाया और वहाँ बड़ी खुशी की । यह समाचार राव इंद्रभाण ने जब डूंगरपुर भेजा तो पृथ्वीसिंह ने कहा कि ‘यह सब फिन्तूर है’ । उस (पृथ्वीसिंह) का ऐसा उत्तर पाकर इंद्रभाण ने महाराणा सांगा को लिखा । तब उदयपुर से महाराणा सांगा ईडर गया, जहाँ उस (महाराणा) की भी ससुराल थी, जिससे १३ या १५ दिन तक वह वहाँ ठहरा रहा । उसने जगमाल को पहिचानकर कहा कि ‘यह काका जगमालसिंह ही है’ । अनन्तर ईडर से महाराणा सांगा और राव इंद्रभाण जगमाल को लेकर डूंगरपुर गये, जिनको पृथ्वीसिंह ने डूंगरपुर में न आने दिया और कहा कि ‘मेरा भाई जगमालसिंह हो तो आने दूँ ।’ महाराणा और ईडर के राव ने उस (पृथ्वीसिंह) को बहुत कुछ समझाया, परन्तु उसने न माना । अन्त में ईडर का राव नाराज़ होकर लौट गया और महाराणा सांगा जगमाल को लेकर चावंड (मेवाड़) गया । वहाँ तीन वर्ष तक रहकर जगमाल लूट-मार करता रहा । फिर मंदसोर के शाहज़ादे

महमूदशाह ने आकर जगमालसिंह को कहा कि जितनी भूमि तुमने ली, उतनी ही अपने लिये रक्खो । तत्पश्चात् वागड़ का बटवारा हुआ^१ ।

“संवत् पनर पिच्चासिये, चैत तीज रविवार ।

वागड़ बांटी खाग बल, नीश्चे (?) रावल जगमाल ॥

“दोनों राज्यों अर्थात् वागड़ के दोनों किनारों में से माही नदी बांसवाड़ा की रही और उधर के तट की परली तरफ से डूंगरपुर की सीमा हुई । इस समझौते पर जगमाल ने ‘सही’ शब्द लिखा और पृथ्वीसिंह ने ‘खरी’ लिखा । इसका यह कारण है कि जिसने भूमि ली, उसके ‘सही’ (बहाल) रही और जिसके बच गई, उसके ‘खरी’ (शेष) ठीक रही । इस बटवारे के होने के पीछे बांसवाड़े के पट्टों परवानों पर ‘टट्ट सही टट्ट’ लिखा जाने लगा^२ ।

“वागड़ का यह बटवारा संवत् १५८५ चैत सुदि ३ रविवार को हुआ । जगमाल के साथ उस समय मेड़तिया राठोड़ गोपीनाथ (तलवाड़े का) चौहान माधोसिंह (मेतवाले का) चौहान हाथी (अर्थूणे का) और चौहान सबलसिंह (मोलां का) डूंगरपुर से आये थे । जगमालसिंह चावंड से लोहारिये आया और उसने लोलाड़िया राठोड़ परबतसिंह को, जो कुआं-लिये में रहता था, मारा^३ ।”

ख्यात का उपर्युक्त सारा कथन बहुधा कपोल कल्पित है और इतिहास की अज्ञानता में लिखा गया है । अब तक जितने भी इतिहास के ग्रंथ लिखे गये हैं, उनमें से किसी में भी जगमाल को महारावल उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र नहीं लिखा है । यदि ख्यात में जगमाल को उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र लिखा होता तो अवश्य ही उन सब पुस्तकों में भी (जिनमें पृथ्वीराज को ज्येष्ठ लिखा है) जगमाल को उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र लिखा जाता ।

(१) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र २, पृ० २ ।

(२) वही; पत्र २, पृ० २ ।

(३) वही; पत्र ३, पृ० १ ।

यह बात बांसवाड़ा राज्य के दीवान को भी स्वीकार है कि अंग्रेज़ी पुस्तकों में लिखा हुआ अधिकांश वृत्तांत, जिसमें जगमाल को महारावल उदयसिंह का छोटा पुत्र लिखा है, स्वयं रियासत ने ही भेजा था^१। इससे सिद्ध है कि जगमाल के उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र होने की बात पहले ख्यात में लिखी हुई न थी। यदि पहले की लिखी हुई होनी तो राज्य उसके विरुद्ध जगमाल को उदयसिंह का छोटा पुत्र कभी नहीं लिखता, क्योंकि बांसवाड़ा राज्य के इतिहास के सम्बन्ध में अब तक जो कुछ विद्वानों ने उल्लेख किया है, उन सबका मूल आधार ख्यात ही है।

उपर्युक्त बड़वे की ख्यात में जो अन्य वृत्तान्त, महारावल जगमाल के सम्बन्ध में लिखा है, वह भी अधिकांश में विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि महाराणा सांगा के समय बादशाह अकबर का जन्म ही नहीं हुआ था। पीलिया खाल (खानवा, भरतपुर राज्य) के पास महाराणा सांगा का युद्ध बादशाह अकबर के साथ नहीं, अपितु उसके दादा बाबर बादशाह के साथ ई० स० १५२७ (वि० सं० १५८४) में हुआ था^२, जिसमें उदयसिंह मारा गया।

ईडर की गद्दी पर राव इंद्रभाण नाम का कोई राजा ही नहीं हुआ और न महाराणा सांगा के समय उदयपुर बसा था। उदयपुर तो महाराणा सांगा के पुत्र उदयसिंह ने वि० सं० १६१६ (ई० स० १५५६) में बसाया^३ था।

महाराणा सांगा खानवे के युद्ध से अनुमान दस मास पीछे वि० सं० १५८४ में कालपी (आगरा ज़िला) में परलोक सिधारा था^४। खानवे के

(१) बांसवाड़ा राज्य के दीवान का पत्र; संख्या ४७५ ता० ३० मार्च सन् १९३६ ई०, पृ० १०।

(२) तुजुके बाबरी का अंग्रेज़ी अनुवाद; पृ० ५६८-७३। वीरविनोद; भाग १, पृ० ३६६-८।

(३) वीरविनोद भाग २, पृ० ७२।

(४) संग्रामसिंहः संग्रामं बब्बरेणविधाय सः।

कालपीमध्य आयातः संग्रामस्य तदाखिलैः ॥

युद्ध के बाद वह पीछा मेवाड़ में आया ही नहीं और न वागड़ अथवा ईंड़र की तरफ़ गया। ऐसी अवस्था में उसका जगमाल के साथ चावंड में रहना सर्वथा असंभव है।

ख्यात में उल्लिखित पृथ्वीराज और जगमाल के बीच वागड़ के बंट-वारे के समय मंदसोर में महमूदशाह नाम का कोई शाहज़ादा ही न था।

वागड़ का यह बंटवारा वि० सं० १५८५ में नहीं, किन्तु वि० सं० १५८७ (ई० सं० १५३०) में हुआ था, जैसा कि आगे बतलाया जायगा। ऐसे ही ख्यात में लिखे हुए वि० सं० १५८५ चैत्र सुदि ३ को रविवार होना भी निराधार है, क्योंकि चैत्रादि वि० सं० १५८५ में तो सोमवार था और आषाढादि वि० सं० १५८५ (चैत्रादि १५८६) में चैत्र सुदि ३ को शुक्रवार।

ख्यात का यह कथन कि वि० सं० १५८५ (ई० सं० १५२८) में वागड़ को महारावल जगमाल ने बंटवा लिया, ठीक नहीं जंचता, क्योंकि इसी ग्रन्थ में जगमाल का तीन वर्ष (वि० सं० १५८४-८६=ई० सं० १५२७-१५२९) तक चावंड में रहते समय विद्रोही रहना लिखा है। यदि वि० सं० १५८५ (ई० सं० १५२८) में वागड़ का बंटवारा हो गया होता तो फिर जगमाल को अधिक दिनों तक लूट-मार करने की आवश्यकता ही क्या थी ?

उपर्युक्त कुछ बातों पर विचार करने से ही ज्ञात हो जायगा कि बड़वा भाटों की लिखी हुई ख्यातें प्राचीन इतिहास के लिए प्रामाणिक नहीं हैं। यही नहीं, वे भ्रमोत्पादक होने के कारण सत्यमार्ग से वंचित भी करती हैं। यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि इतिहास के ग्रन्थकार की दशा में इन ख्यातों की सृष्टि हुई है और ख्यात-लेखकों को पुराने समय की ऐतिहासिक बातों का कुछ भी ज्ञान न था। फिर उन्होंने अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न

गरदानं कृतं त्वैतैः संग्रामं तादृशं पुनः ॥

आनीय मंडलगदे मेदपाटे पुरक्रियाम् ॥

अमरकाव्यम्, पृष्ठ २४।

रखने के लिए अपनी ख्यातों में समय-समय पर कई मनमानी बातें लिख-कर उनको भ्रष्ट कर दिया है, जिससे उनमें वास्तविकता का जो अंश था, वह भी जाता रहा और अब वे प्राचीन इतिहास के लिए कुछ भी महत्त्व नहीं रखतीं। जब अन्य ऐतिहासिक साधनों से ख्यातों की जांच की जाती है तो उनमें लिखा हुआ वृत्त अधिकांश में प्रक्षिप्त ठहरता है। इसी कारण, विद्वान् लोग ख्यातों पर विश्वास नहीं करते और शोध से जो बात उचित जान पड़ती है उसी को ग्रहण करते हैं।

राजाओं की गद्दीनशीनी, विवाहोत्सव, पुत्र-जन्म आदि अवसरों पर बड़वा लोग राज्यों में बराबर जाते-आते रहते हैं। वे राजा तथा उसके पुत्रों आदि के नाम लिखते हैं और बड़ी धूमधाम से अपनी ख्यातों में उल्लिखित वंशावली सुनाते हैं; ऐसी दशा में ई० सन् १६३१ (वि० सं० १६८८) तक बांसवाड़ा राज्य के शासकों को जगमाल के ज्येष्ठ होने का कुछ भी ज्ञान न हो, यह बड़े आश्चर्य की बात है।

डूंगरपुर और बांसवाड़ा राज्यों का बड़वा एक ही है। डूंगरपुर राज्य के बड़वे की ख्यात भी मेरे देखने में आई है, जिसमें जगमाल के उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र होने के विषय में कहीं भी उल्लेख नहीं है। ऐसी दशा में केवल बांसवाड़े से भेजी हुई बड़वे की ख्यात के अनुसार यह मान लेना कि जगमाल उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र था, नितान्त अनुचित है।

अब यहां यह बतलाना उचित है कि जगमाल के ज्येष्ठ न होने के सम्बन्ध में अन्य विद्वानों ने क्या लिखा है—

मेजर-जेनरल सर जॉन माल्कम अपनी 'ए मेमोयर ऑव् सेन्ट्रल इंडिया इनक्ल्युडिंग मालवा' नामक पुस्तक (तृतीय संस्करण; ई० सं० १८३२) में लिखता है—“बांसवाड़े का राजा डूंगरपुर के राजा के छोटे भाई का वंशज है।”

(१) माल्कम; ए मेमोयर ऑव् सेन्ट्रल इंडिया इनक्ल्युडिंग मालवा (ई० सं० १८३२=वि० सं० १८८१), जि० १, पृ० ५०६।

जी० आर० एन्नी मेके ने ई० स० १८७८ (वि० सं० १९३५) में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'दि नेटिव चीफ्स एण्ड देअर स्टेट्स' में जगमाल को उदयसिंह का छोटा पुत्र लिखा है^१ ।

'राजपूताना गैज़ेटियर' (जो ई० स० १८७९=वि० सं० १९३६ में तीन जिल्दों में प्रकाशित हुआ) की प्रथम जिल्द में बांसवाड़ा राज्य के वृत्तान्त में (जो बांसवाड़े से ही भेजा गया था) लिखा है—“उदयसिंह के दो पुत्रों में बड़ा पृथ्वीराज और छोटा जगमाल था^२ ।”

कर्नल ट्रेयर, एजेंट गवर्नर जनरल राजपूताना ने पोलिटिकल अफ़सर्गोंद्वारा भिन्न-भिन्न राज्यों से वहां के नरेशों और सरदारों आदि का वृत्तान्त संग्रह कराकर मंगवाया तथा उसके आधार पर 'चीफ्स एण्ड लीडिंग फैमिलीज़ इन राजपूताना' नामक पुस्तक प्रकाशित होना आरम्भ हुआ (अब भी यह पुस्तक 'दि रूलिंग प्रिन्सेज़ चीफ्स एण्ड लीडिंग फ़ैमिलीज़ इन राजपूताना एण्ड अजमेर' नाम से प्रकाशित होती है) । उसमें भी यही लिखा है कि बांसवाड़ा डूंगरपुर की छोटी शाखा में है और महारावल उदयसिंह के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पृथ्वीराज तथा छोटा जगमाल था^३ ।

उदयपुर राज्य के वृहत् इतिहास 'वीरविनोद' में बांसवाड़ा राज्य के वर्णन में महामहोपाध्याय कविगजा श्यामलदास ने लिखा है कि जगमाल महारावल उदयसिंह का छोटा पुत्र था^४ ।

प्रसिद्ध विद्वान् डा० हेंडली ने 'रूलर्स ऑफ़ इंडिया एण्ड दि चीफ्स ऑफ़ राजपूताना' नामक पुस्तक तैयार करने के लिए भिन्न भिन्न राजाओं

(१) एन्नी मेके; दि नेटिव चीफ्स एण्ड देअर स्टेट्स (द्वितीय संस्करण, ई० स० १८७८=वि० सं० १९३५); वंशवृक्ष पृ० ३७, भाग दूसरा, पृ० २५ ।

(२) राजपूताना गैज़ेटियर के अन्तर्गत बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; जि० १, पृ० १०४-१०५ ।

(३) लिस्ट ऑफ़ रूलिंग प्रिन्सेज़ चीफ्स एण्ड लीडिंग फ़ैमिलीज़ (छठा संस्करण, ई० स० १९३१); पृ० २४ ।

(४) वीरविनोद; भाग दूसरा, प्रकरण ग्यारहवां ।

के चित्र तथा संक्षिप्त परिचय उनके राज्यों से मंगवाकर ई० स० १८६७ में अपने बहुमूल्य ग्रंथ को प्रकाशित किया था । उसमें भी जगमाल को उदयसिंह का छोटा पुत्र ही लिखा है^१ ।

भारत के भूतपूर्व वाइसराय लार्ड कर्जन ने हिन्दुस्तान का 'इंपीरियल गैज़ेटियर' तैयार कराने की योजना कर प्रत्येक विभाग के पृथक्-पृथक् गैज़ेटियर बनाने के लिए अफ़सर नियत किये । उस समय राजपूताना गैज़ेटियर के लिए मेजर के० डी० अर्सेकिन की नियुक्ति हुई । उसने राजपूताना के राज्यों से वहाँ के वृत्तांत मंगवा कर उपरोक्त गैज़ेटियर के लिए राजपूताने का अंश तैयार कर भेजा, जो ई० स० १९०८ में प्रकाशित हुआ । उसमें जगमाल को महारावल उदयसिंह का छोटा पुत्र बतलाया है^२ ।

भारत सरकार की तरफ़ से देशी राज्यों के संबंध की आवश्यक बातें जानने के लिए 'मेमोरेण्डा ऑन दि नेटिव स्टेट्स' नामक पुस्तक समय-समय पर प्रकाशित होती रहती है । उसके ई० स० १९३४ के संशोधित संस्करण में लिखा है—“झुंगरपुर के स्वामी उदयसिंह की मृत्यु के पीछे ई० स० १५२८ में बांसवाड़ा पृथक् राज्य हुआ और उस(उदयसिंह)का न्येष्ठ पुत्र झुंगरपुर का तथा छोटा बांसवाड़े का स्वामी हुआ^३ ।”

इनके अतिरिक्त अन्य कई इतिहासवेत्ताओं ने भी ख्यात के आधार पर ही जगमाल को उदयसिंह का छोटा पुत्र बतलाया है^४ । ऐसी स्थिति में

(१) हेंडली; दि रूलर्स ऑव् इंडिया एण्ड दि चीफ़र्स ऑव् राजपूताना, पृ० ३६ ।

(२) इंपीरियल गैज़ेटियर ऑव् इंडिया के अन्तर्गत राजपूताना गैज़ेटियर; पृ० १४७ । अर्सेकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर, पृ० १६२ ।

(३) मेमोरेण्डा ऑन इंडियन स्टेट्स (ई० स० १९३४); पृ० २०८ ।

(४) मुंहणोल नैणसी की ख्यात; जित्द १, पृ० ८६ । मुंशी ज्वालासहाय; बाकाये राजपूताना (उर्दू); जि० १, पृ० २१४ । जरनल ऑव् दि एशियाटिक सोसाइटी ऑव् बंगाल (ई० स० १८६७=वि० सं० १९२४); भाग १, पृ० १६२-६६ । मार्केड एन. महता एण्ड मन्नु एन. महता; हिन्द राजस्थान, पृ० ६३१ । ए० वेदि वेलु; दि रूलिंग चाफ़र्स नोबुल्स एण्ड ज़मींदारर्स ऑव् इंडिया; पृ० २०८ । झुंगरपुर राज्य के राणीमंगा की ख्यात । चारण रामनाथ रत्नु; इतिहास राजस्थान, पृ० ७८ ।

बांसवाड़ा राज्य के दीवान का यह कथन कि बड़वे की ख्यात में जगमाल को उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र लिखा है, कदापि मान्य नहीं हो सकता। यदि पहले से ख्यात में जगमाल को ज्येष्ठ लिखा होता तो अवश्य ही इन पुस्तकों में भी जगमाल को ही ज्येष्ठ लिखा जाता, न कि पृथ्वीराज को।

(२) जोधपुर के कविराजा बांकीदास के यहां की एक पुस्तक में जगमाल का ज्येष्ठ लिखा होना बांसवाड़ा राज्य के दीवान ने बतलाया है, परन्तु वह पुस्तक हमारे देखने में नहीं आई। कविराजा बांकीदास बड़ा ही सम्पन्न और इतिहासप्रेमी पुरुष था। उसकी संग्रहीत लगभग २६०० ऐतिहासिक बातों की पुस्तक मेरे यहां है, जिसमें कहीं भी जगमाल का बड़ा होना नहीं लिखा है। उसमें केवल यही लिखा है—

“डूंगरपुर का स्वामी रावल उदयसिंह राणा सांगा की सहायतार्थ सीकरी में काम आया। कुंवर जगमाल घायल हुआ। उसके वंश के बांसवाड़ा के रावल हैं।”

कविराजा बांकीदास के यहां की उपर्युक्त पुस्तक, जिसमें जगमाल के ज्येष्ठ होते का उल्लेख है, बतलाने के लिए मैंने बांसवाड़ा राज्य के दीवान को लिखा, परन्तु वह पुस्तक नहीं भिजवाई गई, इसलिए उक्त पुस्तक के संबंध में निश्चयात्मक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता कि वास्तव में वह बांकीदास की लिखित है या पीछे की संग्रहीत।

बांकीदास महारावल जगमाल से तीन सौ वर्ष पीछे हुआ था। ऐसी अवस्था में उसके यहां के संग्रह में जगमाल के विषय में जो कुछ लिखा है वह बिल्कुल ठीक नहीं माना जा सकता। एक ही जगह से प्राप्त वर्णन यदि भिन्न-भिन्न रूप से मिलते हैं तो उनमें कौनसी बात सत्य है इसका निर्णय करना कठिन होने से संदिग्ध बात प्रमाण में नहीं ली जा सकती।

(३) सुन्नरपुर गांव के वि० सं० १५७५ पौष वदि १२ (ई० सं० १५१८) के जिस शिलालेख में जगमाल को महाकुंवर लिखा है, उसकी छाप बांसवाड़े से हमारे पास आई, जिसमें संवत् १५७५ पौष वदि १२ शुक्रवार (?)

पढ़ा जाता है; परन्तु बांसवाड़ा से आई हुई उसकी नक़ल में गुरुवार लिखा है, जो ठीक नहीं है; क्योंकि उस दिन बुधवार था।

यह लेख प्रशस्ति नहीं है किन्तु खेत में गड़ी हुई सुरह है, जिसपर किसी अपढ़ पुरुष की लिखी हुई छोटी-छोटी नौ पंक्तियां हैं, जो बिगड़ी हुई होने से अधिकांश पढ़ी नहीं जातीं। इसमें कुछ भूमि देने का उल्लेख है। यह लेख विश्वास के योग्य नहीं है; क्योंकि इसमें भूमि का परिमाण और पड़ोस आदि कुछ भी नहीं लिखा है और केवल 'आघाटदत्त' ही लिखा है, जिसका कोई स्पष्ट अर्थ नहीं होता।

बांसवाड़ा राज्य के दीवान को, उपर्युक्त संदिग्ध लेख में जगमाल को 'महाकुंअर' लिखा होने से, इस बात का दावा है कि 'जगमाल' के ज्येष्ठ होने से ही उसे 'महाकुंअर' लिखा है।

'महाकुंअर' का अर्थ ज्येष्ठ पुत्र नहीं होता। 'महा' शब्द केवल महत्व का सूचक है, जैसे राजा को महाराजा, राणा को महाराणा, रावल को महार-

- (१) १ ॥ स्वस्ती संवत् १५७५ वर्षे
 २ पौषवदि १२ दिने गुरौ
 ३ म माहाराउल श्री उदयसिंघजी
 ४ महा कुअर श्री जगमलजी संमति
 ५ आघाटदत्त राउल वनासुत
 ६ नरहरिकेन संप्रदास्ये अस्ति
 ७ यस्य प्रदाभूमि तस्य त
 ८ स्य फला जनि.....
 ९....आचन्द्रार्क मयापि दत्ताम्

तथास्तु

[बांसवाड़ा से भेजे हुए अक्षरांतर (नक़ल) से]।

इस लेख की बांसवाड़ा से जो छाप आई, वह इतनी खराब है कि बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी उसका ठीक पाठ नहीं निकल सका। इसलिए वास्तविकता का ज्ञान होने के लिए जो अक्षरांतर बांसवाड़ा से आया है, वही यहां पर दे दिया गया है।

रावल, रावत को महारावत, राव को महाराव आदि लिखते हैं। वागड़ के कुछ लेखों के सिवाय 'महाकुंअर' शब्द का प्रयोग राजपूताने में कहीं नहीं मिलता। वर्तमान समय में राजा के प्रत्येक कुंअर को महाराजकुमार कहते हैं। उसी प्रकार वागड़ के पहले के लेखों में किसी भी कुंवर को कहीं-कहीं 'महा-कुंअर' लिखा मिलता है, जो महाराजकुमार का ही सूत्रक है। राजा के पुत्र को 'महाकुंअर', 'महाराजकुमार' या 'कुंवर' लिखने की पहले कोई रुढ़ि नहीं थी और लेखक लोग जैसा चाहते वैसा ही लिखते थे। प्राचीन समय के लेखों में राजाओं के नामों के साथ कुंवरों के नाम बहुत ही कम मिलते हैं और कभी मिल जाते हैं तो उनमें ज्येष्ठ पुत्र को भी 'कुंवर' ही लिखा मिलता है; परन्तु वागड़ के लेखों में छोटे कुंवर को भी 'महाकुंअर' लिखा है, जिसके कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

(१) स्वस्ति श्रीचित्रकोटगढ़महादुर्ग महाराजाधिराजमहाराणा श्रीरायमलसुतकुंअरश्रीसांगोजी आदेशात्... ।

[वि० सं० १५६५ के मऊड़ा गांव (मेवाड़) के ताम्रपत्र के फ़ोटो से] ।

.....संवत् १५८३ वर्ष मागसिर सुदि ११ दिने श्रीजैसलमेरु-महादुर्ग राउलश्रीचाचिगदेवपट्टे राउलश्रीदेवकरणपट्टे महाराजाधिराज-राउलश्रीजयतसिंहविजयराज्ये कुमारश्रीलूणकरण..... ।

(जैसलमेर के शांतिनाथ के मंदिर की प्रशस्ति से) ।

पूर्णचंद्र नाहर: जैन-लेख-संग्रह, तृतीय खंड, पृ० ३६ ।

॥ संवत् १६७२ वर्ष वैशाख सुदि ६ दिने सोमवारे श्रीजैसलमेरु-वास्तव्यराउलश्रीकल्याणदासजीविजयराज्ये कुंअरश्रीमनोहरदासजी..... ।

॥ ॐ ॥ संवत् १६७८ फाल्गुण सित ५ दिने श्रीजैसलमेरु-महादुर्गे ॥ महाराजाधिराजमहाराजमहाराउलश्रीकल्याणदासजी विजयि-राज्ये ॥ कुमारश्रीमनोहरदासजी..... ।

(जैसलमेर की दादावाड़ी के स्तंभ के लेख से) ।

पूर्णचंद्र नाहर: जैन लेख-संग्रह, तृतीय खंड, पृ० १२२-२३ ।

(क) डूंगरपुर से अनुमान दो मील दूर सूरपुर गांव के माधवराय के मंदिर में (जिसके निकट डूंगरपुर के राजाओं का पुराना दग्ध-स्थान है) एक लेख वि० सं० १६५० (अमांत) पौष (पूर्णिमांत माघ) वदि ११ (ई० सं० १५६४ ता० ७ जनवरी) का खुदा है, जिसमें महारावल सैंसमल (वि० सं० १६३७-१६६३=ई० सं० १५८०-१६०६) के छोटे पुत्र सूरजमल को 'महाकुंवर' लिखा है'। डूंगरपुर की नौलखा बावड़ी की वि० सं० १६४३ (चैत्रादि १६४४) वैशाख सुदि ५ (ई० सं० १५८७ ता० ३ अप्रैल) की प्रशस्ति में उस (सैंसमल) के दस कुंवरों के नाम हैं । उनमें सूरजमल का नाम नहीं है, परन्तु बड़वे की ख्यात में उसका नाम दिया है, जिससे अनुमान होता है कि उसका जन्म वि० सं० १६४३ (ई० सं० १५८७) के पीछे हुआ होगा ।

(ख) डूंगरपुर के महारावल रामसिंह (वि० सं० १७५६-१७८६=ई० सं० १७०२-१७३०) के दूसरे कुंवर वस्तसिंह का एक ताम्रपत्र और कुछ सनदें हमारे देखने में आई हैं । उन सनदों पर उस (वस्तसिंह) की मुद्रा

सं० १८०३ वर्षे शाके १६६८ प्रवर्त्तमाने मगशिर सुदि २ दिने सोमवारे महाराजराजेश्वरमहाराजाजीश्रीअभयसिंहजी कुंवरश्रीराम-सिंहजी विजयराज्ये..... ।

(बीलाड़ा के जैनमंदिर के लेख से) ।

पूर्णचंद्र नाहर; जैन-लेख-संग्रह, जि० १, पृ० २५० ।

स्वस्ति (?) श्रीराजराजेश्वरमहाराजाश्रीवि[जै]सिंघजी कंवर फतेसिंघ..... । सं० ॥ १८०८ ग माहा वद १..... ।

(फलोदी के गढ़ के लेख से) ।

ज० बंगाल ९० सो०, न्यू सिरीज़, सं० १२ (ई० सं० १६१६), पृ० १०० ।

(१) महाकुंवर श्रीसूरजमलजी पधारीया हता संवत १६५० वर्षे पोस वदि ११ लिखत मुहता रूपसी सदारंग ।

(मूल शिलालेख की छाप से) ।

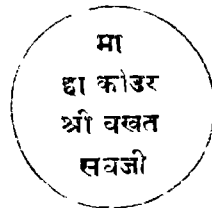
भी लगी हुई है । इन दोनों में तथा सनद पर लगी हुई मुद्रा में उसे 'महा-कुंवर' लिखा है^१ ।

महारावल रामसिंह के उदयसिंह, बल्लसिंह, उम्मेदसिंह और शिव-सिंह नामक चार पुत्र हुए, ऐसा बड़वे की ख्यात से पाया जाता है ।

वागड़ के अतिरिक्त छोटे पुत्र को 'महाकुंवर' (महाकुमार) लिखने का प्रचार मालवे के परमारों में भी था, ऐसा उनके प्राचीन दानपत्रों से पाया जाता है । मालवे के परमार राजा यशोवर्मा के तीन पुत्र—जयवर्मा, अजयवर्मा और लक्ष्मीवर्मा—हुए^२ । लक्ष्मीवर्मा 'महाकुमार' कहलाया^३ । उसका पुत्र

(१) स्वस्त (स्ति) श्रीडुंगरपोर शुभस्थाने माहाकुंवरजी श्री वखत-सेंघजी ।

ओवरी गांव के (आषाढादि) वि० सं० १७७२ (चैत्रादि १७७३, अमांत) ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आषाढ) वदि १० (ई० सं० १७१६ ता० ४ जून) के जोशी सहदेव के नाम के ताम्रपत्र की छाप से ।



॥१॥ माहाकुओर श्रीवखतसेंघजी वचनात गाम भचरडीआ ग्रामे समस्त लोकां जोग्य ।

वि० सं० १७७५ (अमांत) मागशीर्ष (पूर्णिमांत पौष) वदि ७ की सनद से ।

(२) इंडियन ऐंटिकेरी; जि० १६, पृ० ३४८ ।

(३) परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्रीयशोवर्मदेव-पादानुध्यात समस्त प्रशस्तेपेत समधिगत पंचमहाशब्दालंकार विराजमान महा-कुमार श्रीलक्ष्मीवर्मदेवः ॥

(महाकुमार लक्ष्मीवर्मदेव का वि० सं० १२०० का उज्जैन से मिला हुआ ताम्रपत्र) ।

इंडियन ऐंटिकेरी; जि० १६, पृ० ३५२ ।

हरिश्चंद्रवर्मा और पौत्र उदयवर्मा भी 'महाकुमार' कहलाते थे, जैसा कि उनके ताम्रपत्रों से पाया जाता है ।

(ग) नौगावां का वि० सं० १५८४ का लेख, जिसमें जमल (जगमाल) को 'महाकुंवर' लिखा है, एक खेत पर गड़ी हुई सुरह (सुरभि) है, जिसमें मास पक्ष और तिथि नहीं हैं ।

(आषाढादि) वि० सं० १५८३ (चैत्रादि १५८४) चैत्र सुदि १४ (ई० सं० १५२७ ता० १७ मार्च) को महारावल उदयसिंह खानवे के युद्ध में काम आया और जगमाल घायल हुआ, यह निश्चित है । फिर जगमाल (आषाढादि) वि० सं० १५८४ में कुंवर कैसे हो सकता है। इसके अतिरिक्त उसका साधुओं की मंडली में रहना और पृथ्वीराज से विरोध होकर वि० सं० १५८४

.....समस्तप्रशस्तोपेतसमधिगतपञ्चमहाशब्दालंकारविराजमान-
महाकुमारश्रीहरिश्चन्द्रदेवः नीलगिरिमण्डलेऽमडाप्रदप्रतिजागण्यके.....
श्रीविक्रमकालातीत १२३५ पञ्चत्रिंशदधिकद्वादशशतसम्बत्सरान्तः पाति
पौशवदि अमावास्यायां सञ्जातसूर्यपर्वणि चतुर्मुखमार्कण्डेश्वरदेवोपकण्ठे
..... ।

स्वहस्तोऽयं महाकुमारश्रीलक्ष्मीवर्मदेवसुतमहाकुमारश्रीहरिश्चन्द्रदेव-
परमारकुलकमलबन्धोः ॥

(उक्त ताम्रपत्र की नकल से) ।

(१) परमभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमद्यशोवर्मदेवपादानु-
ध्यातपरमभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमज्जयवर्मदेवराज्ये व्यतीते
निजकरकृतकरवालप्रसादावाप्तनिजाधिपत्यसमस्तप्रशस्तोपेतसमधिगतपञ्च-
महाशब्दालंकारविराजमानमहाकुमारश्रीमल्लक्ष्मीवर्मदेवपादानुध्यातसमस्त-
प्रशस्तोपेतसमधिगतपञ्चमहाशब्दालंकारविराजमानमहाकुमारश्रीहरिश्चन्द्रदेव-
सुतश्रीमदुदयवर्मदेवोविजयोदयी ॥ । स्वहस्तोयं महाकुमारश्रीउदय-
वर्मदेवस्य ॥

(उदयवर्मा का भोपाल का वि० सं० १२५६ का ताम्रपत्र) ।

इंडियन एंटिकेरी; जिल्द १६, पृ० २५४ और फोटो ।

में उसका वागड़ पर अधिकार न होना भी निश्चित है। अतएव उक्त लेख के कृत्रिम होने में कोई संदेह नहीं है।

ऊपर लिखी हुई बातों को दृष्टि में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि जगमाल के ज्येष्ठ कुंवर होने के प्रमाण, जो दीवान बांसवाड़ा ने भेजे हैं, सब निर्मूल हैं। बांसवाड़े ही से मिली हुई एक प्राचीन पुस्तक में वहां के डेढ़सौ वर्ष पूर्व तक के राजाओं की वंशावली और समय आदि लिखे हैं। उसमें भी जगमाल को स्पष्टतः उदयसिंह का छोटा पुत्र लिखा है। इसकी पुष्टि उदयपुर राज्य के बड़वा हरिराम के यहां की पुरानी ख्यात से भी होती है, जिसमें जगमाल को ही उदयसिंह का दूसरा पुत्र बतलाया है। उक्त ख्यात में जगमाल से महारावल भवानीसिंह तक की वंशावली दी हुई है, जो उस समय बांसवाड़ा राज्य को मान्य थी, इसलिए उस(भवानीसिंह)ने बड़वा हरिराम के पूर्वज वेशीराम आदि के नाम (आषाढादि) वि० सं० १८८१ (चैत्रादि १८८२) वैशाख सुदि ६ (ई० सं० १८२५ ता० २७ अप्रैल) को परवाना भी कर दिया था, जो हरिराम के पास विद्यमान है।

महारावल उदयसिंह ने अपनी जीवित अवस्था में ही वागड़ का पूर्वी भाग बांसवाड़ा राज्य का दूगर- जगमाल को देकर उसे पृथक् कर दिया था, जिसके पुर से पृथक् होना विषय में विद्वानों के नीचे लिखे अनुसार कथन हैं—

जी० आर० एन्नी मैके का लिखना है—“उदयसिंह ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में वागड़ को दो भागों में बांटकर माही नदी से पश्चिम का भाग ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीराज को और माही से पूर्व का भाग छोटे पुत्र जगमाल को दिया था।”

ई० सं० १८७६ के छुपे हुए राजपूताना गैज़ेटियर में बांसवाड़ा राज्य के प्रसङ्ग में लिखा है—“उदयसिंह के दो पुत्र—बड़ा पृथ्वीराज और छोटा जगमाल—थे। उदयसिंह चित्तोड़ के राणा सांगा के साथ बादशाह बाबर से लड़ने को गया और खानवे की लड़ाई में मारा गया। उसकी मृत्यु के पीछे उसका राज्य उसके दो पुत्रों में विभक्त हुआ, जिनके वंशज वर्तमान दूगर-

(१) एन्नी मैके; दि नोटिज चीफ़्स एण्ड देअर स्टेट्स दूसरा संस्करण, ई० सं० १८७८), भाग दूसरा, पृ० २५ ।

पुर और बांसवाड़ा राज्य के स्वामी हैं। ये विभाग शांतिपूर्वक हुए या बलपूर्वक, यह स्पष्ट नहीं है। जन-श्रुति यह है कि उदयसिंह ने अपने जीतेजी राज्य के दो विभाग कर दिये थे। यह भी कथन है कि जगमाल खानवे की लड़ाई में घायल हुआ था, परन्तु मरा हुआ माना गया और उसके दुरुस्त होकर लौटने पर वह कृत्रिम समझा जाकर उसको अपने प्रदेश पर अधिकार नहीं करने दिया। इसपर वह बांसवाड़ा के उत्तर (जगमेर) की पहाड़ियों में जा रहा और सेना एकत्र कर अपने पिता के देश पर आक्रमण करने लगा। अन्त में धार के राजा की मध्यस्थता में वागड़ के दो विभाग होकर एक पृथ्वीराज व दूसरा जगमाल के लिए रहा तथा माही नदी दोनों राज्यों की सीमा हुई^१।”

प्रसिद्ध विद्वान् डा० हैंडली ने लिखा है—“उदयसिंह ने अपनी जीवित अवस्था में, अपने राज्य को बांटकर माही नदी का पश्चिमी भाग ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीराज को तथा पूर्वी भाग छोटे पुत्र जगमाल को दे दिया था। तब से ही वागड़ में डूंगरपुर और बांसवाड़ा नामक दो रियासतें हुई^२।”

महारावल उदयसिंह ने अपने जीतेजी राज्य के दो विभाग किये यह कथा निर्मूल नहीं है, क्योंकि बांसवाड़ा राज्य के चूँच (छूँछ) गांव के ब्रह्मा के मंदिर में खड़े हुए स्तम्भ के वि० सं० १५७७ कार्तिक सुदि २ (ई० सं० १५२० ता० १३ अक्टोबर) के लेख में जगमाल को ‘महारावल’ लिखा है^३। इससे पाया जाता है कि उक्त संवत् से पहले ही उदयसिंह ने अपने

(१) ‘धार’ से अभिप्राय ‘मांढू’ होना चाहिये ।

(२) राजपूताना गैज़ेटियर के अन्तर्गत बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर, जि० १, पृ० १०४-५ (ई० सं० १८७६ का संस्करण) ।

(३) डा० हैंडली; दि रूलर्स ऑव् इंडिया एण्ड दि चीफ्स ऑव् राजपूताना; पृ० ३६ ।

(४) संवत् १५७७ वरषे (वर्ष) कार्ती सुद (कार्तिक सुदि) २ देने (दिने) महारावलश्रीजगमालवचनात् ।

(मूल लेख की छाप से) ।

रा० ग्यू० अजमेर की ई० सं० १६१७ की रिपोर्ट, पृ० ३ ।

राज्य का पूर्वी हिस्सा, जो इस समय बांसवाड़ा राज्य कहलाता है, जगमाल को दे दिया था। इस कथन की पुष्टि फ़ारसी तबारीख़ 'मिराते सिकंदरी' से भी होती है। उसमें लिखा है—“वागड़ का राजा (उदयसिंह) राणा सांगा (संग्रामसिंह, प्रथम) से मिल गया था, इसलिए हि० सन् १२७ (वि० सं० १५७७=ई० सं० १५२०) में गुजरात के सुलतान मुज़फ़्फ़रशाह (दूसरा) ने उसपर सेना भेजी, जिसने उसकी राजधानी डूंगरपुर को जलाकर खाक कर दिया और उसके देश को बरबाद करना आरंभ किया। फिर वह सेना सागवाड़े होती हुई बांसवाड़े की तरफ़ चली। शुजाउलमुल्क और सफ़्दरखां, मुजाहिदुलमुल्क के साथ हरावल में रहे, जिनके साथ दो सौ सवार थे। जब उन्हें यह सूचना मिली कि बांसवाड़े का राजा दो कोस पर है, तब वे तुरन्त खाना हुए। मुसलमानों को थोड़ी संख्या में देखकर राजपूतों ने उनपर हमला किया। उन (राजपूतों) की संख्या दसगुनी थी तो भी मुसलमानों की विजय हुई।”

‘मिराते सिकंदरी’ के उपर्युक्त अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन से भी स्पष्ट है कि उस समय डूंगरपुर का राजा तो उदयसिंह था और बांसवाड़े का राजा कोई अन्य, जिसका नाम नहीं दिया, परन्तु यह घटना उसी संवत् की है, जिस संवत् का उपर्युक्त चौंच गांव का लेख है और जिसमें जगमाल को महारावल लिखा है। इसलिए उस समय बांसवाड़े का राजा जगमाल ही होना चाहिये अर्थात् उक्त संवत् से पूर्व जगमाल को उदयसिंह ने बांसवाड़े का स्वामी बना दिया था।

अब तक के शोध से ज्ञात होता है कि वि० सं० १५७१ (ई० सं० १५१४) के पीछे किसी समय महारावल उदयसिंह ने अपने राज्य के दो विभागकर माही नदी से पश्चिम का हिस्सा, जिसकी राजधानी डूंगरपुर है, कुंवर पृथ्वीराज के लिए रखी और पूर्वी हिस्सा, जिसकी राजधानी बांसवाड़ा है, जगमाल को दिया। वि० सं० १५७१ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि २ (ई० सं० १५१४ ता० ४ नवम्बर) शनिवार

के नूतनपुर (नौगावां, बांसवाड़ा राज्य) के लेख में उदयसिंह को ही राजा लिखा है^१ और किसी कुंवर का नाम नहीं दिया। इससे निश्चित है कि उस समय तक वागड़ के दो विभाग नहीं हुए थे। वि० सं० १५७५ (अमांत) पौष (पूर्णिमांत माघ) वदि १२ (ई० स० १५१८ ता० २६ दिसम्बर) के सुन्नणपुर गांव (बांसवाड़ा राज्य) के खेत पर गड़ी हुई एक सुरह में महारावल उदयसिंह के साथ 'महाकुंवर' (महाराजकुमार) जगमाल का नाम है^२। इसी प्रकार पश्चिमी-विभाग अर्थात् राजधानी डूंगरपुर के महा-कालेश्वर के मंदिर के (आपाढादि) वि० सं० १५८१ (चैत्रादि १५८२) वैशाख सुदि ५ (ई० स० १५२५ ता० २७ अप्रैल) गुरुवार के लेख में, जो उदयसिंह की मृत्यु से केवल दो वर्ष पूर्व का ही है, महारावल उदयसिंह के साथ कुमार पृथ्वीराज का नाम है^३। उपर्युक्त दोनों लेखों से अनुमान होता है कि वि० सं० १५७५ (ई० स० १५१८) के लगभग महारावल उदयसिंह ने जगमाल को वागड़ का पूर्वी हिस्सा देकर पृथक् कर दिया था।

तदनन्तर जगमाल बांसवाड़े में रहने लगा और अपने पिता की जीवित अवस्था में ही अपने को उस प्रदेश का स्वामी मानने लगा, जैसा कि चींच गांव के लेख और 'मिराते सिकंदरी' से ऊपर बतलाया जा चुका है। अपनी वंशपरंपरा के विरुद्ध महारावल उदयसिंह ने ऐसा क्यों किया, इसका कारण कुछ भी लिखा नहीं मिलता। संभव है कि जगमाल की माता पर अधिक प्रेम होने के कारण उस (उदयसिंह) को ऐसा करना पड़ा

(१) संवत् १५७१ वर्ष कार्तिक वदी (दि) २ शनीं वाग्वरदेशे राजाधिराजराउलश्रीउदयसिंहविजयराज्ये नूतनपुरे..... ।

(बांसवाड़ा राज्य के नौगांवां गांव के जैनमंदिर की प्रशस्ति से) ।

(२) देखो ऊपर पृ० ५४ ।

(३) संवत् १५८१ वर्ष वैशाखमासे शुक्लपक्षे पंचम्यां तिथौ गुरुदिने अथेह वागडदेशे डूंगरपुरशुभस्थाने महाराजाधिराजराउलश्री-उदयसिंहविजयराज्ये कुमारश्रीपृथ्वीराजजी तस्य..... ।

(मूल लेख की छाप से) ।

हो। राजा का किसी राणी पर अधिक प्रेम होने के कारण अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य से वंचित रखकर प्रेमपात्री राणी के कुंवर को छोटा होने पर भी अपने सारे राज्य तक का मालिक बना देने के उदाहरण राजपूताने के इतिहास में भरे पड़े हैं।

वि० सं० १५८४ (ई० सं० १५२७) में खानवे के युद्ध में महारावल उदयसिंह के मारे जाने और जगमाल के घायल होकर लौटने पर पृथ्वीराज ने बांसवाड़े का इलाका जगमाल से छीन लिया, जिसपर बड़ी लड़ाइयां हुई और अन्त में पृथ्वीराज को माही नदी के पूर्व का इलाका पीछा जगमाल को देना पड़ा, जिसका विस्तृत वर्णन आगे के अध्याय में किया जायगा।

चौथा अध्याय

महारावल जगमाल से समरसिंह तक

जगमाल

अपने जीवित काल में महारावल उदयसिंह ने वागड़ का पूर्वी भाग छोटे पुत्र जगमाल को दे दिया था, जिससे उस (उदयसिंह) का ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीराज अप्रसन्न रहता था। जब खानवे के युद्ध में (आषाढादि) वि० सं० १५८३ (चैत्रादि १५८४=ई० सं० १५२७) में उदयसिंह की मृत्यु हो गई तब पृथ्वीराज ने डूंगरपुर की गद्दी पर बैठकर वागड़ के पूर्वी भाग पर भी अधिकार कर लिया। युद्ध में लगे हुए घावों से स्वस्थ होकर जब जगमाल वागड़ में आया तो पृथ्वीराज ने उसको वहां से निकालने के लिए अपने सरदारों को भेजा, जिन्होंने उसको वहां से निकाल दिया। इसपर जगमाल पहाड़ों में जा रहा और कुछ सरदार उससे जा मिले। फलतः पृथ्वीराज और जगमाल में लड़ाई-भगड़ा होने लगा। अन्त में पृथ्वीराज को वागड़ का पूर्वी भाग पीछा जगमाल को देना पड़ा। इस विषय में मुंहणोत नैणसी की ख्यात तथा फ़ारसी तवारीखों में नीचे लिखे हुए वर्णन मिलते हैं—

(१) नैणसी ने लिखा है—“रावल उदयसिंह के पृथ्वीराज और जगमाल दो पुत्र हुए। पिता का देहांत होने पर पृथ्वीराज डूंगरपुर के सिंहासन पर बैठा और जगमाल बागी हो गया। फिर उस (पृथ्वीराज) ने अपने सरदार बागड़िये चौहान मेरा और रावल परबत लोलाड़िये को सेना सहित इसलिए भेजा कि वे जगमाल को राज्य से बाहर निकाल आवें। उन्होंने जाकर उसकी गाड़ियां लूटीं। अपने कई राजपूतों के मारे जाने से जगमाल

पराजित होकर भागा और पहाड़ों में जा रहा। खोई हुई भूमि को पीछी लेकर जब वे दोनों सरदार डूंगरपुर पहुंचे, उस समय उन्होंने यह समझा था कि हम बड़ा काम कर आये हैं, सो हमारी मान-मर्यादा और जागीरों में वृद्धि होगी, परंतु रावल पृथ्वीराज का एक खवास, जो सेना में सम्मिलित था, पहले से घर पहुंच गया और उसने एकान्त में रावल को कहा कि ये लोग मरने-मारने में तो कुछ समझते नहीं। जगमाल ऐसी घात में आ गया था कि मार लिया जाता, परंतु चौहान मेरा व रावल परबत लोलाड़िया ने उसे छोड़ दिया। रावल ने यह झूठी बात सच्ची समझली और जब वे डूंगरपुर आये तो आप महल के भीतर जा बैठा और उनका मुजरा तक स्वीकार न किया। इसपर वे खिन्न होकर घर चले गये तो पीछे से रावल ने अपने विश्वासपात्र मनुष्य को भेजकर उन्हें बहुत उपालंभ दिलाया और कहलाया कि तुम नमकहरामी हो। जगमाल को तुमने जाने दिया, यह बहुत बुरा किया, अब मैं तुमको रखना नहीं चाहता। ठाकुरों ने कहा कि हमने तो तन-मन से सेवा की है, यदि रावलजी उसका मूल्य न समझें तो उनकी इच्छा। फिर उस हजरी ने उनको रावल के भेजे हुए पान के बीड़े (सीख के) दिये, जिनको लेकर वे क्रोधित हो तत्काल ही वहां से चल दिये और सीधे उन पर्वतों में पहुंचे, जहां जगमाल रहता था। जगमाल के डेरे से एक कोस दूर वे ठहर गये और अपने भरोसे के प्रतिष्ठित पुरुषों को जगमाल के पास भेजकर कहलाया कि तुम्हारे दिन फिरे हैं, यदि भूमि लेने की इच्छा हो तो शीघ्र हमसे आकर मिलो। जब जगमाल को उनके कथन पर विश्वास न हुआ तो शपथ-द्वारा उसका संशय निवृत्त कर दिया गया। फिर वह उनके साथ मेरा व परबत के पास गया जहां सब तरह के क्लौल-क्लार हुए। तत्पश्चात् उन सरदारों ने अपने भाई बंधुओं को भी बुला लिया और वे सब मिलकर देश में उपद्रव मचाने लगे। जगह-जगह पर रावल पृथ्वीराज के थानों को मारकर चार-पांच मास में उन्होंने राज के बड़े विभाग को वीरान कर दिया। तब रावल घबराया और उसने अपने मंत्रियों को बुलाकर सलाह ली, तो वे बोले कि हम कुछ नहीं जानते, जिस मनुष्य ने आपसे

बातचीत कर सरदारों को निकलवाया है, उसी से पूछिये । रावल कहने लगा कि जो होता था सो तो हुआ, बिना बिचारे जो काम किया, उसका फल मैंने पाया । अब उचित समझो वैसा करो, मुझसे तो राज्य की रक्षा नहीं हो सकती । इसपर मंत्री लोग मेरा, परबत और जगमाल के पास गये और कहा कि अब आन मिलो, जो तुम कहोगे वही करेंगे । जितनी तुम्हारी इच्छा हो उतनी भूमि जगमाल को दे दी जायगी और तुम्हारी जागीर भी बढ़ा दी जायगी । उन्होंने उत्तर दिया कि अब तो मामला ही दूसरा है । यदि तुमको संधि करना है तो इस शर्त पर हो सकती है कि वागड़ के दो बराबर विभाग कर दिये जावें और दो रावल हों । अन्य किसी भी प्रकार संधि होने की नहीं । इसपर मंत्री रावल पृथ्वीराज के पास गये और सारा हाल कह सुनाया । तब रावल बोला कि क्या करना चाहिये ? मंत्रियों ने कहा, यह बड़ी बात है, आज से पहले ऐसा हुआ नहीं । यह बात केवल हमारे विचारने योग्य नहीं, राज्य के बड़े सरदारों और अन्य विश्वस्त सेवकों से भी इसमें सलाह लीजिये तथा स्वयं आप भी दस पांच दिन विचारिये, ताकि पीछे किसी को उपालम्भ देना न पड़े । मंत्रियों के मतानुसार रावल ने सबको पूछा तो यही उत्तर मिला कि बात काबू से बाहर हो गई, जिस तरह वने परस्पर मेल कर लेना ही उचित है । तब रावल ने अपने प्रधानों को कह दिया कि जितना उचित समझो, उतना जगमाल को देकर संधि कर आओ । मंत्री पीछे मेरा के पास गये और वागड़ के ३५०० गांवों में से आधे गांव जगमाल को देकर मेल कर लिया । उसी समय से वागड़ में दो रावल हो गये और बांसवाड़े के स्वामी की बात ऊंची रही ।”

(२) ‘तारीख फ़िरिश्ता’ में लिखा है—“जब गुजरात के सुलतान बहादुरशाह ने डूंगरपुर और बांसवाड़े की तरफ़ जाकर बहुत लूट-मार मचाई, तब उस प्रदेश का राजा परशुराम (? पृथ्वीराज) लाचार होकर सुलतान की सेवा में हाज़िर हो गया । पृथ्वीराज का भाई जग्गा (जगमाल),

जो पहाड़ों में भागा फिरता था, निराश होकर चित्तोड़ के राणा रत्नसिंह के पास चला गया, ताकि उसके द्वारा अपराध क्षमा कराकर सुलतान की सेवा में उपस्थित हो। बहादुरशाह शिकार खेलता हुआ बांसवाड़े में आकर ठहरा, उस समय राणा सांगा के बेटे रत्नसिंह ने उसके पास वकील भेजकर जग्गा के अपराधों की क्षमा चाही। सुलतान ने उसे स्वीकार कर जग्गा को अपनी सेवा में बुला लिया और वागड़ का तमाम इलाका पृथ्वीराज तथा उसके भाई जग्गा को आधा-आधा बांट दिया। फिर वह (बहादुरशाह) कुछ दिन शिकार खेलकर मालवे की तरफ चला गया।”

(३) ‘मिराते सिकंदरी’ में लिखा है—“हि० स० १३७ (वि० सं० १५८७=ई० स० १५३०) में गुजरात के सुलतान बहादुरशाह ने वागड़ पर चढ़ाई की और खानपुरे गांव से, जो माहिंद्री (माही) नदी के किनारे पर है, उसने खानेआज़म आसफ़खां और खुदावंदखां को सेना के साथ आगे रवाना किया। एक बड़ी सेना सहित ता० २० मोहर्रम (आश्विन वदि ७=ता० १३ सितम्बर) को वह स्वयं खंभात पहुंचा और वहां से नावों के द्वारा दीव बंदर को गया। उसने वहां का प्रबंध मलिक तोगाई को सौंपकर वहां से प्रस्थान किया और ता० ५ सफ़र (आश्विन सुदि ७=ता० २८ सितम्बर) को वह पीछा खंभात पहुंचा। वहां से वह महमूदाबाद गया, जहां फ़तहखां, कुतुबखां और उमरखां लोदी ने उसका स्वागत किया। फिर वह वहां से लौटकर मोड़ासे में अपनी सेना से आ मिला और वागड़ की तरफ़ रवाना हुआ। उधर डूंगरपुर का राजा पृथ्वीराज सीतल गांव में सुलतान के पास आकर उपस्थित हुआ। वहां से सुलतान बांसवाड़े की तरफ़ जाने लगा तो करची (करजी) के घाटे में चित्तोड़ के राणा रत्नसिंह के वकील डूंगरसी और जाजराय ने उपस्थित होकर नज़राना किया। फिर सुलतान वागड़ का

(१) धिगज़; फ़िरिस्ता, जि० ४, पृ० ११२-१३। ज़रनल ऑव् दि एशियाटिक सोसाइटी ऑव् बंगाल (ई० स० १८१७), जि० ६६, भाग १, पृ० १६५-६८।

आधा हिस्सा पृथ्वीराज को और आधा जगमाल को दिलाकर वहां से लौटा' ।”

(४) ‘तबक़ाते अकबरी’ का कथन है—“सुलतान की उस (वागड़ की) चढ़ाई का कारण सरहदी छोटे-छोटे राजाओं को सज़ा देकर दुरुस्ती पर लाने का था । जहां-जहां वह विजय करता गया, वहां-वहां उसने अपने धाने बिठा दिये । जब डूंगरपुर के राजा ने देखा कि अब बचाव की कोई आशा नहीं है, तब अधीनता स्वीकार कर सुलह कर ली । राजा का भाई जग्गा (जगमाल) कई विश्वासपात्र आदमियों सहित भागकर पहले तो पहाड़ों में जा रहा, फिर चित्तोड़ के राणा रत्नसिंह की शरण गया । राणा की सिफ़ारिश से सुलतान ने वागड़ का आधा राज्य जग्गा को दे दिया’ ।”

(५) ‘तारीख़े अलफ़ी’ का बयान है—“राणा ने अपने वकील सुलतान (बहादुरशाह) के पास भेजे, जिसके तीन कारण थे । पहला—सुलतान महमूद (मालवे का) राणा से बिगड़ा हुआ था; दूसरा—मालवे का बहु-तसा इलाक़ा, जो राणा ने दबा लिया था, उसे वह पीछा लेना चाहता था; तीसरा—राजपूत सिलहदी से, जो राणा से जा मिला था, वह (सुलतान) नाराज़ था; महमूद मालवी का इरादा था कि सिवास के हाकिम सिकंदरखां और सिलहदी दोनों को मरवा डालें, इसलिए वे दोनों भागकर राणा रत्नसिंह की शरण में जा रहे थे । सिकंदरखां तथा सिलहदी का पुत्र भूपत बहादुरशाह के पास गये और सिलहदी को लेकर राणा रत्नसिंह भी सुलतान (बहादुरशाह) से जाकर मिला । राणा तो पीछा लौट गया, परंतु सिकंदरखां, सिलहदी, ईडर का राजा दलपतराय, राणा के वकील और डूंगरपुर का राजा उस समय सुलतान के साथ रहे, जब कि उसने मांडू फ़तह किया’ ।”

(१) बेले; हिस्ट्री ऑफ़ गुजरात (मिराते सिकंदरी), पृ० ३४६-४८ । जरनल ऑफ़ दि एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल (ई० स० १८६७), भाग १, पृ० १६६-६८ ।

(२) बेले; हिस्ट्री ऑफ़ गुजरात, पृ० ३४७, टिप्पण ३ ।

(३) वही, पृ० ३४८, टिप्पण १ ।

उपर्युक्त पुस्तकों में से नैणसी की ख्यात में ही पुनः वागड़ राज्य को बांटने का सविस्तर उल्लेख है। फ़ारसी तवारीखों में जगमाल के पहाड़ों में भाग जाने और मेवाड़ के महाराणा रत्नसिंह की सिफ़ारिश से गुजरात के सुलतान बहादुरशाह-द्वारा वागड़ का बंटवारा होने का उल्लेख है। इससे अनुमान होता है कि जब जगमाल को पृथ्वीराज ने बांसवाड़े में न रहने दिया और उसकी भूमि छीन ली, तब वह पहाड़ों में जाकर रहने लगा। जिन सरदारों ने पृथ्वीराज की आज्ञा से जगमाल को एक बार निकाल दिया था, उनका पृथ्वीराज ने अपमान किया, जिसपर वे पृथ्वीराज से नाराज़ होकर जगमाल से जा मिले। फिर उन्होंने कितने एक और सरदारों को अपने शामिल कर लिया, जिससे जगमाल का पक्ष प्रबल हो गया और उन्होंने पृथ्वीराज को ऐसा तङ्क किया कि उसे जगमाल को पहले के अनुसार वागड़ का आधा राज्य देने के लिए विवश होना पड़ा। इसी बीच गुजरात का सुलतान बहादुरशाह भी वागड़ में आ पहुँचा। तब पृथ्वीराज उसके पास हाज़िर होकर अपना पक्ष प्रबल करने का यत्न करने लगा। उस समय महाराणा रत्नसिंह ने इन दोनों भाइयों के बीच का झगड़ा मिटा देने के लिए अपने वकील भेजकर सुलतान बहादुरशाह से सिफ़ारिश की। बात तो पहले तय हो ही चुकी थी, तदनुसार बहादुरशाह ने वागड़ का आधा-आधा राज्य, फिर वि० सं० १५८७ (ई० सं० १५३०) में पृथ्वीराज और जगमाल के बीच बंटवाकर इस झगड़े का अंत किया। पृथ्वीराज और जगमाल के बीच यह विरोध अनुमान दो वर्ष से अधिक समय तक रहना पाया जाता है। वागड़ के पीछे दो विभाग होने पर पृथ्वीराज अपनी पुरानी राजधानी डूंगरपुर में रहा और जगमाल बांसवाड़े में जाकर रहने लगा। पहाड़ों में रहते समय उसने वहां एक गढ़ भी बनाया था, जो जगमेर कहलाता है। उसके खंडहर अब तक विद्यमान हैं। वहां एक लेख हनुमान की मूर्ति के पीछे एक स्तम्भ पर खुदा है, जिसमें वि० सं० १५८५ (ई० सं० १५२८) में महारावल जगमाल के वहां रहने और उस स्थान को बनवाने का उल्लेख है। यह लेख पुराना नहीं, किन्तु

उस स्थान का महत्त्व बतलाने के लिए नया खुदाकर खड़ा किया गया है^१ ।

वि० सं० १५८८ (ई० सं० १५३१) में वृंदी के हाड़ा राव सूरजमल को मारकर उसके हाथ से महाराणा रत्नसिंह भी मारा गया और मेवाड़ के वणवीर को निकालकर चित्तोड़ सिंहासन पर उसका छोटा भाई विक्रमादित्य बैठा, दिलाने में महारावल का महा- जो चित्तोड़ जैसे विशाल-राज्य के शासन के लिए राणा उदयसिंह की मेना में बिल्कुल अयोग्य था । उसके समय में गुजरात के सम्मिलित होना सुलतान बहादुरशाह की दो बार चित्तोड़ पर

चढ़ाईयां हुईं । दूसरी चढ़ाई में बहुत समय तक भीषण युद्ध होने के बाद दुर्ग राजपूतों के हाथ से निकलकर मुसलमानों के अधिकार में चला गया । उन्हीं दिनों दिल्ली के मुगल बादशाह हुमायूँ ने बहादुरशाह पर चढ़ाई कर दी, जिसमें बहादुरशाह की हार हुई । चित्तोड़ पर अधिकार करने का यह अच्छा अवसर देखकर राजपूतों ने मुसलमानों को चित्तोड़ से निकाल दिया और दुर्ग पर पीछा अधिकार कर लिया । इतने पर भी विक्रमादित्य ने अपना आचरण न सुधारा और सरदारों का अपमान करने लगा, जिससे वे सब नाराज़ होकर अपने अपने ठिकानों को चले गये । फिर महाराणा संग्रामसिंह (सांगा) के बड़े भाई पृथ्वीराज के दासी-पुत्र वणवीर (जो विक्रमादित्य का मुसाहिब था) ने उस (विक्रमादित्य) को एक दिन रात्रि के समय तलवार से मार डाला । यही नहीं, उसने महाराणा संग्रामसिंह के वंश को बिल्कुल ही नष्ट करने के विचार से चित्तोड़ के सिंहासन के हकदार उदयसिंह (जो विक्रमादित्य का छोटा भाई था) को मारकर निष्कण्टक राज्य करना चाहा, परन्तु धाय पन्ना ने वणवीर के पहुंचने से पूर्व ही सावधानी-पूर्वक उसको वहां से दुर्ग के बाहर निकाल दिया । राज-मद में डूबा हुआ वणवीर उदयसिंह के महल में पहुंचा और उसने धाय से

(१) रायां राय महाराजाधिराज महारावलजी श्रीजगमालसिंहजी ए आ जगमेरु ऊपर निवास करी आ देश सर करयो संवत् १५८५ ।

(मूल लेख की छाप से) ।

उस(उदयसिंह)के लिए पूछा। धाय ने अपने सोये हुए पुत्र की तरफ, जो उदयसिंह के समान वय का ही था, इशारा किया, जिसको मारकर वह चलता बना। अपने पुत्र की मृत्यु से पन्ना तनिक विचलित न हुई और शीघ्र ही अपने पुत्र का मृत-शरीर लेकर संकेत के अनुसार दुर्ग के बाहर चली गई। अपने पुत्र का दाह-संस्कार कर वह उदयसिंह को लेकर देवलिया और डूंगरपुर होती हुई कुंभलगढ़ पहुंची, जहां उदयसिंह को उसने किलेदार आशाशाह देपुरा (माहेश्वरी महाजन) को सौंप दिया^१।

तदनन्तर उदयसिंह के सही सलामत निकल जाने का समाचार मिलने पर मेवाड़ के बड़े-बड़े सरदार कुंभलगढ़ पहुंचे और वहीं वि० सं० १५६४ (ई० सं० १५३७) में उन्होंने उदयसिंह को गद्दी पर बैठाकर अपना स्वामी माना। इसके पीछे उन्होंने चित्तोड़ से वणवीर को निकालने के लिए चढ़ाई की तैयारी की तथा महारावल जगमाल को भी अपनी सेना लेकर आने के लिए लिखा। इसपर महारावल जगमाल बांसवाड़े से अपने राजपूतों को लेकर मेवाड़ की सेना में सम्मिलित हुआ और वणवीर को मेवाड़ से निकालने में सदा महाराणा की सेना के साथ रहा^२।

ख्यातों में महारावल जगमाल का मृत्यु-संवत् नहीं मिलता, परन्तु उसके उत्तराधिकारी जयसिंह का एक ख्यात में वि० सं० १५६६ (ई० सं० १५३९) के मार्गशीर्ष में व दूसरी में वि० सं० १५६८ (ई० सं० १५४१) में बांसवाड़े का राजा होना लिखा मिलता है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि उस(जगमाल)का सबसे अन्तिम लेख वि० सं० १६०१ भाद्रपद सुदि ६ (ई० सं० १५४४ ता० २४ अगस्त) रविवार का मिला है, जिससे यह निश्चित है कि वह उक्त संवत् तक विद्यमान था और उसके बाद किसी समय उसका देहान्त हुआ होगा।

(१) वीरविनोद; भाग दूसरा, पृ० ६१। मेरा; राजपूताने का इतिहास (प्रथम संस्करण) जिल्द २, पृ० ७१३।

(२) वीरविनोद; भाग दूसरा, पृ० ६२।

उसके किशनसिंह (कानड़दे) और जयसिंह' नामक दो पुत्र हुए, जिनमें से जयसिंह उस(जगमाल)के पीछे बांसवाड़े का स्वामी हुआ ।

महारावल जगमाल के समय के वि० सं० १५७५-१६०१ (ई० सं० १५१८-१५४४) तक के लेख मिले हैं^२, जिनमें से कुछ में संवत् आदि नहीं हैं

महारावल के समय
के शिलालेख

और कितनेक में संवत् संशययुक्त हैं । हमने केवल उन लेखों को ग्रहण किया है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक माने जा सकते हैं । उसके समय के मिलनेवाले वि० सं०

(१) बांसवाड़ा राज्य के वड़वे की ख्यात में जयसिंह को महारावल जगमाल का ज्येष्ठ पुत्र लिखा है और किशनसिंह (कानड़दे) को छोटा, किन्तु मुंहणोत नैणसी की ख्यात (हस्तलिखित; पत्र २१, पृष्ठ २) में जगमाल के पुत्र किशनसिंह तथा उस- (किशनसिंह)के पुत्र के लिए लिखा है कि उनको राज्य नहीं मिला । इसका यही आशय हो सकता है कि किशनसिंह, जगमाल का ज्येष्ठ पुत्र था । यदि वह छोटा पुत्र होता तो नैणसी को उपर्युक्त वाक्य लिखने की आवश्यकता ही क्या थी ? राजगद्दी प्रायः ज्येष्ठ पुत्र को ही मिलती है और छोटे पुत्र सामंत बनकर निर्वाह करते हैं। नैणसी की अनेक वंशों की विस्तृत वंशावलियों में छोटे पुत्रों के लिए अन्यत्र कहीं ऐसा नहीं लिखा कि वे गद्दी पर नहीं बैठे । किशनसिंह और उसके पुत्र को राज्य न मिलने का कारण यही अनुमान किया जा सकता है कि जगमाल का प्रेम अपनी राणी लाछवाई पर अधिक रहा होगा, जिससे उसने उसके पुत्र जयसिंह को अपना उत्तराधिकारी बनाया हो ।

(२) बांसवाड़ा राज्य से आई हुई ताम्रपत्रों की नकलों में महारावल जगमाल से लगाकर पृथ्वीसिंह तक 'श्रीराम' शब्द (राजा का निज हस्ताक्षित) लिखा हुआ मिलता है और राणियों के ताम्रपत्रों में 'स्वस्तिक चिह्न' । ये 'श्रीराम' और 'स्वस्तिक चिह्न,' ताम्रपत्र के ऊपरी भाग में खाली जगह के बीचोबीच खोदे जाते थे । महारावल उदयसिंह के समय के वि० सं० १७६६ (ई० सं० १७३६) के पीछे के ताम्रपत्रों में 'श्रीराम' शब्द न होकर 'सही' शब्द मिलता है । ऐसी स्थिति में ख्यात का ऊपर पृ० ४७ में लिखा हुआ कथन कि महारावल जगमाल के समय से ही वहां से दी जानेवाली सनदों में 'दृष्ट सही दृष्ट' लिखा जाने लगा, मिथ्या मालूम होता है । ऐसे ही उक्त ख्यात का यह कथन कि डुंगरपुर के लेखों में वागड़ का बंटवारा होने के बाद 'खरी' शब्द लिखा जाने लगा, कल्पित है; क्योंकि वहां से प्राप्त महारावल पृथ्वीराज से लगाकर पिछले ताम्रपत्रों में प्रायः 'सही' शब्द ही लिखा मिलता है ।

१५७५^१, १५७७^२ और १५८४^३ (ई० स० १५१८, १५२० और १५२७) के तीन शिलालेखों का वर्णन पहले हो चुका है। शेष दो शिलालेखों का, जो ठीक हैं, नीचे उल्लेख किया जाता है—

(१) चौंच गांव के ब्रह्मा की मूर्ति के चरणों का (आषाढादि) वि० सं० १५६[३] (चैत्रादि १५६४, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि १ (ई० स० १५३७ ता० २६ अप्रैल) गुरुवार का लेख^४ ।

(२) छोटी पाड़ी गांव के समीप कानोर माता के मस्तक के पास का वि० सं० १६०१ भाद्रपद सुदि ६ (ई० स० १५४४ ता० २४ अगस्त) रविवार का लेख^५ ।

महारावल जगमाल के समय का और कोई वृत्तान्त उपलब्ध नहीं होता। ख्यात में लिखा है कि उसने बांसवाड़ा में भीलेश्वर महादेव का मन्दिर और फूल-महल बनवाये। उसकी राणी लाछकुंवरी ने नीलकंठ महादेव के पंचायतन-मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया^६ तथा तेजपुर गांव के पास एक तालाब भी बनवाया था, जो बाई का तालाब कहलाता है ।

(१) देखो ऊपर पृ० ५४ ।

(२) वही; पृ० ६० ।

(३) वही; पृ० ५८ ।

(४) स्वस्ति श्रीनृपविक्रमार्कसमयातीत संवत् १५६[३]वर्षे वैशाखवदि १ गुरौ अनुराधानक्षत्रे शिवनामयोगे वैयागड़देशे राजश्री-रावलजगमालजीविजयराज्ये..... ।

(मूल लेख से) ।

(५) संवत् १६०१ वर्षे भाद्रवासुदि ६ रवे.....श्रीजगमालजी..... ।

(मूल लेख की छाप से) ।

(६) यह शिवालय राजधानी बांसवाड़ा से कुछ मील दूर विठ्ठलदेव के समीप बना हुआ है। वहां महारावल जगमाल की राणी लाछबाई-द्वारा उक्त मंदिर के

जयसिंह

महारावल जगमाल का देहांत होने पर उसका छोटा पुत्र जयसिंह, जो उस(जगमाल)की राठोड़ राणी लाछुबाई से उत्पन्न हुआ था, वि० सं० १६०१ (ई० सं० १५४४) के पश्चात् किसी वर्ष राजगद्दी पर बैठा ।

उस(जयसिंह)ने थोड़े ही वर्ष राज्य किया । शिलालेखों और ख्यातों में उसके सम्बन्ध का कुछ भी वृत्तान्त नहीं मिलता । उसके उत्तराधिकारी प्रतापसिंह का सबसे पहला लेख वि० सं० १६०७ (ई० सं० १५५०) का मिला है^१ और वि० सं० १६१३ (ई० सं० १५५६) के लगभग महाराणा उदयसिंह के साथ महारावल प्रतापसिंह का हाजीरों से युद्ध के लिए जाने का उल्लेख मिलता है^२; अतः वि० सं० १६०७ (ई० सं० १५५०) के पूर्व किसी समय जयसिंह की मृत्यु हुई होगी^३ ।

जीर्णोद्धार होने का एक लेख स्तंभ पर खुदा है, जो नीचे लिखे अनुसार है, परन्तु उसमें संवत् और मिति नहीं है—

...महाराउलश्रीजगमालदेसीघजीग्रहे भारजा[भार्या] बाई श्रीलाश-
नामनी[म्नी] अत्र पंचप्रासाद उभ्रते..... ।

(मूल लेख से) ।

रा० ग्यू० अजमेर की ई० १६३० की रिपोर्ट; पृष्ठ ४, संख्या ८ ।

(१) संवत् १६०७ वरपे(पे) आषाढसुदि ११ रविवासरे रावलजी प्रतापजीआदेसात्..... ।

(बांसवाड़ा राज्य के पारोदरा गांव के लेख की नकल से) ।

(२) कविराजा बांकीदास; ऐतिहासिक बातें, संख्या १२६६ । मुंशी देवीप्रसाद; महाराणा उदयसिंहजी का जीवनचरित्र, पृ० १३ ।

(३) बांसवाड़ा से मिली हुई एक हस्तलिखित पुस्तक में बांसवाड़ा के राजाओं की वंशावली में जयसिंह का वि० सं० १५६८ तक राज्य करना लिखा है, जो ठीक नहीं है; क्योंकि वि० सं० १६०१ (ई० सं० १५४४ तक) के तो महारावल जगमाल के शिलालेख मिल चुके हैं ।

प्रतापसिंह

महारावल प्रतापसिंह अपने पिता की मृत्यु होने पर वि० सं० १६०७ (ई० सं० १५५०) के पूर्व किसी समय बांसवाड़े का स्वामी हुआ ।

वि० सं० १६६० (ई० सं० १६३३) के आसपास गंगाराम कवि ने देवलिया (प्रतापगढ़) के स्वामी रावल हरिसिंह की प्रशंसा में 'हरिभूषण-काव्य' बनाया, जिसमें लिखा है—“आसकरण (डूंगरपुर का स्वामी) और बांसवाड़ा के स्वामी प्रतापसिंह के बीच युद्ध होने पर देवगिरि (देवलिया) का राजा बीका बांसवाड़ावालों की सहायतार्थ गया । माही नदी के तट पर युद्ध हुआ, जिसमें चौहान वीर भालों से लड़े । उस युद्ध में बीका ने काठियावाड़ी घोड़े पर बैठकर शत्रु-दल का संहार किया और अन्त में रावल आसकरण परास्त होकर लौटा तथा प्रतापसिंह बांसवाड़े पर सुखपूर्वक राज्य करने लगा ।”

- (१) अमूदथ च्चत्रकुलाभिमानी वीकाभिधेयः किल तस्य सूनुः ।
यत्खड्गधाराऽभिहतोऽरिवर्गो महीतटे खेलति भूतवर्गैः ॥ १ ॥
पुराऽसकर्णः किलरावलोऽभूत्प्रतापसिंहेन युयोध यत्र ।
वंशालयाधीश्वरधर्मबन्धुः समागतो देवगिरेर्महीशः ॥ ३ ॥
महाहवं तत्र तयोर्वभूव महीतटेपु प्रसभं समेषु ।
परस्परं प्रासफलैः प्रजघ्नुश्चौहानभूपा रणगीतगीताः ॥ ४ ॥
समुच्छलत्कच्छतुरङ्गमस्थः स्फुरत्स्फुलिङ्गावलिखड्गघातैः ।
त्रुट्यन्तनुत्रान् लसदश्ववारान् रणेऽरिवीरानकरोत्सर्वाकः ॥ ५ ॥
भिन्नाः पतन्तः करवालिकाभिः समुच्छलद्रक्तचलत्प्रवाहाः ।
चौहान-बेहोल (?) गणा रणेऽस्मिन्नन्योन्यमेपां घटितं प्रचक्रुः ॥ ७ ॥
तीरेषु मद्याः पतिताः कबन्धा भीमा विरेजुः करवालहस्ताः ।
सुखंशयानाः किलनीरमध्याद्विनिर्गतामदगुरबालकाः किम् ॥ ९ ॥
रणस्थलीर्भूपतिरासकर्णस्तत्याज वीकाभुजदण्डभीरुः ।
चलतिकरीटः स्फुरदश्ववारश्चौहानवर्गोऽभिमुखी बभूव ॥ १४ ॥

बांसवाड़ा और डूंगरपुर के बीच यह लड़ाई क्यों हुई, इस विषय में उक्त दोनों राज्यों की ख्यातों में कुछ भी उल्लेख नहीं है। ऊपर बतलाया गया है कि महारावल जगमाल के दो पुत्र—किशनसिंह और जयसिंह—थे, जिनमें से जयसिंह बांसवाड़े की गद्दी पर बैठ गया और किशनसिंह या उसका पुत्र कल्याणमल राज्य के हक से वंचित रहा। ऐसी दशा में संभव है कि डूंगरपुर के स्वामी आसकरण ने, बांसवाड़ा के वास्तविक हकदार को राज्य दिलाने के लिए, प्रतापसिंह पर चढ़ाई की हो।

शेरशाहसूर का मुलाम हाजीखां, एक सेनापति था और अकबर के गद्दी बैठने के समय उसका मेवात (अलवर इलाका) पर अधिकार था।

हाजीखा की महायथार्थ यहाँ से उसे निकालने के लिए बादशाह अकबर ने महाराणा उदयसिंह के साथ पीरमुहम्मद सरवानी (नासिरुलमुल्क) को उस-महारावल का जाना पर भेजा। उसके पहुंचने के पहिले ही हाजीखां भागकर अजमेर चला गया। राव मालदेव ने उसे लूटने के लिए पृथ्वी-राज (जैतावत) की अध्यक्षता में सेना भेजी। अकेले हाजीखां की उसका सामना करने की सामर्थ्य न थी इसलिए उसने महाराणा उदयसिंह के पास

जघ्नुः शितैः प्रासफलैः सखेटाश्चौहानभूपारणरङ्गमत्ताः ।

समुल्लसद्वाहुकरालखड्गाः सुशोणनेत्रा वृतवर्मदेहाः ॥१५॥

सन्त्रासयन्यः किलदिग्गजालीर्दम्भामकानां ध्वनिभिः प्रवृद्धैः ।

चौहानभूपैश्चतुरङ्गसैन्यो वीकानरेन्द्रोऽपि युयोध भूयः ॥१६॥

क्षेत्रं प्रतापाय ददौ प्रतप्तो वीक्राभुजादण्डलसत्प्रतापैः ।

इत्युक्तवान् सन्निहितः स्ववर्गो मद्याः परं पारमुपाससाद ॥२०॥

महान् प्रतापस्य जयस्तदाऽऽसीदभूत्सुरेभ्यो जयपुष्पवृष्टिः ।

सुखं स वंशालयमध्यवर्ती निर्विघ्नमन्तःपुरमन्दिरेषु ॥२१॥

हरिभूषणकाव्य; सर्ग ६ ।

हरिभूषण काव्य के कर्ता ने इस युद्ध के प्रसङ्ग में चौहानों का, जो बर्णन किया है, वह बागड़ के चौहानों की वीरता का सूचक है।

(१) अकबरनामा—इलियद्; हिस्ट्री ऑव् इंडिया, जि० ६, पृ० २१-२ ।

अपने दूत भेजकर कहलाया कि मालदेव हमसे लड़ना चाहता है, आप हमारी सहायता करें। महाराणा ने उसको सहायता देना स्वीकार किया और अपनी सेना सहित उसकी सहायतार्थ रवाना हुआ। इस अवसर पर अन्य सामंतों एवं मित्र राजाओं के अतिरिक्त बांसवाड़े का रावल प्रतापसिंह भी उस सेना के साथ था। हाजीखान ने बीकानेर के राव कल्याणमल

(१) बांकीदास की 'ऐतिहासिक बातें' (संख्या १२६६) तथा मुंशी देवीप्रसाद के 'महाराणा उदयसिंह का जीवनचरित्र' (पृ० ६६) में पीछे से हाजीखान के विरुद्ध भेजी गई महाराणा की सेना में इन राजाओं आदि का शामिल रहना लिखा है। मुंहणोत नैणसी ने इनके नाम न देकर केवल दस देशपति लिख दिया है; पर यह ठीक नहीं प्रतीत होता। ये सब मालदेव की सेना की चढ़ाई होने पर हाजीखान की सहायतार्थ भेजी हुई महाराणा उदयसिंह की सेना के साथ होने चाहियें, जिसमें बीकानेर के राव कल्याणमल की सेना भी थी। दयालदास की रयात में इस घटना का समय वि० सं० १६१३ फाल्गुन वदि ६ (ई० स० १५५७ ता० २४ जनवरी) दिया है (जि० २, पृ० २३)। दूसरी ख्यातों आदि में लगभग यही समय महाराणा की हाजीखान एवं मालदेव के साथ की लड़ाई का दिया है। मुंहणोत नैणसी समय के विषय में केवल इतना लिखता है कि राणा ने हरमाड़े के मुकाम पर पड़ाण हाजीखान से युद्ध किया, जिसका वर्णन दधिवाड़िया खींवराज ने वि० सं० १७१४ के वैशाख (ई० स० १६५७ मार्च) में लिख भेजा (नैणसी की ख्यात; जि० १, पृ० ५८)। ख्यातों में इस विषय में मतभेद होने के कारण यह स्थिर करना कठिन है कि कौनसी चढ़ाई किस समय हुई, पर यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि दोनों लड़ाइयां थोड़े समय के अन्तर से ही हुई होंगी।

महाराणा का दस देशपतियों के साथ रहकर हाजीखान तथा मालदेव की सेना से लड़ना और हारना, जैसा कि मुंहणोत नैणसी की ख्यात में लिखा है, असम्भव कल्पना प्रतीत होती है। यदि महाराणा के हारने की बात ठीक हो, तो यही मानना पड़ेगा कि दस देशपति महाराणा के साथ हाजीखान की सहायतार्थ गये थे, पर उस समय जोधपुर की सेना के बिना लड़े लौट जाने से लड़ाई नहीं हुई। कर्नल पाउलेट ने भी महाराणा की हाजीखान के साथ की लड़ाई में राव कल्याणमल का उस (महाराणा) के साथ शामिल रहना नहीं लिखा है (बीकानेर गैज़ेटियर; पृ० २१-२)।

हमने राजपूताना के इतिहास, जि० २, पृ० ७२० में राव कल्याणमल आदि का पिछली लड़ाई में महाराणा के साथ रहना लिख दिया है, पर बाद के शोध से

से भी इस चढ़ाई के अवसर पर सहायता मंगवाई, जिसपर उसने कई सरदारों के साथ उसकी सहायतार्थ सेना भेजी^१। इस बड़े सम्मिलित कटक को देखकर जोधपुर के सरदारों ने पृथ्वीराज से कहा कि राव मालदेव के अच्छे-अच्छे सरदार पहले की लड़ाइयों में मारे जा चुके हैं, यदि हम भी मारे गये तो राव का बल बहुत घट जायगा। इतनी बड़ी सेना का सामना करना कठिन है, इसलिए लौट जाना ही उचित होगा। इसपर मालदेव की सेना बिना लड़े ही लौट गई^२।

आंबेर का कुंवर मानसिंह कछुवाहा हल्दी-घाटी की लड़ाई में मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह को अधीन न कर सका और शाही सेना की बड़ी दुर्दशा हुई, जिसपर नाराज होकर बादशाह अक-
 महारावल का बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार करना
 बर ने मानसिंह और आसफ़खां की ड्योढ़ी बन्द कर दी। शाही सेना के लौट जाने पर महाराणा, ईडर के राव नारायणदास तथा सिरौही के राव सुरताण आदि को मिलाकर अर्बली पहाड़ के दोनों तरफ़ का शाही प्रदेश लूटने लगा और गुजरात के शाही थानों पर भी उसने हमला करना शुरू कर दिया। गुजरात पर जमते हुए महाराणा के आतङ्क को दृष्टाने के लिए बादशाह ने सोचा कि जो काम मैं स्वयं कर सकता हूँ, वह मेरे नौकरों से नहीं हो सकता। यह

यही अनुमान दृढ़ होता है कि वे हाजीख़ां की सहायतार्थ महाराणा के जाने पर उसके साथ गये होंगे, जैसा कि ऊपर लिखा गया है।

(१) दयालदास की ख्यात; जिल्द २, पृ० २३ । पाउलेट; बीकानेर गैज़ेटियर; पृ० २१ ।

बीकानेर के राव कल्याणमल के पिता राव जैतसी को मारवाड़ के राव मालदेव ने मारा था, जिससे उसका मालदेव से वैर था। शेरशाह ने उसको पीछा बीकानेर का राज्य दिलवाया था, जिससे वह (कल्याणमल) उसका अनुग्रहीत था। ऐसी दशा में उसका शेरशाह के गुलाम की सहायतार्थ ही सेना भेजना अधिक संभव है।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पृ० २३ । मुंशी देवीप्रसाद; राव कल्याणमलजी का जीवनचरित्र; पृ० ६८-६ । पाउलेट; बीकानेर गैज़ेटियर, पृ० २१ । मुंहणोत नैणसी की ख्यात; जिल्द १, पृ० ५८ ।

विचारकर वह स्वयं वि० सं० १६३३ कार्तिक वदि ६ (ई० स० १५७६ ता० १३ अक्टोबर) को अजमेर से गोगुंदा को खाना हुआ । इसपर महाराणा पहले से ही पहाड़ों में चला गया । बादशाह उधर गोगुंदा आदि स्थानों में छः मास तक रहा, परंतु महाराणा को अधीन न कर सका । जहां-जहां शाही फौजें गईं, वहां उनकी हानि ही हुई । अंत में बादशाह बांसवाड़े की तरफ चला गया, जहां का स्वामी रावल प्रतापसिंह और डूंगरपुर का स्वामी आसकरण बादशाह की प्रबलता के कारण उसके पास उपस्थित हो गये और उसकी अधीनता स्वीकार करली^१ ।

स्वतंत्रता के प्रेमी महाराणा प्रतापसिंह को अपने ही कुल के डूंगर-पुर और बांसवाड़ा के राजाओं का अकबर के अधीन हो जाना असह्य हुआ और वि० सं० १६३५ (ई० स० १५७८) में उसने मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना उन दोनों राज्यों पर दबाव डालने के लिए सेना भेजी । सोम नदी पर लड़ाई हुई, जिसमें मेवाड़ की सेना का मुखिया रावत भाण सारंगदेवोत (कानोड़वालों का पूर्वज) बुरी तरह से घायल हुआ और दोनों तरफ के कई राजपूत मारे गये^२ ।

मारवाड़ के राव मालदेव ने अपनी भाली राणी स्वरूपदे पर अधिक प्रेम होने से उसके पुत्र चंद्रसेन को, जो तीसरा कुंवर था, अपना उत्तराधिकारी बनाया, परंतु उस (चंद्रसेन) ने महारावल प्रतापसिंह का जोध-पुर के राव चंद्रसेन को राज्य पाने पर अपने बुरे व्यवहार से कुछ सर-अपने यहां रखना दारों को अप्रसन्न कर दिया, जिससे मारवाड़ में गृहकलह का सूत्रपात हो गया और मालदेव के पुत्र—राम, उदयसिंह तथा रायमल—चंद्रसेन से लड़ने लगे । मालदेव का ज्येष्ठ पुत्र राम, चंद्रसेन से हारकर बादशाह अकबर के पास पहुंचा और वहां से सैनिक सहायता

(१) बेवरिज; अकबरनामे का अंग्रेजी अनुवाद; जि० २, पृ० २७७ । मुंशी देवीप्रसाद; अकबरनामा; पृ० ८६ ।

(२) महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास; वीरविनोद; प्रकरण चौथा, पृ० १५६ । मेरा; राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ७६१ ।

लेकर आया। वि० सं० १६२१ (ई० स० १५६४) में शाही-सेना ने चंद्रसेन से जोधपुर खाली करा लिया^१, जिससे वह भाद्राजूण में जाकर रहने लगा।

जब बादशाह अकबर वि० सं० १६२७ (ई० स० १५७०) में अजमेर से नागोर गया, उस समय जोधपुर राज्य के हक्रदार राम और उदय-सिंह बादशाह के पास पहुंचे। चंद्रसेन भी राज्य पाने की आशा से अपने पुत्र रायसिंह सहित बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ और कई दिनों तक उसकी सेवा में रहा, किन्तु जब उसे पुनः जोधपुर मिलने की आशा दिखाई न पड़ी, तब वह अपने पुत्र रायसिंह को बादशाह की सेवा में छोड़कर भाद्राजूण को लौट गया। फिर शाही सेना-द्वारा भाद्राजूण से निकाले जाने पर वह सिवाने के किले में जा रहा, परन्तु वहां भी शाही-सेना ने उसका पीछा न छोड़ा। सिवाना के छूटने पर विवश होकर वह पिपलूंद के पहाड़ों में जाकर रहने लगा। फिर डेढ़ वर्ष तक सिरौही के इलाक़े में रहने के बाद वह वहां से अपने बहनोई आसकरण के पास डूंगरपुर में जा रहा। उसके डूंगरपुर में रहते समय जब शाही-सेना डूंगरपुर के निकट के मेवाड़ के पहाड़ी प्रदेश में पहुंच गई, तब वह वहां से बांसवाड़े चला गया। महारावल प्रतापसिंह ने उसके निर्वाह के लिए तीन चार गांव देकर उसको अपने यहां रक्खा^२। वहां कुछ समय तक रहकर फिर वह मेवाड़ के भोमट इलाक़े में जा रहा।

महारावल प्रतापसिंह के समय के वि० सं० १६०७^३ से १६३२^४

महारावल के समय के
शिलालेख

(ई० स० १५५०-१५७५) तक के शिलालेख मिले हैं,
जिनसे उसका समय निश्चित करने के अतिरिक्त

कोई ऐतिहासिक बात नहीं पाई जाती।

(१) बेवरिज; अकबरनामे का अंग्रेज़ी अनुवाद; जि० २, पृ० ३०५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात (इस्तिलखित); जिल्द १, पृ० १२०।

(३) देखो ऊपर पृ० ७४।

(४) संवत् १६३२ वर्षे मागसरसुद (वर्षे मार्गशीर्षसुदि)

१४ द(दि)ने राउलप्रतापराज्ये.....।

(बांसवाड़ा राज्य के हटाउवा गांव के लेख की नक़ल से)।

ख्यात में महारावल प्रतापसिंह का देहांत वि० सं० १६३० में होना लिखा है, किन्तु वि० सं० १६३२ (ई० स० १५७५) तक के तो उसके शिलालेख मिल चुके हैं अतः वि० सं० १६३० में उसकी मृत्यु होने का कथन विश्वसनीय नहीं है। इसके अतिरिक्त अबुलफ़ज़ल के 'अकबरनामे' से उसका वि० सं० १६३३ (ई० स० १५७६) तक विद्यमान होना स्पष्ट है तथा मेवाड़ के इतिहास 'वीरविनोद' और 'जोधपुर राज्य की ख्यात' से भी उसका वि० सं० १६३५ (ई० स० १५७८) के आस पास तक जीवित रहना पाया जाता है। बांसवाड़ा से एक प्राचीन पुस्तक, वि० सं० १६३६ पौष सुदि ५ (ई० स० १५७९ ता० २२ दिसंबर) भौमवार की महारावल प्रतापसिंह के समय की लिखी हुई, मेरे देखने में आई है, जिससे निश्चित है कि वि० सं० १६३६ (ई० स० १५७९) तक वह विद्यमान था। उसके केवल एक पुत्र मानसिंह ही था। ख्यात में लिखा है कि महारावल प्रतापसिंह ने सरा, खांधू, भावुद्या और संध्य राज्यों की भूमि दवा ली थी। उसने प्रतापपुरा (परतापुर) गांव बसाया और खांधू के डोडिये सरदार को नमकहराम हो जाने के कारण मारकर उसका पट्टा ज़प्त कर लिया। उसका नवाब बज़ीरखाँ^२ से युद्ध हुआ था, जिसमें बज़ीरखाँ मारा गया।

मानसिंह

महारावल प्रतापसिंह के पीछे उसका पुत्र मानसिंह बांसवाड़े की गद्दी पर बैठा^३। उसके सम्बन्ध के लिए चौद्दानों के यहाँ से नाटियल आये और

(१) संवत् १६३६ वर्षे पौषमासे शुक्लपक्षे पंचम्यां तिथौ भौम-वासरे अघेह श्रीवागडदेशे महाराउलश्रीप्रतापजीवि जयराज्ये..... ।

(मूल पुस्तक के अंतिम भाग से) ।

(२) नवाब बज़ीरखाँ कहां का था, ख्यात से स्पष्ट नहीं होता। यदि वह कथन ठीक हो तो यही संभव हो सकता है कि वह गुजरात का कोई अक्रसर रहा हो।

(३) मुंहणोत नैखसी की ख्यात; भाग १, पृ० ८६ ।

जब वह उनके यहां विवाह करने गया उस समय खांधू के भीलों ने राज्य में उपद्रव शुरू किया। इसपर महारावल के प्रधान ने थोड़े से आदमियों के साथ जाकर भीलों से लड़ाई की पर उसमें उसकी विजय न हुई। भीलों ने प्रधान की प्रतिष्ठा बिगाड़कर उसका घोड़ा छीन लिया और उसे वहां से निकाल दिया। विवाह करके लौटने पर जब महारावल ने यह समाचार सुना तो मारे क्रोध के उसका खून उबलने लगा। अभी विवाह के कंकन भी न खुलने पाये थे, पर वह उसी तरह खांधू पर चढ़ दौड़ा। वहां पहुंचकर उसने उस गांव को घेर लिया, कई भीलों को मारा और वहां के मुखिया (गमेती) को बन्दी बनाकर उसके पांवों में बेड़ी डाल वह अपने साथ ले चला। वहां से दस कोस दूर एक स्थान पर पहुंचकर वह (महारावल), उस- (भील) को धमकाने लगा। भील लज्जाशील था। उसने समझ लिया कि महारावल मेरी प्रतिष्ठा बिगाड़ेगा और गढ़ में पहुंचते ही मुझको तुरी तरह मारेगा। अतएव जब डेरा-डंडा उठ रहा था, उस समय अवसर पाकर उपर्युक्त गमेती (भील) ने चुपके से किसी की तलवार उठा ली और पीछे से जाकर महारावल पर प्रहार किया, जिससे उसकी वही मृत्यु हो गई। उस समय महारावल के साथ चौहान मान' (मेतवाना का) और रावत

नैणसी ने मानसिंह का महारावल प्रतापसिंह की ख्वास पद्मा के उदर से उत्पन्न होना और प्रतापसिंह के कोई संतान न होने से मानसिंह में अच्छी योग्यता होने के कारण सरदारों का उसको गद्दी पर बिठाना लिखा है, जो ठीक नहीं है। बड़वे की ख्यात से ज्ञात होता है कि मानसिंह, प्रतापसिंह की राठोड़ राणी गुमानकुंवरी के उदर से उत्पन्न हुआ था। यदि वह प्रतापसिंह का अनौरस पुत्र होता तो चौहान जैसे कुलीन क्षत्रिय उसके साथ अपनी कन्या का विवाह कदापि न करते।

(१) चौहान मानसिंह सांवलदासोत, चागादिया चौहान बाला के पुत्र डूंगरसी का प्रपौत्र था। डूंगरसी का एक पुत्र लालसिंह और लालसिंह के दो बेटे सांवलदास तथा वीरभाण थे। वीरभाण के दो पुत्र मानसिंह और सूजा (सूरजमल) हुए (नैणसी की ख्यात; प्रथम भाग, पृ० १७०), जिनमें से मानसिंह सांवलदास का उत्तराधिकारी हुआ होगा, इसी से नैणसी ने अपनी ख्यात में एक स्थान पर (भाग १, पृष्ठ ६०) उस(मानसिंह)को सांवलदासोत लिखा है। मानसिंह के वंशधरों का

सूरजमल जैतमालोत' विद्यमान थे, जिन्होंने उस गमेती को मार डाला^२।

महारावल मानसिंह की वि० सं० १६४० (ई० सं० १५८३) में मृत्यु होने का उल्लेख मिलता है, जो संभव हो सकता है, क्योंकि उसके पश्चात् बांसवाड़े की गद्दी पर बैठनेवाले महारावल उग्रसेन का पहला शिलालेख वि० सं० १६४६ पौष सुदि १५ (ई० सं० १५९० ता० १० जनवरी) शनिवार का मिला है^३।

उग्रसेन (अमरसेन)

नैणसी लिखता है—“महारावल मानसिंह निःसंतान था, इसलिए अक्षर पर पाकर मान (मानसिंह) चौहान बांसवाड़े का स्वामी बन बैठा। चौहान मानसिंह का उपद्रव तब डूंगरपुर के स्वामी सैसमल ने उस (मानसिंह) करना और उग्रसेन का उसको को कहलाया कि तू राज का मालिक होनेवाला बांसवाड़े से निकालना कौन है ? परन्तु मान ने उसपर कुछ भी ध्यान न

बांसवाड़ा राज्य में मुख्य ठिकाना भेतवाला है और सूजा के वंशधरों का मुख्य ठिकाना बनकोड़ा है, जो डूंगरपुर राज्य में है।

(१) रावत सूरजमल जैतमालोत, मारवाड़ के राठोड़ों की चांपावत शाखा का सरदार था। मारवाड़ के राव रणमल का एक पुत्र चांपा था, जिसके नाम से उसके वंशज चांपावत कहलाये। चांपा का पुत्र भैरूदास और उसका जैसा था। जैसा के चार पुत्र—मांडण, जगमाल, गोविंददास और जेतमाल—हुए। उनमें से जेतमाल का पुत्र सूरजमल हुआ। संभव है कि सूरजमल या उसका कोई पूर्वोधिकारी वागड़ में चला गया हो, जहां उसने बांसवाड़ा राज्य से जागीर पाई हो।

(२) बांसवाड़ा के राजाओं की एक प्राचीन वंशावली में लिखा है कि महारावल मानसिंह ने वि० सं० १६४० तक राज्य किया और उसको हटाउवा के महादेव के मंदिर में चौहानों ने मारा, परन्तु नैणसी की ख्यात में, जो अधिक पुरानी है, मानसिंह की मृत्यु खांदू के भीलों के मुखिया के हाथ से होना लिखा है, जो विश्वसनीय है।

(३) महारावल श्रीत्राग्रसेनजी आदेसात् (शात्) संवत् १६४६ वरषे (वर्षे) पोस (पौष) सु (शु) दि १५ शनी ।

(बांसवाड़ा राज्य के अमरपुरा गांव के लेख की छाप से) ।

दिया, जिससे क्रुद्ध हो महारावल (सैसमल) ने उसपर चढ़ाई कर दी। दोनों में युद्ध हुआ, परंतु विजय चौहानों की हुई। जब महाराणा प्रतापसिंह ने सुना कि चौहान मानसिंह बांसवाड़ा राज्य का स्वामी हो गया है, तो उसने अपने सरदार सीसोदिया रावत रामसिंह^१ (खंगारोत) और रत्नसिंह^१ (कांधलोत) को चार हजार सवारों की सेना सहित बांसवाड़े पर बिदा किया। उनसे चौहान मानसिंह की लड़ाई हुई। अंत में रावत रामसिंह मारा गया और महाराणा की सेना लौट गई। मानसिंह इस विजय से निःशंक हो गया, परंतु उसको वागड़ के सब चौहानों ने मिलकर कहा कि तेरी बात रह गई, चौहान बांसवाड़े के स्वामी कभी नहीं हो सकते, अपने तो राज्य के 'भड़-किंवाड़' (रक्षक) हैं, इसलिए उचित यही है कि जगमाल के वंशधरों में से किसी राजकुमार को गद्दी पर बिठावें। तब उसने कल्याणमल^३ के पुत्र अग्रसेन को उसके ननिहाल से बुलाकर बांसवाड़े का राजा बना दिया^४। आधे

(१) सीसोदिया रामसिंह (रायसिंह, खंगारोत), मेवाड़ के सुप्रसिद्ध रावत चूड़ा के पुत्र कांधल के बेटे रत्नसिंह का प्रपौत्र था। रत्नसिंह का खंगार और खंगार का कृष्णदास हुआ, ऐसा सलूबर ठिकाने की वंशावली से प्रकट है।

(२) चूड़ावत शाखा का रावत रत्नसिंह कांधलोत, मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (सांगा) के साथ वि० सं० १५८४ (ई० स० १५२७) में बाबर बादशाह के मुकामले में लड़कर खानवे में काम आया। अतएव महाराणा प्रतापसिंह का इस रत्नसिंह कांधलोत को सेना देकर बांसवाड़े पर भेजना कदापि संभव नहीं हो सकता। नैयाली ने अपनी ख्यात (भाग १, पृ० ३४) में रावत चूड़ा लाखावत की वंशावली दी है, जिससे प्रकट है कि रावत खंगार का एक पुत्र प्रतापसिंह था, जो बांसवाड़े में काम आया। प्रतापसिंह खंगारोत, महाराणा प्रतापसिंह (प्रथम) का समकालीन था, इसलिए उक्त महाराणा का चूड़ावत प्रतापसिंह खंगारोत को, चौहान मानसिंह को बांसवाड़े से निकालने के लिए भेजना संभव हो सकता है।

(३) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात में लिखा है कि कल्याणसिंह का दूसरा पुत्र चंदनसिंह था, जिसके वंशज कुवाणिया के सरदार हैं। उस (कल्याणसिंह) के तीसरे पुत्र सुंदरसिंह के वंशज बसी के सरदार हैं।

(४) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात में महारावल मानसिंह के पीछे कामड़वे का वि० सं० १६३५ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई० स० १५७९) को महारावल होना

महलों में उग्रसेन रहता और आधे में मानसिंह। इसी प्रकार राज्य की आधी आय भी मानसिंह लेता रहा, जिससे रावल उग्रसेन की आज्ञा सारे राज्य में नहीं चलती थी।

“चौहान मानसिंह किसी को कुछ नहीं समझता और बहुत ही अनीति करने लगा। इससे रावल उग्रसेन मन ही मन में कुढ़ता, परंतु उसका कुछ बस नहीं चलता था। जोधपुर के राव चंद्रसेन के पुत्र आसकरण का विवाह बांसवाड़े हुआ था, इससे आसकरण की मृत्यु हो जाने के बाद उसकी दूसरी विधवा राणी हाड़ी आसकरण की पत्नी से मिलने आई तो उस(हाड़ी) पर चौहान मानसिंह बुरी दृष्टि डालने लगा, क्योंकि हाड़ी बड़ी सुंदर और किशोर वय की थी, परंतु वह जैसी रूपवती थी, वैसी ही शीलवती भी। इसलिए जब उसको मानसिंह की नीयत का हाल ज्ञात हुआ, तब उसने अपनी धाय को भेजकर कहलाया कि तूने रावल के घर का नाश किया सो तो किया, परन्तु मेरी तरफ कभी दृष्टि मत डालना और वह सतर्क रहने लगी। मानसिंह को तो मन्मथ ने अन्धा कर रक्खा था, जिससे मौक़ा पाकर वह उस(हाड़ी) के निवास-गृह में घुस गया। उस समय जब हाड़ी ने देखा कि मेरे सतीत्व की रक्षा करनेवाला कोई नहीं है, तो वह तत्काल कटार खाकर मर गई।

और उसके बाद कल्याणसिंह का वि० सं० १६४० आषाढ वदि ५ (ई० सं० १५८३) को गद्दी बैठना एवं वि० सं० १६५० कार्तिक वदि १० (ई० सं० १५९३) को उग्रसेन का बांसवाड़े का स्वामी होना लिखा है, किन्तु उग्रसेन के उपर्युक्त वि० सं० १६४६ पौष सुदि १५ (ई० सं० १५९० ता० १० जनवरी) के शिलालेख से ख्यात का यह कथन कपोलकल्पित ठहरता है।

बांसवाड़े के राजाओं की प्राचीन वंशावली में किशनसिंह के पौत्र और कल्याणमल के पुत्र उग्रसेन को मानसिंह का उत्तराधिकारी बतलाया है, जो ठीक है। उसकी पुष्टि नैणसी की ख्यात से भी होती है (नैणसी की ख्यात; भाग १, पृ० ८९)। उपर्युक्त वंशावली में यह भी उल्लेख है कि महारावल मानसिंह की मृत्यु के पीछे साढ़े तीन वर्ष तक चौहान मान ने राज्य भोगा। अनन्तर उग्रसेन राजा हुआ। इससे स्पष्ट है कि वि० सं० १६४३ के आस पास उग्रसेन बांसवाड़े का स्वामी हुआ होगा।

“रावल उग्रसेन के सरदारों में चांपावत राठोड़ रावल सूरजमल (जैतमालोत) बड़ा सरदार था, जिसकी १००० नौ हजार वार्षिक की जागीर थी। जब उसने इस प्रकार राठोड़ आसकरण की स्त्री हाड़ी के प्राण त्यागने की बात सुनी तो मन में दुखी होकर उग्रसेन से कहा कि तुम हाथ में हथियार पकड़ते हो, फिर तुम्हारे घर में यह क्या उपद्रव मच रहा है ? उग्रसेन ने कहा कि क्या किया जावे। सब जानते हैं, देखते हैं, परन्तु जोर कुछ भी नहीं चलता और न कोई दाव लगता है। इसपर सूरजमल ने कहा कि अब तो अपना बल बढ़ाकर हिम्मत के साथ उसको यहां से निकालेंगे। फिर उग्रसेन से उसने सब बात पक्की कर चोली माहेश्वर के राठोड़ केशोदास^१ भीमोत को अपना सहायक बनाकर उसके साथ उग्रसेन की छोटी बहिन का विवाह करना निश्चय किया। इधर नियत समय पर रावल उग्रसेन और सूरजमल सुसज्जित हो गये तथा उसी दिन केशवदास ने अपने १५०० योद्धाओं सहित आकर गांव की सीमा पर नक़ारा बजाया। मानसिंह को इस विवाह की कुछ भी खबर नहीं थी, इसलिए उसने नक़ारे की आवाज़ सुनते ही अपने आदमी को उग्रसेन के पास भेजा। उसने जब रावल के साथियों को सजे-सजाये तैयार देखा तो मानसिंह के पास पहुंचकर कहा कि आप पर चूक होनेवाली है। इसपर भयभीत हो मानसिंह गढ़ की खिड़की में से कूदकर भागा। उग्रसेन के राजपूतों ने उसका पीछा किया, जिसमें उसके कई आदमी मारे गये^२, परन्तु वह बच गया। उसका माल असबाब महारावल के हाथ लगा और बांसवाड़े पर महारावल का पूर्ण अधिकार हो गया। उस (महारावल) ने इस सेवा के उपलक्ष्य में सूरजमल को २५००० हजार रुपये वार्षिक आय की जागीर दी।

(१) राठोड़ केशोदास भीमोत, मारवाड़ के राठोड़ राव जोधा के पुत्र वरसिंह का वंशधर था, जिसके वंशजों के अधिकार में मालवे में आबुआ राज्य है।

(२) मुंहणोत नैणसी की ख्यात; भाग १, पृ० १२।

“इसपर मानसिंह बादशाह अकबर के पास पहुँचा और वहाँ विपुल द्रव्य खर्चकर बांसवाड़े का फ़रमान अपने नाम लिखाकर शाही सेना के मानसिंह का शाही दरबार में साथ लौटा। तब महारावल उग्रसेन पहाड़ों में चला जाकर बादशाह से बासवाड़े का फ़रमान प्राप्त करना गया और सूरजमल अपनी जागीर में जा रहा। एक दिन दोपहर के समय अकस्मात् महारावल के सरदारों ने भीलवण के थाने पर आक्रमण किया, जिसमें उस (मानसिंह) के ८० कुटुम्बी मारे गये। जब यह सम्वाद मानसिंह के पास बांसवाड़े पहुँचा तो शाही सेनानायक के साथ घटनास्थल पर पहुँचकर उसने खेत संभाला। वहाँ उसने सब अपने ही आदमी मरे हुए पाये। इसपर शाही सेनाध्यक्ष ने कहा—‘तू नमकहरामी हुआ, जिसकी यह सज़ा तुझे मिली है।’ फिर वह सेनाध्यक्ष अपनी सेना सहित लौट गया।” इससे मानसिंह का बल टूट गया और वह बांसवाड़ा छोड़ पीछा बादशाह के पास पहुँचा। तब रावल उग्रसेन ने पहाड़ों से आकर वहाँ पर पीछा अपना अधिकार कर लिया।

“मानसिंह के पुनः शाही दरबार में जाने पर रावल उग्रसेन और सूरजमल भी बादशाह के पास गये, परन्तु द्रव्य-बल से मानसिंह ने शाही महारावल का चौहान मानसिंह कर्मचारियों को अपनी ओर कर लिया था, जिससे को राठोड़ सूरजमल के रावल उग्रसेन की बात वहाँ पर किसी ने न सुनी। दारा मरवाना तब सूरजमल ने रावल से कहा कि आप बांसवाड़े जावें और ब्राह्मणों से जो कर वहाँ लिया जाता है, उसे छोड़ दें। मैं यहीं रहता हूँ, यदि हो सका तो मानसिंह को मारकर आऊंगा। निदान उग्रसेन बांसवाड़े गया और सूरजमल वहीं रहा।” फिर सूरजमल ने अपने आदमी गांगा गोड़ को मानसिंह की घात में लगाया। वि० सं० १६५८ (ई० सं० १६०१)

(१) मुंहयोट नैणसी की ख्यात; भाग १, पृ० ६२। नैणसी ने इस घटना का वि० सं० १६५१ (ई० सं० १५९४) में होना लिखा है (भाग १, पृ० १७०)।

(२) वही; पृ० ६२।

में एक दिन बुरहानपुर^१ में सूरजमल ठाकुरसी कल्लावत^२ के साथ वह मान के डेरे पर गया, जहां पहुंचते ही उसने उसको मार डाला^३। “मानसिंह ने भी मरते-मरते ठाकुरसी के पेसी लात मारी कि वह भी वहीं मर गया”।^४

फिर बादशाह अकबर ने उग्रसेन को सज़ा देने के लिए अपने राज्य के अड़तालीसवें^५ वर्ष, ई० स० १६०३ (वि० सं० १६६०) में मिर्ज़ा शाहख़

(१) फ़ारसी तवारीखों से ज्ञात होना है कि इन दिनों बादशाह अकबर दक्षिण के सुलतानों को अपनी अधीनता में लाने के कार्य में व्यग्र था। पहले उसने अपने शाहज़ादे मुराद को वहां भेजा (जो वही मर गया)। फिर वह स्वयं वहां पहुंचा और आसीरगढ़ का ज़िला विजय होने के समय दक्षिण में विद्यमान था। ऐसी अवस्था में मानसिंह का वि० सं० १६५८ (ई० स० १६०१) में बुरहानपुर में शाही-शिविर के साथ रहते समय सूरजमल के हाथ से मारे जाने का नैणसी का कथन ठीक जान पड़ता है।

(२) ठाकुरसी कल्लावत, राव जोधा के पुत्र वरसिंह के बेटे खेतसी का पौत्र था। जब अकबर बादशाह के सेनाध्यक्ष मिर्ज़ा शर्कुद्दीन ने मेड़ते पर अधिकार करने के लिए वि० सं० १६१६ (ई० स० १५६२) में चढ़ाई की, उस समय सातलियावास के युद्ध में ठाकुरसी घायल हुआ, जिसको राठोड़ जयमल मेड़तिया उठवाकर ले गया। मेड़ता लूटने पर वह (ठाकुरसी) बांसवाड़े में जाकर रावल उग्रसेन का नौकर हुआ था।

(३) मुहम्मद नैणसी की ख्यात; भाग १, पृ० ६२।

(४) कविराजा बांकीदास; ऐतिहासिक बातें; संख्या ७६५, १००२ और १५४६।

(आषाढादि) वि० सं० १६४८ (चैत्रादि १६४६) वैशाख सुदि ७ (ई० स० १५६२ ता० ८ अप्रैल) शनिवार के घाटोदि (घांटशाय) गांव के अजितनाथ के जैन मंदिर की प्रशस्ति में रावल उग्रसेन और चौहान मानसिंह दोनों का बांसवाड़े पर राज्य करना लिखा है—

.....घांटशीयनगरे राजाधिराजराउलश्रीअग्रसेनचहुआण
श्रीमानजीराज्यप्रवर्त्तमाने.....।

(मूल लेख की छाप से)।

(५) एच० बेवरिज; अकबरनामे का अंग्रेज़ी अनुवाद, जि० ३, पृ० १२३२। इलियट्: हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया (इनायतुल्ला के ‘तक़मीले अकबरनामे’ का अंग्रेज़ी अनुवाद), जि० ६; पृ० १०६-१०। जोधपुर निवासी प्रासिद्ध इतिहासवेत्ता मुंशी देवीप्रसाद ने

बादशाह का मिर्जा को सेना देकर बांसवाड़े पर रवाना किया। उग्रसेन शाहरख को सेना देकर कुछ समय तक लड़ने के पश्चात् पहाड़ों में जा रहा, बांसवाड़े पर भेजना जिससे बांसवाड़े पर शाही सेना का अधिकार हो गया। महारावल अपने सरदारों को लेकर मालवे में लूटमार करने लगा। इसपर मिर्जा को बांसवाड़ा छोड़कर मालवे को जाना पड़ा। ज्योंही मिर्जा मालवे में पहुँचा, त्योंही महारावल ने अपने मुल्क पर फिर अधिकार कर लिया^१।

बांसवाड़े की ख्यात में लिखा है कि माही नदी पर डूंगरपुर के स्वामी महारावल कर्मसिंह और उग्रसेन के बीच युद्ध हुआ, जिसमें बांसवाड़े की डूंगरपुर के स्वामी कर्मसिंह विजय हुई। डूंगरपुर राज्य की ख्यात में यद्यपि इस के साथ महारावल उग्रसेन युद्ध का वर्णन नहीं है, तो भी कर्मसिंह के उत्तराधिकारी पुंजराज के समय की (आषाढादि) वि० सं० १६७६ (चैत्रादि सं० १६८०) वैशाख सुदि ६ (ई० सं० १६२३ ता० २५ अप्रैल) शुक्रवार की डूंगरपुर के गोवर्धननाथ के मंदिर की प्रशस्ति से प्रकट है कि कर्मसिंह ने माही नदी के तट पर युद्ध कर पूर्ण पराक्रम प्रदर्शित किया था^२। नैणसी ने अपनी ख्यात में लिखा है कि रावल कर्मसी और उग्रसेन के बीच की लड़ाई में चौहान वीरभाण काम आया^३।

अपने 'अकबरनामे' में इस घटना का बादशाह अकबर के पचासवें वर्ष में होना लिखा है, जो ठीक नहीं है।

(१) एच० बेवरिज; अकबरनामे का अंग्रेजी अनुवाद, जि० ३, पृ० १३३२। इक़ियट्; हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया (इनायतुल्ला का 'तकमिले अकबरनामा') जि० ६, पृ० १०३-१०।

(२) तदात्मजः सागरधीरचेताः सुकर्मसिंहेत्यभिधानयुक्तः।

जघान यो वैरिगणं महान्तं महीतटे शक्रसमानवीर्यः ॥६४॥

(मूल प्रशस्ति से)।

(३) सुंदर्योत नैणसी की ख्यात; भाग १, पृ० १७०।

यह युद्ध क्यों और कब हुआ, इस विषय में उक्त दोनों राज्यों की ख्यातों से कुछ भी ज्ञात नहीं होता, परन्तु झुंगरपुर के महारावल कर्मसिंह ने वि० सं० १६६३-१६६६ (ई० सं० १६०६-१६०९) तक राज्य किया, अतएव यह युद्ध इन दोनों संवतों (वि० सं० १६६३-१६६६=ई० सं० १६०६-१६०९) के बीच किसी समय होना चाहिये । बांसवाड़ा राज्य से मिली हुई एक प्राचीन पुस्तक में इस युद्ध का वि० सं० १६६५ (ई० सं० १६०८) में होना लिखा है, जो ठीक मालूम होता है ।

महारावल उग्रसेन के वि० सं० १६४६-१६७० (ई० सं० १५९०-१६१३) तक के तीन शिलालेख और दो ताम्रपत्र मिले हैं^१ । उसके पौत्र महारावल समरसिंह का सबसे पहला लेख वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१५) का मिला है, जिससे ज्ञात होता है कि महारावल उग्रसेन का वि० सं० १६७० (ई० सं० १६१३) में देहांत हुआ ।

यद्यपि उग्रसेन के राज्य के प्रारंभ काल में चौहान मानसिंह का उपद्रव रहा, तो भी उस (मानसिंह) के मारे जाने के पश्चात् उग्रसेन ने अपनी सत्ता दृढ़ कर ली और शाही सेना की चढ़ाइयां होने पर भी वह काबू में न आया, जिसका मुख्य कारण यही ज्ञात होता है कि इन्हीं दिनों बादशाह अकबर का देहांत हो गया और उस (अकबर) के उत्तराधिकारी जहांगीर का ध्यान मुख्यतया मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह (प्रथम) को विजय करने में ही लगा रहा, जिससे इस ओर वह ध्यान न दे सका ।

(१)—उपर्युक्त लेखों का विवरण इस प्रकार है—

[क] वि० सं० १६४६ पौष सुदि १५ (ई० सं० १५९० ता० १० जनवरी) शनिवार का अमरपुरा गांव का लेख ।

[ख] वि० सं० १६५० पौष सुदि ७ (ई० सं० १५९३ ता० २० दिसम्बर) का कुंवर के जातकर्म के अवसर पर गठड़ (गरड़ा) गांव दान देने का ताम्रपत्र ।

उदयभाण

वि० सं० १६७० (ई० स० १६१३) में महारावल उदयभाण अपने पिता का उत्तराधिकारी हुआ, परन्तु छः मास के पश्चात् उसका देहांत हो गया ।

बांसवाड़ा राज्य के बड़बे की ख्यात में उग्रसेन की मृत्यु होने पर (आपाढादि) वि० सं० १६६६ (चैत्रादि १६७०) वैशाख सुदि १० (ई० स० १६१३ ता० १६ अप्रैल) को उदयभाण का राजा होना लिखा है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि महारावल उग्रसेन के समय का सबसे अंतिम लेख वि० सं० १६७० कार्तिक सुदि १२ (ई० स० १६१३ ता० १५ अक्टोबर) का मिल चुका है, जिससे स्पष्ट है कि उस समय तक तो वह जीवित था । उग्रसेन के पौत्र महारावल समरासिंह का वि० सं० १६७१ फाल्गुन सुदि ५ (ई० स० १६१५ ता० २२ फरवरी) बुधवार का पहला लेख मिला है,

[ग] वि० सं० १६६६ (अमांत) फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि ३ (ई० स० १६१० ता० २ मार्च) शुक्रवार का लोहारिया गांव का लेख ।

[घ] (आपाढादि) वि० सं० १६६८ (चैत्रादि १६६६, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि ७ (ई० स० १६१२ ता० १२ मई) का ठीकरिया गांव में दो हल भूमि दान करने का ताअपत्र ।

[ङ] वि० सं० १६७० कार्तिक सुदि १२ (ई० स० १६१३ ता० १५ अक्टोबर) का गांगी (गांगरी) गांव के हनुमान की मूर्ति की चरण-चौकी का लेख ।

(१) संवत् (त) १६७० वर्षे कारतक (कार्तिक) सु (शु) दि १२ शुक्रे रावल अग्रसेनजी

[गांगी (गांगरी) गांव के हनुमान की मूर्ति की चरणचौकी के लेख की छाप से] ।

(२) मा (म) हारावला (ल) श्रीसमरसीजी संवत् १६७१ वरषे (र्षे) मास फागण (फाल्गुन) सुदी ५ दिने बुधवासेरे भुअसा ग्रामे

(भुआसा गांव के लेख की प्रतिलिपि से) ।

जिससे उक्त संवत् में समरसिंह का बांसवाड़े का स्वामी होना निश्चित है। ऐसी स्थिति में उदयभाण का राज्यारंभ वि० सं० १६७० (ई० सं० १६१३) के कार्तिक महीने के बाद ही माना जा सकता है।

एक पुरानी पुस्तक में लिखा है कि उदयभाण ने केवल छः मास राज्य किया। इसकी पुष्टि समरसिंह के वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१४) के लेख के मिलजाने से भली भाँति हो जाती है। ऐसी स्थिति में उदयभाण का देहांत वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१४) में मानना युक्तिसंगत है।

समरसिंह (समरसी)

महारावल समरसिंह, जिसको ख्यातों में समरसी भी लिखा है, वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१४) में बांसवाड़ा राज्य महारावल की गर्दनशानी का स्वामी हुआ^१।

वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१४) में मेवाड़ के महागणा अमरसिंह से संधि हो जाने पर जब उसका कुंवर कर्णसिंह शाही दरबार में गया, तब बादशाह जहांगीर ने मेवाड़ से नूट्टे हुए इलाक़े गिर बहाल करने के अतिरिक्त हूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ आदि बाहरी इलाक़ों का भी क्रमशः उस- (कर्णसिंह) के नाम कर दिया, परन्तु बांसवाड़ावाले शाही दरबार से अपना संबंध स्थिर रखना चाहते थे, इसलिए जब बादशाह (जहांगीर) मालवे की तरफ़ हि० सं० १०२६ (वि० सं० १६७४=ई० सं० १६१७) में गया तो मांडू के मुक़ाम पर महारावल समरसिंह ने आवाढ सुदि ३ (ता० २५ जून) को उपस्थित हो बादशाह को तीस हजार रुपये, तीन हाथी, एक जड़ाऊ पानदान और एक जड़ाऊ कमरपट्टा भेंट किया^२।

(१) एक ख्यात में गद्दी बैठने के समय महारावल समरसिंह की आयु बाईं वर्ष की होना लिखा है।

(२) मुंशी देवीप्रसाद; जहांगीरनामा, पृ० २६६। एच० बेवरिज; तुजुके जहांगीरी का अंग्रेज़ी अनुवाद, जिल्द १, पृ० ३७६।

वि० सं० १६८४ (ई० सं० १६२७) में बादशाह जहांगीर का देहात होने पर शाहज़ादा खुर्रम शाहजहाँ नाम धारणकर तख़्तनशीन हुआ । उसने अपनी गद्दीनशीनी के आरंभ में ही महारावल समरसिंह को खिलअत तथा एक हज़ार ज़ात और एक हज़ार सवार का मनसब दिया^१ ।

महाराणा कुंभा ने वागड़ के स्वामी गोपाल (रावल गेपा) पर चढ़ाई कर डूंगरपुर को तोड़ा था । उधर वागड़ के निकट गुजरात और मेवाड़ के महाराणाओं से मालवे में मुसलमानी राज्य होने से मौक़ा पाकर वहाँ बांसवाड़ा के नरेशों के सुलतान भी वागड़ के स्वामियों को दबाते थे, का राजनैतिक सम्बन्ध इसलिए वागड़वाले जैसा अवसर देखते, वैसा व्यवहार करते थे । मेवाड़वालों का ज़ोर विशेष होता तो उन्हें अपना सर-परस्त समझते और यदि गुजरात व मालवा के सुलतानों की प्रबलता देखते तो ख़िराज आदि देकर उनसे मेल कर लेते थे । महाराणा रायमल के समय जब मालवे के सुलतान की सेना ने मेवाड़ पर चढ़ाई की उस समय वागड़ में गंगादास का कुंवर उदयसिंह महाराणा के साथ था । इसी प्रकार महाराणा संग्रामसिंह की ईडर पर की चढ़ाई और खानवे के युद्ध में भी वह (महारावल उदयसिंह) महाराणा के सैन्य में सम्मिलित था । फिर गुजरात के सुलतान बहादुरशाह तथा दिल्ली के बादशाह अकबर-द्वारा चित्तोड़ विजय हुआ, जिससे वागड़ पर मेवाड़ के महाराणाओं का आतङ्क कम हो गया, पर महाराणा उदयसिंह के समय मेल ही बना रहा । महाराणा प्रतापसिंह के समय बादशाह अकबर ने बांसवाड़े जाकर डूंगरपुर और बांसवाड़ा के राजाओं को अपने अधीन किया था, जिससे महाराणा प्रतापसिंह, उनके अकबर की अधीनता स्वीकार कर लेने के कारण, उनसे अप्रसन्न ही रहा । अकबर के पीछे बादशाह जहांगीर ने अपने साम्राज्य की सारी शक्ति लगाकर महाराणा अमरसिंह (प्रथम) को अपने अधीन किया । उससे सुलह हुई उस समय मेवाड़ के जो इलाक़े बादशाह के हाथ में चले गये थे वे सब पीछे बहाल कर

दिये गये तथा डूंगरपुर, बांसवाड़ा आदि अन्य इलाक़े भी मेवाड़ के अन्तर्गत कर लेने का हि० सं० १०२४ (वि० सं० १६७२=ई० सं० १६१५) में फ़रमान कर दिया गया^१, परंतु बांसवाड़ा के स्वामी को मेवाड़ के साथ अपना सम्बन्ध स्थिर रखने में यह भय था कि उसका इलाक़ा मेवाड़ के समीप होने से मेवाड़वाले हर किसी बहाने उसे दबाकर उसकी आंतरिक स्वाधीनता भी नष्ट कर देंगे, इसलिए महारावल समरासिंह ने बादशाह जहांगीर के पास मांडू में उपस्थित हो शाही दरबार से अपना संबंध बढ़ाने का प्रयत्न किया और बादशाह शाहजहां की तत्तनशीनी के दिनों उसकी सेवा में उपस्थित होकर उसने मनसब प्राप्त किया, जिससे मेवाड़ से उसका सम्बन्ध छूट गया।

महाराणा कर्णसिंह के उत्तराधिकारी जगतसिंह ने इस प्रकार बांसवाड़ा राज्य को अपने हाथ से निकलता देख दमन नीति से काम लिया।

इसपर महारावल समरासिंह ने मेवाड़ के दाख महाराणा जगतसिंह का बाम-वाड़े पर सेना भेजना (चुंगी) के अहलकारों को अपने इलाक़े से निकाल दिया। इसपर क्रुद्ध होकर महाराणा ने अपने

प्रधान कायस्थ भागचंद को सेना देकर बांसवाड़े पर भेजा। यद्यपि अधिक समय तक शाही सेना से युद्ध होते रहने के कारण मेवाड़ की शक्ति का ह्रास हो गया था, तो भी बांसवाड़ा राज्य को दबाने की सामर्थ्य उसमें विद्यमान थी। भागचंद के सेना सहित बांसवाड़े पहुंचने पर महारावल पहाड़ों में चला गया। प्रधान भागचंद ने उक्त नगर को घेर लिया और उसे लूटा, एवं छः महीने तक वह वहां रहा। अंत में अपने राज्य की बरबादी देखकर महारावल वहां आया और उसने दो लाख रुपये दंड के देकर मेवाड़ की अधीनता स्वीकार की^२।

मेवाड़ की इस चढ़ाई के सम्बन्ध में बांसवाड़ा राज्य की ख्यात में कुछ भी नहीं लिखा है, तो भी उदयपुर से पूर्व ५ मील दूर की बेड़वास

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० २३६-४६। मेरा; राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ८१४-१५।

(२) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण सातवां, पृष्ठ ३२१।

नामक ग्राम की बावड़ी की वि० सं० १७२५ (ई० स० १६६८) की प्रशस्ति में (जो मंत्री भागचंद के पुत्र फ़तहचंद ने लगवाई थी) इस चढ़ाई का उल्लेख है और मेवाड़ के राजसमुद्र नामक तालाब पर पच्चीस शिलाओं पर खुदे हुए 'राजप्रशस्तिमहाकाव्य' से भी इसकी पुष्टि होती है । बेड़वास की प्रशस्ति में रावल समरसिंह से दस गांव, दाण (चुंगी) की लागत लेना' और 'राजप्रशस्तिमहाकाव्य' में रावल समरसिंह से दो लाख रुपये दंड के लेने का वर्णन है^१, जो विश्वास के योग्य है; क्योंकि ये दोनों प्रशस्तियां महाराणा जगतसिंह के पुत्र महाराणा राजसिंह के समय की बनी हुई हैं । इसलिए इनमें लिखा हुआ वर्णन कपोलकल्पित नहीं हो सकता ।

अमरकाव्य से ज्ञात होता है कि यह चढ़ाई वि० सं० १६६२ (ई० स० १६३५) में हुई थी तथा महारावल की तरफ़ से दो लाख रुपये दंड के लेकर प्रधान भागचंद उस(महारावल)को महाराणा के अर्धान बनाकर वहां से लौटा था^२ ।

(१)राणाजी श्रीजगत्सिंहजी रा हुकम थी बांसवाला ऊपरे विदा हुवा । बडा बडा उमराव लोग साथे दिया, जाय बांसवालो भाज्यो । मास छः सुधी उठे रया, जदी रावल समरसीजी आवे मिल्या । इतरो दंड माथे करे अणे राणाजी श्रीजगत्सिंहजी रे पांवे लगाया बांसवाला रा देश रो दांण तथा गांम दश ।

(बेड़वास गांव की बावड़ी की प्रशस्ति से) ।

(२) जगत्सिंहनृपाज्ञातो बांसवालापुरे गतः ॥

प्रधानो भागचन्द्राख्यो रावलः सबलो गिरौ ॥ २७ ॥

गतः समरसीनामा ततो लच्छद्वयं ददौ ।

दंडं रजतमुद्राणां भृत्यभावं सदादधे ॥ २८ ॥

(राजप्रशस्ति महाकाव्य; सर्ग ५) ।

(३) शते षोडशाग्रे सुवर्षे द्वियुके

नवत्याह्वये श्रीजगत्सिंहवाक्यात् ।

महाराणा अमरसिंह और बादशाह जहांगीर के बीच की संधि में एक शर्त यह भी रखी गई थी कि चित्तोड़ के किले की मरम्मत न कराई

प्रधानोत्तमो भागचंद्रो नृचंद्रः
 प्रतस्थे बली बांसवालेक्षणाय ॥
 महासेनया संयुतं भागचन्द्रं
 ततो बांसवालाप्रविष्टं समीक्ष्य ।
 तदा बांसवालाधिपो रावलोऽथा-
 भवच्चाबलोप्युद्यतो गन्तुमद्रौ ॥
 ततो समरसीनामा रावलो नावलोकितः ।
 जयश्रियाभियायुक्तो हियासक्तोभवदभूशम् ॥
 ततो रावलस्य स्वतंत्राः सुमंत्राः
 स्वतंत्रस्य रक्षाकरा मंत्रिमुख्याः ।
 दिलक्षप्रमाणस्फुरद्रूप्यमुद्रा-
 मितं दंडमेतेऽर्पयन्ति स्म तस्मै ॥
 ततो दंडमुदण्डशौर्यो गृहीत्वा
 बलाद्रावलाद् भागचंद्रप्रधानः ।
 समाश्वास्य तं चाविलंबा...
 तनोत् श्रीजगत्सिंहभूपस्य भृत्यं ॥
 बलाद्बांसवालाधिपं रावलं तं
 स जित्वा जवाद्भागचंद्रः प्रधानः ।
 महाराजराजजगत्सिंहभूपं ।
 प्रणम्य प्रमोदं तदा तस्य तेने ॥

(अमरकाव्यम्, पत्र ४४, पृ० २) ।

बांसवाड़ा राज्य के अर्थुणा ठिकाने के चौहान सरदार के यहां की पुरानी वंशावली में मेवाड़ की इस चढ़ाई में वहां के ठाकुर भीमसिंह का मारा जाना लिखा है और उसकी साक्षी में एक प्राचीन गीत भी प्रसिद्ध है, जिसमें उसका महाराणा जगतसिंह (प्रथम) की सेना से लड़कर मारा जाना बतलाया है ।

बादशाह शाहजहाँ का
मेवाड़ से बांसवाड़े को
पृथक् करना

जावे, परन्तु बादशाह शाहजहाँ के समय महाराणा जगतसिंह ने उक्त संधि के विरुद्ध कार्यवाही कर चित्तोड़ की मरम्मत कराना आरम्भ किया और डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ एवं सिरोंही पर सेनाएं भेजीं तथा उसकी माता जांबुवती की द्वारिका तथा सूकर-क्षेत्र (सोरो) की यात्रा के समय शाही सेवकों के साथ मेवाड़वालों का कहीं-कहीं झगड़ा हो गया, जिससे बादशाह अप्रसन्न हुआ और आगरा से ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की ज़ियारत के बहाने वि० सं० १७०० (ई० स० १६४३) में अजमेर को रवाना हुआ। इसपर महाराणा ने बादशाह से लड़ाई करना ठीक न समझ अपने कुंवर राजसिंह को शाही सेवा में भेज दिया। इससे उस समय बादशाह शांत हो गया। अजमेर से बादशाह के लौट जाने पर महाराणा ने पूर्ववत् चित्तोड़ की मरम्मत का कार्य जारी रखा, किन्तु इसी बीच वि० सं० १७०६ (ई० स० १६४२) में उसका परलोकवास हो गया। फिर महाराणा राजसिंह ने गद्दी पर बैठकर अपने पिता के आरम्भ किये हुए चित्तोड़ की मरम्मत के कार्य को जोर-शोर से आगे बढ़ाया। तब बादशाह (शाहजहाँ) ने वि० सं० १७११ (ई० स० १६४४) में अजमेर आकर वहाँ से अपने वज़ीर सादुल्लाखां को बड़ी सेना सहित चित्तोड़ की मरम्मत गिराने के लिए भेजा। महाराणा ने जब वहाँ से अपने राजपूतों को हटा लिया तो वज़ीर चित्तोड़ की मरम्मत को गिराकर लौट गया। फिर महाराणा ने मुंशी चंद्रभान के समझाने से उसी वर्ष अपने कुंवर सुलतानसिंह को बादशाह के पास भेज दिया। महाराणा के इन विरोधी कार्यों का परिणाम यह हुआ कि बादशाह ने पुर, मांडल, खैराबाद, मांडलगढ़, जहाज़पुर, सावर, फूलिया, बनेड़ा, वदनोर आदि परगने मेवाड़ से अलग कर दिये। इसी प्रकार डूंगरपुर, बांसवाड़ा एवं प्रतापगढ़ के इलाक़े भी पृथक् हो गये।

(१) डूंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ के इलाक़ों का कुंवर कर्णसिंह के नाम फ़रमान हुआ, जिसका उल्लेख यथाप्रसन्न हो चुका है, परन्तु बादशाह शाहजहाँ की

चित्तोड़ के दुर्ग की मरम्मत गिराने और पुर, मांडल आदि परगने मेवाड़ से पृथक् करने के कारण महाराणा राजसिंह का क्रोध भड़क उठा। औरंगजेब का महाराणा राज- उसने शाही इलाक़े के संपन्न नगर मालपुरे को लूट सिंह के नाम बांसवाड़े का लिया। उस समय बादशाह शाहजहां के चारों पुत्र फ़रमान भेजना बादशाह बनने के विचार से लड़ने को उद्यत हो रहे थे। इससे बादशाह महाराणा के मालपुरा लूटने पर कुछ न बोला। मुग़ल सल्तनत की कमजोरी ही महाराणा को अभीष्ट थी, जिसकी पूर्ति चारों शाहजादों के पारस्परिक संघर्ष से होने लगी। पहले तो महाराणा चुप साध बैठा रहा और उसने किसी को कुछ सहायता न दी। फिर जब देखा कि पासा औरंगजेब की तरफ़ पड़ेगा, तब उसने अपने कुंवर सरदारसिंह को जमीयत के साथ उस (औरंगजेब) के पास भेज दिया, जो शुजा के साथ की लड़ाई में विद्यमान था।

इस पारस्परिक युद्ध का परिणाम यह हुआ कि बुढ़े बादशाह शाहजहां को कैद कर औरंगजेब बादशाह बना तथा दाराशिकोह, शुजा और मुराद मारे गये। इस सहायता के बदले में औरंगजेब ने बादशाह बनने पर महाराणा को छः हजार का मनसब दिया और जो परगने शाहजहां के समय मेवाड़ से अलग कर दिये गये थे, वे सब डूंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ के इलाकों सहित महाराणा के नाम फिर बहाल कर ता० १७ ज़िल्काद सन् १०६८ हिज़री (वि० सं० १७१५ भाद्रपद वदि ४ = ई० स० १६५८ ता० ७ अगस्त) को उसका फ़रमान भेज दिया।

नाराज़गी होने से ये इलाक़े वापस ज़ब्त हो गये। इसका बर्णन उदयपुर राज्य के इतिहास में स्पष्टरूप से नहीं मिलता है। संभव है कि महाराणा जगतसिंह के विरोधी कार्यों से उपर्युक्त इलाक़े फिर छीन लिये गये हों। अन्यथा फिर इन इलाक़ों का फ़रमान महाराणा राजसिंह के नाम जारी होने की आवश्यकता न थी।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ४२५-३२। मेरा; राजपूताने का इतिहास; जिल्द २, पृ० ८४८।

बादशाह का वह क्रूरमान बांसवाड़े के स्वामी को अनुकूल न हुआ, जिससे उस(महारावल समरसिंह)ने महाराणा की अधीनता स्वीकार करना न चाहा। तब महाराणा ने (भावणादि) वि० सं० महाराणा राजसिंह का १७१५ (चैत्रादि १७१६) वैशाख वदि ६ (ई० सं० बांसवाड़े पर अपने प्रधान १६५६ ता० ५ अप्रैल) मंगलवार को अपने प्रधान फ़तहचंद को भेजना फ़तहचंद कायस्थ को पांच हजार सवारों की सेना लेकर बांसवाड़े पर भेजा। इस सेना में रावत रुक्मांगद (कोठारिये का), राठोड़ दुर्जनसाल (घाणेराम का), रावत रघुनाथसिंह (सलूंवर का), शक्तावत मुहकमसिंह (भींडर का), रावत राजसिंह चूडावत (बेगूं का), माधवसिंह सीसोदिया, रावत मानसिंह सारंगदेवोत (कानोड़वालों का पूर्वज), राठोड़ माधवसिंह, सोलंकी दलपत (देसूरी का), चौहान उदयकर्ण (कोठारिये के रावत का पुत्र), शक्तावत गिरधर, शक्तावत सूरसिंह, ईडरिया राठोड़ जोधसिंह, भाला महासिंह, रावल रणछोड़दास आदि मुख्य थे। फ़तहचंद के सेना सहित बांसवाड़े पहुंचने पर रावल समरसिंह उससे मिला और एक लाख रुपये, देश दाण (चुंगी), दस गांव, एक द्वाथी तथा हथनी महाराणा को देना स्वीकार कर उसने उस(महाराणा)से सुलह करली। 'राजप्रशस्तिमहाकाव्य' में यह भी लिखा है कि उक्त महाराणा ने (जब समरसिंह उदयपुर आया तब) दस गांव और दाण का स्वत्व तथा बीस हजार रुपये छोड़ दिये^१। इसका परिणाम यह हुआ कि उस समय उक्त दोनों राज्यों में मेल हो गया।

(१) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण आठवां, पृ० ४३४-३५। मेरा; राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ८५०।

(२) शते सप्तदशे पूर्णे वर्षे पंचदशभिधे ।

वैशाखे कृष्णनवमीदिवसे भौमवासरे ॥ १६ ॥

महाराजसिंहाज्ञया बांसवाले

रणार्थ फतेचंद्रमंत्री प्रतस्थे ।

महारावल समरसिंह के समय के नीचे लिखे शिलालेख, दानपत्र आदि मिले हैं—

महारावल के समय के
शिलालेख व दानपत्र
आदि

(१) भूआसा गांव का वि० सं० १६७१ फाल्गुन सुदि ५ (ई० स० १६१५ ता० २२ फरवरी) बुधवार का शिलालेख ।

(२) भांवरिया गांव का वि० सं० १६७५ मार्गशीर्ष सुदि १५ (ई० स० १६१८ ता० २१ नवम्बर) का दानपत्र, जिसमें महारावल के उज्जैन तथा मालवे से पीछे लौटने पर महारावल की माता श्यामवाई-द्वारा किये हुए उत्सव पर एक गांव दान करने का उल्लेख है ।

(३) नागावाड़ा गांव का (आपाढादि) वि० सं० १६७५ (चैत्रादि १६७६, अमांत) ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आपाढ) वदि १२ (ई० स० १६१६ ता० ३० मई) का शिलालेख, जिसमें बादशाह सलीम (जहांगीर) की सेना लेकर राठोड़ मनोहरदास के पुत्र पेमा के आने पर राठोड़ केशोदास के साथी पन्द्रह व्यक्तियों के मारे जाने का उल्लेख है ।

(४) बांसवाड़े से प्राप्त मत्स्यपुराण की (आपाढादि) वि० सं० १६७६ (चैत्रादि १६७७) वैशाख सुदि १ (ई० स० १६२० ता० २३ अप्रैल)

चमूं पंचराजतुसहस्राश्वारै-

महाठक्कुरैगुठितां तां गृहीत्वा ॥ १७ ॥

ततः समरसिंहस्य रावलस्यावलस्य वै ।

लक्षसंख्यारूप्यमुद्रादेशदानं च हस्तिनीम् ॥ १८ ॥

गजं दंडं दशग्रामान् कृत्वा पातयदंघ्रिपु ।

राणेन्द्रस्य फतेचंद्रो भृत्यं कृत्वैव रावलम् ॥ १९ ॥

दशग्रामान् देशदानं रूप्यमुद्रावलेनृपः (?) ।

सद्विंशतिसहस्राणि रावलाय ददौ मुदा ॥ २० ॥

राजप्रशस्ति महाकाव्य; सर्ग ८ ।

(१) यह सेना कहां की थी, यह निश्चितरूप से पाया नहीं जाता । संभव है कि बांसवाड़ा के निकट के मालवे के इलाक़े की कोई सेना इधर आई हो ।

रविवार की लिखी हुई पुस्तक, जिसमें उसके महारावल समरसिंह के समय में लिखी जाने का उल्लेख है ।

(५) गढ़ी पट्टे के आंजणा गांव के शांतिनाथ के जैनमंदिर का वि० सं० १६८२ आश्विन सुदि ६ (ई० सं० १६२५ ता० ३० सितम्बर) का शिलालेख ।

(६) चींच गांव के आमलिया तालाब की पाल पर का वि० सं० १६८४ वैशाख सुदि १० (ई० सं० १६२७ ता० १५ अप्रैल) रविवार का लेख ।

(७) बांसवाड़ा के वासुपूज्य के दिगंबर जैनमंदिर का वि० सं० १६८६ (अमांत) श्रावण (पूर्णिमांत भाद्रपद) वदि ५ (ई० सं० १६२९ ता० ३० जुलाई) गुरुवार का शिलालेख ।

(८) सायण गांव के शिवमंदिर के स्तंभ पर का वि० सं० १६९३ शाके १५५८ पौष सुदि ५ (ई० सं० १६३६ ता० २२ दिसंबर) गुरुवार का शिलालेख ।

(९) पीपलूआ गांव का वि० सं० १६९३ माघ सुदि १५ (ई० सं० १६३७ ता० ३० जनवरी) सोमवार का दानपत्र, जिसमें वह गांव देवीदास मुकंद को दान करने का उल्लेख है ।

(१०) बेड़वास गांव में एक हल भूमि दान करने का वि० सं० १७०० मार्गशीर्ष सुदि ७ (ई० सं० १६४३ ता० ८ नवंबर) बुधवार का दानपत्र ।

(११) बड़ी बसी (गांव) का वि० सं० १७०२ (अमांत) आषाढ

(१) संवत् १६ वर्षे षट्सप्ततितमे मासे वैशाखसंज्ञिके ।

शुक्लपक्षप्रतिपदि लिखितं रविवासरे ॥ १ ॥

मात्स्यं पुराणमखिलं श्यामदासद्विजन्मना ।

रावलश्रीसमरसिंहे राज्यं कुर्वति मानदे ॥ २ ॥

(मूलपुस्तक का अंतिम भाग) ।

(पूर्णिमांत आषाढ) वदि १२ (ई० स० १६४५ ता० १० जुलाई) का शिलालेख ।

(१२) बांसवाड़ा की महासतियों में वि० सं० १७०७ मार्गशीर्ष सुदि ५ (ई० स० १६५० ता० १८ नवंबर) रविवार का शिलालेख, जिसमें श्यामबाई (समरसिंह की माता) की छत्री बनवाये जाने का उल्लेख है ।

(१३) घंटाला गांव का (आषाढादि) वि० सं० १७०७ (चैत्रादि १७०८, अमांत) ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आषाढ) वदि १३ (ई० स० १६५१ ता० ५ जून) का दानपत्र ।

वि० सं० १७१७ (अमांत) भाद्रपद (पूर्णिमांत आश्विन) वदि १४ (ई० स० १६६० ता० २३ सितंबर) को महारावल समरसिंह का परलोक-वास हुआ^१ । उसके पुत्र महारावल कुशलसिंह ने उस-महारावल का देहांत (समरसिंह)के स्मारक स्वरूप बांसवाड़े में छत्री बनवाकर (आषाढादि) वि० सं० १७३६ (चैत्रादि १७३७, अमांत) ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आषाढ) वदि ५ (ई० स० १६८० ता० ७ जून) सोमवार को उसकी प्रतिष्ठा करवाई ।

समरसिंह के १२ राणियां थीं । उनमें से किशनगढ़वाली राठोड़ राणी आनंदकुंवरी के गर्भ से कुंवर कुशलसिंह का जन्म हुआ, जो बांस-वाड़े की गद्दी पर बैठा और सूंथवाली परमार राणी महारावल की राणियां और संतति प्रेमकुंवरी के गर्भ से कुंवर केसरीसिंह का जन्म हुआ, जिसकी मृत्यु बाल्यकाल ही में हो गई ।

(१) स्वस्ति श्रीसंवत् १७१७ वर्षे शाके १५८२ प्रवर्त्तमाने भाद्रवा (भाद्रपद) वदि १४ दिने महाराजाधिराज महाराओल (महारावल) श्रीसमरसिंहजी श्रीवैकुण्ठलोक पधारा.....तेनी महाराओ (व) ल श्रीकुशलसिंहजी ये करावी संवत् १७३६ वर्षे जेठ (ज्येष्ठ) वदि ५ सोमवार ने दिवसे छत्री करावी ने प्रतिष्ठा कीधी ।

(महारावल समरसिंह की छत्री के स्मारक लेख से) ।

महारावल समरसिंह दानी राजा था। उसने अपने राज्यकाल में कई गांव दान किये। उसका दिल्ली के मुगल दरबार से राजनैतिक संबंध टूट हुआ और उसे मनसब भी प्राप्त हुआ, परन्तु उसने अपनी शक्ति का विकास न किया, जिससे उसके मनसब में वृद्धि नहीं हुई। इसका कारण यही ज्ञात होता है कि मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह और राजसिंह ने बांसवाड़े पर चढ़ाई कर उसकी बढ़ती हुई शक्ति को रोक दिया था।

पाँचवाँ अध्याय

महारावल कुशलसिंह से उम्मेदसिंह तक

कुशलसिंह

महारावल समरसिंह का देहान्त होने पर वि० सं० १७१७ (ई० सं० १६६०) में उसका कुंवर कुशलसिंह राज्य-सिंहासन पर बैठा ।

महारावल कुशलसिंह ने अपने पिता समरसिंह के समय मेवाड़ से महाराणा राजसिंह का **की हुई संधि के विरुद्ध आचरण करना आरम्भ** **डिंगल जिले के २७ गांव** **किया । इसपर उसके और मेवाड़ के महाराणा** **खालसा करना** **राजसिंह के बीच पुनः विरोध की आग भड़क उठी,** जिससे महाराणा ने बांसवाड़े पर अपनी सेना खाना की । उस(महाराणा)-की परमार राणी रामरसदे की बनवाई हुई देवारी दरवाजे के निकटवर्ती त्रिमुखी बावड़ी की वि० सं० १७४३ वैशाख सुदि २ (ई० सं० १६८६ ता० १४ अप्रैल) बुधवार की प्रशस्ति में लिखा है कि महाराणा ने महारावल कुशलसिंह से दंड वसूल किया^१ ।

मेवाड़ के इतिहास 'वीरविनोद' में बांसवाड़ा राज्य के इतिहास के प्रसङ्ग में कविराजा श्यामलदास ने लिखा है—

“महारावल कुशलसिंह ने भी मेवाड़ से आज़ाद होने का प्रयत्न किया । उसपर महाराणा राजसिंह ने उसके डिंगल ज़िले के २७ गांव ज़ब्त कर लिये और महारावल कुशलसिंह से मुचलका लिखवा लिया^२ ।”

(१)दंडं च बांसवाला स्थितेरुपरिकुशलसिंहस्य ॥२७॥

वीरविनोद; भाग २, पृ० ६३६ ।

(२) प्रकरण ग्यारहवाँ ।

‘वीरविनोद’ के इस कथन से ज्ञात होता है कि डिंगल ज़िले के सत्ताईस गांव महाराणाओं की तरफ़ से बांसवाड़ावालों की जागीर में होंगे । यही कारण है कि

बांसवाड़े पर महाराणा राजसिंह की चढ़ाई कब हुई, यह उपर्युक्त त्रिमुखी बावड़ी की प्रशस्ति से स्पष्ट नहीं होता, किन्तु बांसवाड़ा राज्य के नरवाली गांव के एक स्मारक लेख में चौहान नारू का वि० सं० १७३० ज्येष्ठ वदि ७ (ई० सं० १६७४ ता० १५ जून) को महाराणा की सेना से लड़कर काम आना लिखा है, जिससे स्पष्ट है कि महारावल कुशलसिंह पर महाराणा राजसिंह की चढ़ाई उक्त संवत् में हुई थी^१ ।

रूपनगर की राठोड़ राजकुमारी से विवाह करने, श्रीनाथजी आदि की मूर्तियों को मेवाड़ में रखने, जज़िया के बारे में बादशाह को कठोर पत्र भेजने एवं जोधपुर के शिशु महाराजा अजीतसिंह को अपने यहां रखने के कारण नाराज़ होकर औरंगज़ेब ने महाराणा राजसिंह पर चढ़ाई कर दी । यही नहीं, उसने बांसवाड़ा आदि राज्यों को (जिनका फ़रमान उक्त महाराणा के नाम पर हुआ था) मेवाड़ से पृथक् कर बांसवाड़े का फ़रमान महारावल कुशलसिंह के नाम कर दिया, जिससे पुनः उस (कुशलसिंह) का शाही दरबार से सम्बन्ध स्थापित होकर बांसवाड़ा राज्य गुजरात के सूबे से जोड़ दिया गया तथा उसके खिराज के १००००० रुपये प्रतिवर्ष मालवे के नाज़िम-द्वारा वसूल होकर बादशाह के यहां पहुंचने लगे^२ ।

महारावल कुशलसिंह-द्वारा उस (महाराणा राजसिंह) की आज्ञाओं की उपेक्षा होने पर महाराणा ने उनपर पीछा अपना अधिकार कर लिया हो ।

(१) संवत् १७३० वरीषे (वर्षे) जेठवदि ७ दी (दि) ने वार सुकरा (शुक्रे) सवण (चौहाण) नरू (नारू) जी राणाजी नी फोज काम आव्या ।

(मूल लेख की छाप से) ।

(२) नवाबअली और सेडन; 'मिराते-अहमदी' के ख़ातिमे का अंग्रेज़ी अनुवाद (गायकवाड़ ओरिएंटल सिरीज़, संख्या ४३), पृ० १६० ।

बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात में लिखा है—“वि० सं० १७३४ (ई० सं० १६७७) में बादशाह (औरंगजेब) की सेना ने उदयपुर पर चढ़ाई की, तब महाराणा के बुलाने पर वह (कुशलसिंह) उदयपुर गया । जब शाही-सेना उदयपुर के प्रसिद्ध जगन्नाथराय (जगदीश) के विशाल मंदिर को गिराने लगी, तब महारावल ने युद्ध कर उस मंदिर को बचाया ।” ख्यात का यह कथन विश्वास के योग्य नहीं है, क्योंकि

ख्यात और महारावल
कुशलसिंह

(१) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र ७, पृ० १ ।

महारावल समरसिंह और कुशलसिंह के समय बांसवाड़े पर महाराणा जगत-सिंह और राजसिंह की चढ़ाइयाँ होने से स्पष्ट है कि बांसवाड़ा के स्वामी, महाराणा के नाम बांसवाड़ा का फ़रमान होने पर भी अपना राजनैतिक सम्बन्ध मुग़ल साम्राज्य से रखना चाहते थे, जो मेवाड़वालों को अभीष्ट न था । इसलिए वे समय-समय पर अपनी सेना भेज बांसवाड़ावालों को दबाते रहे । जब मेवाड़ की प्रबल सेना जाकर बांसवाड़ा को घेर लेती, उस समय महारावल अपने राज्य की बरवादी देख उनसे मेल कर लेते और जब शाही दरबार की मेवाड़वालों पर नाराज़गी होती, तब वे पीछे शाही सेवा में जा पहुँचते तथा वहाँ रहकर मेवाड़ के पंजे से छूटने का उद्योग करते रहते । ऐसी दशा में मेवाड़ के साथ उनका विरोध रहना स्वाभाविक ही था । महाराणा राज-सिंह ने महारावल से डंगल ज़िले के २७ गांवों को छोड़ देने का मुचलका लिखा लिया था । ऐसी स्थिति में जब महाराणा राजसिंह पर बादशाह औरंगजेब ने वि० सं० १७३६ (ई० सं० १६७९) में चढ़ाई की तब उदयपुर जाकर महारावल का शाही सेना से युद्ध करना असंभव है । यदि वह (कुशलसिंह) बादशाह की चढ़ाई के समय महाराणा के पक्ष में लड़ता तो ‘राजप्रशस्तिमहाकाव्य’ और ‘राजविलास’ नामक ग्रन्थों में उसका उल्लेख अवश्य होता । मेवाड़ के महाराणाओं के साथ सद्ब्यवहार न होने पर भी महारावल कुशलसिंह, उस समय के बड़े शक्तिशाली बादशाह औरंगजेब से अकारण ही विरोध कर शाही सेना से लड़े, यह बात मानी नहीं जा सकती ।

महारावल कुशलसिंह का महाराणा से मेल नहीं था । यदि उसका मेवाड़ से अच्छा व्यवहार होता तो वह डूंगरपुर के स्वामी जसवन्तसिंह की भांति राज-समुद्र की प्रतिष्ठा के अवसर पर वहाँ जाकर सम्मिलित होता और अन्य नरेशों की भांति उसके पास भी सिरपाव, हाथी और घोड़े भेजे जाते, किन्तु उस अवसर पर महारावल का वहाँ न जाना और उसके पास उपहार का न पहुँचना, इस बात का

मेवाड़ पर बादशाह औरंगजेब की चढ़ाई वि० सं० १७३४ में नहीं, किन्तु वि० सं० १७३६ (ई० स० १६७६) में हुई थी, जिसका वर्णन कई स्थलों पर लिखा हुआ मिलता है। उनमें कहीं भी इस युद्ध में बांसवाड़े के महारावल का सम्मिलित होना नहीं लिखा है। उसका तो महाराणा राजसिंह से विरोध था। फिर बादशाह-द्वारा बांसवाड़ा राज्य उस(कुशलसिंह)के नाम बहाल होने से द्वेषाग्नि और भी बढ़ गई थी।

उस(कुशलसिंह)के लखनऊ के नवाब से लड़ने, वि० सं० १७३२ (ई० स० १६७५) के लगभग उज्जैन में मुसलमानों और बूंदी के हाड़ा क्षत्रियों से युद्ध होने पर हाड़ा राजपूतों के काम आने तथा उनके शव मुसलमानों-द्वारा रोके जाने पर कुशलसिंह का युद्ध कर उन शवों को ले आने, देवलिया (प्रतापगढ़) और मालवेवालों तथा डूंगरपुर के महारावल जसवन्तसिंह से युद्ध करने आदि की और भी बातें ख्यात में लिखी हैं^१, किन्तु उनका अन्य किसी इतिहास से मिलान नहीं होता। ऐसी अवस्था में ख्यात में लिखी हुई ये बातें भी कपोलकल्पित ही हैं।

ई० स० १६०८ (वि० सं० १६६५) में प्रकाशित राजपूताना गैज़ेटियर के अन्तर्गत बांसवाड़ा राज्य के गैज़ेटियर में लिखा है—“महारावल कुशलसिंह ने भीलों का दमन कर कुशलगढ़ आबाद किया और उसे ठाकुर अखेराज को जागीर में दे दिया^२”, परन्तु उसी पुस्तक में ऐसा भी लिखा है कि कुशलगढ़ ठाकुर अखेराज ने कुशला भील को मारकर उसके नाम पर आबाद किया^३। इन दोनों में कौनसा कथन ठीक है इसके विषय में निश्चय पूर्वक कुछ नहीं

प्रत्यक्ष प्रमाण है कि मेवाड़वालों से उसका वैमनस्य था। संभव तो यह है कि बादशाह की तरफ से बांसवाड़ा का क्रूरमान प्राप्त होने पर महारावल, महाराणा के विरुद्ध शाही सेना में सम्मिलित होकर लड़ने गया हो।

(१) बांसवाड़ा राज्य के बड़े की ख्यात; पत्र ७, पृ० १।

(२) बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० १६०।

(३) वही; पृ० १६०।

कहा जा सकता, परन्तु अधिकांश नगरों और गांवों के नाम उनके बसाने-वालों के नाम पर रखे जाते हैं, ऐसी स्थिति में कुशलगढ़ का महारावल कुशलसिंह-द्वारा बसाया जाना अधिक संभव हो सकता है।

जोधपुर राज्य के कविराजा बांकीदास ने लिखा है—“रावल कुशलसिंह ने रामावत राठोड़ों को अपनी सेवा में रखकर पौने दो सौ गांव पट्टे में दिये, जो महियड़ का इलाका कहलाता है”।

मालवे में राठोड़ों की जागीरें मुगल बादशाहों की तरफ से चली आती थीं और वे शक्तिशाली हो गये थे। ऐसी दशा में कुशलसिंह का महियड़ इलाके के १७५ गांव (जिनके नाम आदि कुछ नहीं दिये हैं) ठाकुर अखेराज को जागीर में देने की बात कहां तक उपयुक्त है, यह निश्चय रूप से कहा नहीं जा सकता। संभव है, महारावल कुशलसिंह ने ठाकुर अखेराज को कुशलगढ़ इलाके की जागीर दी हो, परन्तु यह निश्चित है कि तांबे-सरा का पट्टा बांसवाड़ा राज्य की तरफ से कुशलगढ़ को जागीर में दिया गया था, जैसा कि मेजर के० डी० अर्सकिन ने अपने बांसवाड़ा राज्य के गैज़ेटियर में लिखा है^१।

धार राज्य के ऐतिहासिक पत्रों में कुछ ऐसे पत्र भी विद्यमान हैं, जिनसे कुशलगढ़ का बांसवाड़े से पृथक् मरहटों को खिराज देना प्रकट होता है^२।

कुशलसिंह के समय के वि० सं० १७१८ से ३७ (ई० सं० १६६१ से ८०) तक के नीचे लिखे हुए लेखादि मिले हैं—

(१) बांसवाड़ा से प्राप्त (आपाढादि) वि० सं० १७१७ (चैत्रादि १७१८) वैशाख सुदि ५ (ई० सं० १६६१ ता० २३ अप्रैल) भौमवार की लिखी हुई, ‘ब्राह्मणभाग अभि-
 महारावल के समय के
 शिलालेखादि
 रहस्यकांड’ नामक पुस्तक। यह पुस्तक महारावल

(१) ऐतिहासिक बातें; संख्या ७६।

(२) बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० ११०।

(३) लेले व ओक; ‘धारच्या पवारां चे महत्त्व व दर्जा’, पृ० ३६ और ४०।

कुशलसिंह के समय में ही लिखी गई थी^१ ।

(२) बड़ा सालिआ गांव का (आषाढादि) वि० सं० १७२१ (चैत्रादि १७२२, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि ५ (ई० स० १६६५ ता० २४ अप्रैल) का दानपत्र, जिसमें जोशी केशवा, पूजा आदि को एक हल भूमि सूर्यग्रहण के अवसर पर दान करने का उल्लेख है ।

(३) सीलवण गांव का (आषाढादि) वि० सं० १७२३ (चैत्रादि १७२४) वैशाख सुदि १३ (ई० स० १६६७ ता० २६ अप्रैल) का दानपत्र जिसमें व्यास उद्धव को भूमिदान करने का उल्लेख है ।

(४) सरवाणिया गांव का वि० सं० १७२४ आषण सुदि १५ (ई० स० १६६७ ता० २५ जुलाई) का दानपत्र जिसमें महारावल कुशलसिंह की राणी अनूपकुंवरी (तंवर) का चंद्रग्रहण के अवसर पर सरवाणिया गांव में दवे लाला को भूमिदान करने का वर्णन है ।

(५) बांसवाड़ा से प्राप्त वि० सं० १७२४ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि ३० (ई० स० १६६७ ता० ७ अक्टोबर) सोमवार की लिखी हुई ' ब्राह्मणभागएकपादकाख्यकांड ' नामक पुस्तक, जो महारावल कुशलसिंह के समय में ही लिखी गई थी^२ ।

(६) बांसवाड़ा से प्राप्त (आषाढादि) वि० सं० १७२५ (चैत्रादि १७२६ अमांत) चैत्र (पूर्णिमांत वैशाख) वदि १० (ई० स० १६६६

(१) संवत् १७१७ वर्षे वैशाख शुदि ५ भौमे अद्येह श्रीवंशपुर-वास्तव्य महाराउलश्रीकुशलसिंहजीविजयराज्ये आभ्यंतरनागरज्ञातीय याज्ञिकनानासुतपूजालिखितं आत्मपठनार्थं तथा परोपकारार्थं लिखितं ।

(२) स्वस्ति संवत् १७२४ वर्षे आश्विनमासे कृष्णपक्षे अमा-वास्यायां तिथौ सोमवासे अद्येह श्रीवागडदेशे वंशपुराधीश्वरमही-महेन्द्रमहाराजाधिराजमहाराउलश्री ५ कुशलसिंहविजयराज्ये आभ्यंतर-नागरज्ञातीय दवे नानाठीकरियासुतेन दामोदरेण विनायकपुरस्थेन छिन्नं पूरितं ।

ता० १५ अग्रेल) गुरुवार की लिखी हुई 'ब्राह्मणभागअग्निरहस्यकांड' नामक पुस्तक, जो महारावल कुशलसिंह के समय में ही लिखी गई थी' ।

(७) बांसवाड़े का वि० सं० १७२७ माघ सुदि ५ (ई० स० १६७१ ता० ५ जनवरी) का दानपत्र, जिसमें महारावल कुशलसिंह की माता आनंद-कुंवरी-द्वारा गंगाजी के महोत्सव पर भूमिदान किये जाने का उल्लेख है ।

(८) नरवाली गांव में माही नदी के किनारे की छत्रियों में (आषाढादि) वि० सं० १७३० (चैत्रादि १७३१ अमांत) ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आषाढ) वदि ७ (ई० स० १६७४ ता० १५ जून) का शिलालेख, जिसमें चौहान नारू के महाराणा की सेना से लड़कर काम आने और उसके पुत्र कण्णजी (करणजी)-द्वारा उस (नारू) का स्मारक बनाये जाने का उल्लेख है^२ ।

(९) बांसवाड़े का वि० सं० १७३४ आषाढ सुदि ५ (ई० स० १६७७ ता० २५ जून) का दानपत्र, जिसमें राजधानी बांसवाड़ा में कुशलबाग की तरफ का एक कुआँ वैशाखी पूर्णिमा पर चंद्रग्रहण में व्यास उद्धव को दान दिये जाने का उल्लेख है ।

(१०) तलवाड़ा गांव का वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि १ (ई० स० १६७६ ता० २७ अगस्त) का ताम्रपत्र, जिसमें पंडा सुखा, सवा आदि को भूमिदान करने का उल्लेख है ।

(११) बांसवाड़ा की माही नदी के तटपर की महारावल समरसिंह की छत्री बनवाने का (आषाढादि) वि० सं० १७३६ (चैत्रादि १७३७, अमांत) ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आषाढ) वदि ५ (ई० स० १६८० ता० ७ जून) सोम-वार का लेख ।

(१) संवत् १७२५ वर्षे चैत्रवदि १० गुरावद्येह श्रीवंशपुरवास्तव्य महाराउलश्रीकुशलसिंहविजयराज्ये आभ्यन्तरनागरज्ञातीययाज्ञिककाका-सुतवासुदेवलिखितं स्वभातृपठनार्थ ।

(२) देखो ऊपर पृ० १०५ ।

(१२) सुअणपुर गांव से मिला हुआ (आषाढादि) वि० सं० १७४२ (चैत्रादि १७४३) वैशाख सुदि २ (ई० सं० १६८६ ता० १४ अप्रैल) का शिलालेख, जिसमें मेवाड़ के महाराणा की सेना के साथ के युद्ध में कुंवर अजबसिंह के सेनापतित्व में गोहिल मलक के काम आने का उल्लेख है^१ ।

वि० सं० १७४४ माघ सुदि १ (ई० सं० १६८८ ता० २३ जनवरी) को महारावल कुशलसिंह का देहांत हो गया^२ ।
 महारावल का देहांत और संतति

उसके ८ राणियां थी, जिनसे अजबसिंह, सोभागसिंह,^३ अमरसिंह^४ तथा कीर्तिसिंह^५ नामक चार कुंवर हुए । बांसवाड़ा राज्य की पश्चिमी सीमा पर कुशलकोट^६ और

(१) संवत् १७४२ वर्षे वेसाक सुदि [५] दिने गोहिल मलकजी दिवाणजीरि फोज माहे काम आव्या कवर अजबसिंघजी आगल ।

(मूल लेख की प्रतिलिपि से) ।

वि० सं० १७४२ और १७४३ में मेवाड़ में महाराणा जयसिंह राज्य करता था, इसलिए यह लड़ाई महाराणा जयसिंह के समय कुंवर अजबसिंह से होना चाहिये, परन्तु मेवाड़ के इतिहास में इस युद्ध का कोई वर्णन नहीं है ।

(२) ॥ श्रीसंवत् १७४४ वर्षे माघशुदि १ दिने महाराउलश्री-कुशलसिंघजी देवलोक पधारा..... ।

(महारावल की छुश्री के लेख की छाप से) ।

(३) कुंवर सोभागसिंह का जन्म महारावल कुशलसिंह की राणी अनूपकुंवरी (तंवर) के उदर से हुआ था । बड़वे की ख्यात में लिखा है कि सोभागसिंह के वंशधर डांगरडुंगर के जागीरदार हैं ।

(४) अमरसिंह को तेजपुर जागीर में मिला था, परन्तु फिर खालसा होकर उस (अमरसिंह) के पांचवें वंशधर को जागीर में देवदा गांव मिला ।

(५) कीर्तिसिंह को आमभा व बोदीगामा मिला था, इसलिए उसके वंशज वहां पर निवास करते हैं ।

(६) यह गांव डुंगरपुर राज्य की सीमा के निकट है ।

उत्तरी सीमा पर कुशलपुरा' गांव महारावल कुशलसिंह के बसाये हुए तथा बांसवाड़े में कुशलबाग भी उसी का बनवाया हुआ माना जाता है।

अजबसिंह

वि० सं० १७४४ माघ सुदि १ (ई० सं० १६८८ ता० २३ जनवरी) को महारावल अजबसिंह का राज्याभिषेक हुआ।

उस समय दिल्ली के सिंहासन पर बादशाह औरंगज़ेब आरूढ़ था। वह मेवाड़ के महाराणाओं से नाराज़ था, इसलिए बांसवाड़े के स्वामी मेवाड़वालों की उपेक्षा करने लगे। तब महाराणा जयसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना जयसिंह ने बांसवाड़े पर चढ़ाई कर महारावल को जा दवाया^१। बांसवाड़ा राज्य के लोहारिया गांव के वि० सं० १७४८ (ई० सं० १६९१) के लेख से जान पड़ता है कि उक्त संवत् में मेवाड़ के महाराणा की यह चढ़ाई हुई थी^२। महाराणा जयसिंह और महारावल अजबसिंह के बीच भी यह विरोध बना ही रहा, जिससे

(१) कुशलपुरा सीसोदिया शक्कावतों की जागीर में है और बांसवाड़ा राज्य में प्रथम वर्ग का ठिकाना है, जो राज्य की उत्तरी सीमा में प्रतापगढ़ के इलाक़े की तरफ़ है।

(२) वंशपत्रपुरं भंकृत्वा जित्वा चाजबरावलम् ।

तमेवास्थापयत्तत्र कृत्वा दंडं यथाविधि ॥ १२७ ॥

(अमरसिंहाभिषेक काव्य) ।

(३) संवत् १७४८ वर्षे आषाढ़ सुद ५ डोलीआ सामजी दीवाणूजी नी फोज काम आवा..... ।

(मूल लेख की छाप से) ।

बांसवाड़े पर महाराणा जयसिंह की इस चढ़ाई का एक कारण यह भी हो सकता है कि महारावल अजबसिंह ने उक्त महाराणा और उसके कुंवर अमरसिंह के बीच विरोध हो जाने का अवसर पाकर उपर्युक्त डांगल ज़िले के गांवों पर पुनः अपना अधिकार कर लिया हो।

वि० सं० १७५५ (ई० सं० १६९८) में महाराणा को फिर वहां सेना भेजनी पड़ी^१ ।

इसी वर्ष के आश्विन मास (सितम्बर) में महाराणा जयसिंह का देहांत हो गया और उसका पुत्र अमरसिंह (दूसरा) गद्दी पर बैठा । मेवाड़ के इतिहासकर्त्ताओं का कथन है कि उस (अमर-
मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह
(दूसरा) की चढ़ाई सिंह) की गद्दीनशीनी के अवसर पर बांसवाड़े का स्वामी अजबसिंह टीका लेकर न आया, जिससे उक्त महाराणा ने अपनी गद्दीनशीनी के प्रारंभ में ही बांसवाड़े पर सेना भेजने की आज्ञा दी । इसपर बांसवाड़े के वकील ने बादशाह की सेवा में यह शिकायत पहुंचाई कि महाराणा की सेना बांसवाड़े के इलाक़े का नुक़सान कर रही है । तब वज़ीर असदख़ां आदि शाही अफ़सरों ने महाराणा को ऐसी कार्रवाई न करने के लिए लिखा । महाराणा ने उत्तर दिया कि बांस-
वाड़े के डांगल ज़िले के २७ गांव महाराणा राजसिंह ने महारावल कुशल-
सिंह से ज़ब्त कर लिये थे, उनपर पीछा अजबसिंह ने अधिकार कर लिया है । बहुत कुछ तहक़ीक़ात के बाद वज़ीर असदख़ां ने महारावल (अजब-
सिंह) को ता० २५ ज़िल्काद सन् ४६ जुलूस आलमगीरी (हि० सं० १११३= वि० सं० १७५६ वैशाख वदि १२=ई० सं० १७०२ ता० १२ अप्रैल) को उक्त गांवों पर किसी तरह का दख़ल न करने के लिए लिखा^२ ।

(१) संवत् १७५४ वर्षे वइसाख (वैशाख) वदि २ दिने नायक सरदारू काम आव्या दिवाणजा (जी) नी फोज आवी तारे ।

(बांसवाड़े के सतीपोल नामक दरवाज़े के पास के लेख की छाप से) ।

(२) वीरविनोद (भाग २, प्रकरण ग्यारहवां) में म० म० कविराजा श्यामलदास ने इस ख़त को उद्धृत किया है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

“बराबरीवालों में उम्दह रावल अजबसिंह नेकनीयत रहै । इन दिनों में बुजुर्ग खानदान राणा अमरसिंह के लिखने से अर्ज़ हुआ कि उस सरदार ने भीलवाड़ा वगैरह २७ गांवों पर जो डांगल ज़िले में राणा के सरहद्दी इलाक़े पर हैं और जिनकी बाबत राणा एक महजर उनके बाप कुशलसिंह और डूंगरपुर के जमींदार रावल खुमायसिंह के

ख्यात में लिखा है कि महारावल अजबर्सेह का बादशाही सेना से वि० सं० १७५१ में युद्ध हुआ, जिसमें शाही सेना की हार हुई और नवाब रण-
 महारावल के अन्य कार्य बाज़ूखां मारा गया। उस (अजबर्सेह) ने वि० सं० १७५२ में सूथ को लूटा तथा वि० सं० १७५५ में भीलों की पालों पर चढ़ाई कर उन्हें वश में किया। इस शोध के युग में ख्यात का उपर्युक्त कथन ज्यों का त्यों स्वीकार करने योग्य नहीं है, क्योंकि उसका अन्य इतिहासों से मिलान नहीं होता तथा ख्यात में उल्लिखित ये बातें अधिकांश में अतिशयोक्ति पूर्ण हैं।

महारावल अजबर्सेह के समय के वि० सं० १७४८ से १७५८ (ई० सं० १६६१ से १७०१) तक के नीचे लिखे शिलालेख व
 महारावल के समय के शिलालेखादि दानपत्र मिले हैं—

(१) लोहारिया गांव का वि० सं० १७४८ आषाढ़ सुदि ५ (ई० सं० १६६१ ता० २० जून) का शिलालेख, जिसमें डोलिया शामजी का मेवाड़ की सेना से युद्ध कर काम आने का उल्लेख है।

(२) मुकनपुरा गांव से मिला हुआ (आषाढादि) वि० सं० १७५० (चैत्रादि १७५१) चैत्र सुदि १ (ई० सं० १६६४ ता० १६ मार्च) का दानपत्र, जिसमें डोलिया धोमण को बड़ीपड़ार गांव में तालाब की भूमि देने का उल्लेख है।

(३) सेवना गांव का वि० सं० १७५२ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि (ई० सं० १६६५ नवम्बर) का दानपत्र, जिसमें सादड़ी के निकट का सेवना गांव जोशी रतना के पुत्र राधानाथ और राम-किशन को सूर्यग्रहण के अवसर पर दान करने का उल्लेख है।

हाथ की रक्खता है, बेफाइदह दावा करके जुल्म और दखल दे रक्खा है। यह बात बाद-शाही दरगाह में बहुत खराब मालूम होती है और हुक्म के मुवाफिक लिखा जाता है कि इस कागज़ के पहुंचते ही राणा के इलाक़े पर बेजा दखल न करें। इस मुआमले में हज़ूर की तरफ़ से सख़्त ताकीद समझें।”

(१) देखो ऊपर पृष्ठ ११२।

(४) बांसवाड़ा के सतीपोल दरवाज़े का (आषाढादि) वि० सं० १७५४ (चैत्रादि १७५५, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि २ (ई० सं० १६६८ ता० १७ अप्रैल) का शिलालेख, जिसमें नायक सरदार का मेवाड़ की सेना से लड़कर मारे जाने का उल्लेख है' ।

(५) बांसवाड़ा के गांवेटा सवा के नाम का (आषाढादि) वि० सं० १७५५ (चैत्रादि १७५६) ज्येष्ठ सुदि २ (ई० सं० १६६६ ता० २० मई) का दानपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांवेटे ब्राह्मण को सूर्यग्रहण के अवसर पर बांसवाड़े के बोरेरा तालाब का आधा हिस्सा महाराजकुमार भीमसिंह-द्वारा दान किये जाने का उल्लेख है' ।

(६) मोटा गड़ा (गांव) से मिले हुए वि० सं० १७५८ (अमांत) आषाढ (पूर्णिमांत भाद्रपद) वदि २ (ई० सं० १७०१ ता० ६ अगस्त) के ४ शिलालेख, जिनमें ठाकुर सरदारसिंह की सहायतार्थ भाला बनराय, अजबसिंह, वाघेला राजसिंह और मादावत अखेरराज के काम आने का उल्लेख है ।

महारावल अजबसिंह का देहांत वि० सं० १७६२ (ई० सं० १७०६) में

(१) देखो ऊपर पृ० ११३ ।

(२) बांसवाड़े से हमारे पास अधिकांश ताम्रपत्रों (दानपत्रों) की नकलें ही आई हैं । इसलिए हम उनकी वास्तविकता के विषय में कुछ नहीं कह सकते । इस ताम्रपत्र की नकल में ऊपर की तरफ 'सही' बनी हुई है । वि० सं० १७५२ और १७५८ (ई० सं० १६६५ और १७०१) के कुंवर भीमसिंह के समय के दो ताम्रपत्रों की नकलें हमारे देखने में आई हैं, जिनमें उसको 'महारावल' लिखा है; परन्तु उसी के एक दानपत्र में (जो वि० सं० १७५५ ज्येष्ठ सुदि २ का है) उसको 'महाराजकुमार' लिखा है तथा वि० सं० १७५२ और १७५८ के उल्लिखित दानपत्रों की मिति और बार का भी मिलान नहीं होता एवं पुरानी ख्यातों में उस (भीमसिंह) का वि० सं० १७६२ (ई० सं० १७०५) में गद्दी बैठना लिखा है । ऐसी दशा में उपर्युक्त वि० सं० १७५२ और १७५८ के दानपत्रों के लेखानुसार वह उन दिनों महारावल नहीं हो सकता ।

महारावल का देहांत और
संतति

हुआ। उसके तीन पुत्र^१ भीमसिंह, ईसरदास और भारतसिंह तथा साहेबकुंवरी, अखेकुंवरी, अमरकुंवरी एवं चैनकुंवरी नाम की चार कुंवरियां हुईं।

भीमसिंह

अपने पिता अजबसिंह का परलोकवास होने पर वि० सं० १७६२ माघ सुदि ३ (ई० स० १७०६ ता० ६ जनवरी) को महारावल भीमसिंह बांसवाड़े की गद्दी पर बैठा।

दिल्ली के बादशाह औरंगज़ेब का पिछला समय दक्षिण में मरहटों को दबाने आदि में ही व्यतीत हुआ और वहाँ वि० सं० १७६३ (ई० स० १७०७) में उसकी मृत्यु हुई, जिससे महारावल भीमसिंह का शाही दरबार से संपर्क न रहा। मुगल शासनकाल में वागड़ की गणना गुजरात के सूबे में होती थी और महारावल कुशलसिंह के समय में ही मेवाड़ से बांसवाड़े का सम्बन्ध विच्छेद कर बादशाह ने उसे अपना अधीन राज्य मान लिया, जिससे वहाँ का खिराज़ नियत हो गया था और वह मालवे के नाज़िम-द्वारा अहमदाबाद के सूबेदार के पास पहुँचता था। इस कारण से मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह (दूसरा) ने महारावल भीमसिंह से फिर कोई छेड़ छाड़ न की।

सात वर्ष राज्य करने के अनन्तर महारावल भीमसिंह का देहांत वि० सं० १७६६ श्रावण सुदि २ (ई० स० १७१२ ता० २४ जुलाई) को हो गया^२।

(१) एक ख्यात में उसके ५ पुत्रों के नाम—भीमसिंह, इंद्रसिंह, भगवतसिंह, भारतसिंह और ईसरदास—दिये हैं।

(२) सं० १७६६ व० सावणशुद २ महाराओल श्रीभीमसिंगजी देवलोक पधारा। सती ६ सहगमन कीधा। सं० १८०० व० जेठ शुद ६ राणी पुरवणी रूपकुपरजीए छत्री प्रतिष्ठा कीधि।

(महारावल भीमसिंह की छत्री के मूल लेख की छाप से)।

उसके तीन पुत्र विष्णुसिंह (विशनसिंह), पद्मसिंह, बल्लसिंह एवं एक पुत्री गुमानकुंवरी हुई^१। उस (भीमसिंह) के समय के वि० सं० १७६३ कार्तिक सुदि ७ (ई० सं० १७०६ ता० १ नवम्बर) के अंतकारिया गांव से दो शिलालेख मिले हैं^२, जिनमें राठोड़ हठीसिंह और अजबसिंह के युद्ध में काम आने का उल्लेख है, परन्तु यह युद्ध किससे हुआ यह अब तक अज्ञात है।

विष्णुसिंह (विशनसिंह)

महारावल विष्णुसिंह वि० सं० १७६६ श्रावण सुदि २ (ई० सं० १७१२ ता० २४ जुलाई) को बांसवाड़े का स्वामी हुआ।

इन दिनों दिल्ली की मुगल सल्तनत जर्जर सी हो रही थी, इसलिए मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) ने डूंगरपुर और बांसवाड़ा राज्य उदयपुर के महाराणा संग्रामसिंह को फिर अपने अधीन करने का प्रयत्न आरंभ किया और बादशाह फर्रुखसियर के शासन सेना देकर बांसवाड़े पर भेजना के पान्चवें वर्ष में उपर्युक्त दोनों राज्यों को

(१) बड़वे की ख्यात में राणी रूपकुंवरी पुरवणी (चौहान) कोठारिया (मेवाड़) की लिखी है। इसके अतिरिक्त उसके एक राणी मयाकुंवरी (चौहान) कोठारिया की और थी, जिसके गर्भ से विष्णुसिंह का जन्म हुआ था। कुंवर पद्मसिंह और बल्लसिंह तथा गुमानकुंवरी का जन्म राणी साहेबकुंवरी (परमार) सूथवाली के उदर से हुआ था। पद्मसिंह और बल्लसिंह की मृत्यु बाल्यकाल में ही हो गई और गुमानकुंवरी का विवाह बूंदी के रावराजा बुधसिंह से हुआ था।

(२) संवत १७६३ ना कारतक सुद ७ देने.....राठोड़ हठी-संगजी काम आवा रावल भीमसिंगना समे.....।

(मूल लेख की छाप से)।

संवत १७६३ ना कारतक सुद ७ देने.....राठोड़ अजबसंगजी काम आवा रावल भीमसंगजी आगे।

(मूल लेख की छाप से)।

मेवाड़ के अन्तर्गत करने का फ़रमान भी प्राप्त कर लिया^१, परन्तु उन राज्यों को मेवाड़ के अधीन रहना पसन्द न था, जिससे वि० सं० १७७४ (ई० सं० १७१७) में महाराणा ने अपने प्रधान पंचोली बिहारीदास को सेना देकर उनपर खाना किया। बिहारीदास रामपुर से लौटता हुआ बांसवाड़े पहुंचा, जिसपर महारावल ने महाराणा की सेना से लड़ाई करना ठीक न समझकर एक हाथी और पच्चीस हजार रुपये देने तथा महाराणा की सेवा में उपस्थित होने का इक़रार लिख दिया^२।

बांसवाड़ा राज्य ने मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) से सुलह करली थी, परन्तु उन दिनों मरहटों का उत्कर्ष हो रहा था। यह देखकर

(१) नवाबअली और सेडन; मिराते-अहमदी के ख़ातिमे का अंग्रेज़ी अनुवाद, (गायकवाड़ ओरिएंटल सिरीज़, संख्या ४३), पृ० १६०।

(२) वीरविनोद; भाग दूसरा, प्रकरण ग्यारहवां।

कविराजा श्यामलदास ने अपने वीरविनोद में उक्त इक़रार की नक़ल उद्धृत की है, जो इस प्रकार है—

श्रीराम १

सीधश्री लीखतं राउल श्रीवीसनसीधजी अप्रंच । पंचोली श्री-
बिहारीदासजी पधारया रामपुराथी अणी बाटे पधारा जदी गोठरा रु०
२५०००) देणा वे ईखरे पच्चीस हजार देणा । हाथी १ नीजर करणो
दील करे नहीं—

मंतु रावल श्रीवीसनसीधजी ऊपर लीखुं ते सही । कोल मास १
नी मास १ गो प्रदेणा सं० १७७४ आसोज वद १०

बीगत रुपिया

१००००) ईखरे रुपीआ हजार दस तो मास १ में भरणा

१५००० रुपीआ ईखरे हजार पंदरे श्री जी हजुर पगे लागे
जदी अरज करे बगसांवणा ।

महारावल का मरहटों से
मेल करना

बांसवाड़ा के स्वामी महारावल विष्णुसिंह ने भी, जो मेवाड़ की अधीनता से असन्तुष्ट था, मरहटों से मेलकर उन्हें खिराज देना स्वीकार कर लिया ।

फिर ई० स० १७२८ ता० २६ मई (वि० सं० १७८५ ज्येष्ठ वदि १४) को पेशवा वाजीराव ने महारावल विष्णुसिंह (विशनसिंह) को पत्र-द्वारा सूचना दी कि बांसवाड़ा राज्य का आधा खिराज ऊदाजी पवार (धार राज्य का संस्थापक) और आधा मल्हारराव होल्कर (इंदोर राज्य का संस्थापक) को देते रहे^१ । इसपर वहां का खिराज उक्त दोनों को दिया जाने लगा, परन्तु पीछे से उसे धार राज्य ही लेता रहा^२ ।

महारावल विष्णुसिंह ने बाहरी आक्रमणों से अपने राज्य को बचाने के लिए ही पेशवा से मेलकर खिराज देना स्वीकार कर लिया था और

मरहटे सेनापतियों का पेशवा ने बांसवाड़ा राज्य के खिराज की वसूली का
बांसवाड़ा से लूट-खसोट-द्वारा स्वत्व अपने सेनापति ऊदाजी पवार तथा मल्हार-
रूपये लेना राव होल्कर को सौंप दिया था तो भी मरहटे

अफसर राघोजी कदमराव और सवाई काटसिंह कदमराव ने उधर बढ़कर वि० सं० १७८५ मार्गशीर्ष (ई० स० १७२८ नवम्बर) में बांसवाड़ा राज्य में लूट-मार मचा दी ।

तलवाड़ा गांव के समीप बांसवाड़ा राज्य की सेना से मरहटी सेना का मुक्काबला हुआ, जिसमें महारावल की तरफ के सरदार—भाला सरूपसिंह, मेड़तिया राठोड़ बल्लतसिंह, राठोड़ मोहकमसिंह आदि—अपने कई राजपूतों सहित काम आये^३ । मरहटा सैनिकों के उपद्रव से वागड़ का अधिकांश भाग वीरान हो गया, जिससे बांसवाड़ा राज्य की बहुत हानि हुई । उन्होंने अत्याचार-द्वारा वहां से खिराज के एवज पचास हजार रुपये वसूल किये, जिसकी पेशवा के पास शिकायत होने पर उस (पेशवा) ने उस रकम

(१) लेबे व ओक; धारच्या पवारा चे महत्व व दर्जा, पृ० ३० ।

(२) टीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनदज़; जि० ३, पृ० ४४४ (पांचवां संस्करण) ।

(३) भाला का गुडा, भंवरिया और अडोर गांव के स्मारक लेखों से ।

को ज़ब्त कर अपने यहाँ जमा कराने का हुक्म दिया^१, जिससे कुछ समय के लिए मरहटे सरदारों का आतङ्क मिट गया।

वि० सं० १७८१ (ई० स० १७२४) में जोधपुर के स्वामी अजीत-सिंह को उसके ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह ने अपने छोटे भाई बरतसिंह द्वारा महाराणा संग्रामसिंह का मरवाकर मारवाड़ का सिंहासन प्राप्त किया, तब बांसवाड़े पर फिर महाराजा अभयसिंह के छोटे भाई आनंदसिंह एवं सेना भेजना रायसिंह भागकर उपद्रव करने लगे और उन्होंने ईडर पर अधिकार कर लिया। महाराजा अभयसिंह उनको मरवा डालना चाहता था, इसलिए उसने जयपुर के महाराजा जयसिंह (सवाई) की सलाह से श्रावणदि वि० सं० १७८३ (चैत्रादि १७८४) आषाढ वदि ७ (ई० स० १७२७ ता० ३१ मई) को उन(आनंदसिंह और रायसिंह)को ईडर के इलाके से निकालकर मार डालने तथा वहाँ अपना अधिकार करने के लिए महाराणा संग्रामसिंह के नाम पत्र भेजा^२।

ईडर राज्य मेवाड़ से मिला हुआ है, इसलिए महाराणा की भी उस इलाके पर बहुत दिनों से दृष्टि थी अतः यह अवसर हाथ आते ही उसने वि० सं० १७८५ (ई० स० १७२८) में ईडर पर अधिकार करने के लिए अपनी सेना रवाना की। उस समय महारावल विष्णुसिंह महाराणा की सेना के साथ नहीं गया। इसपर अप्रसन्न होकर महाराणा ने अपने मुसाहब धायभाई नगराज और पंचोली कान्हू सहीवाले के साथ बांसवाड़े पर सेना भेजी तब विवश होकर महारावल ने सेना-व्यय के ८५००१ रुपये नक़द

(१) वाड पण्ड पासेनीज़; सिलेक्शन्स फ़ॉम दि सतारा राजाज़ पण्ड दि पेश-वाज़ डायरीज़, तिसद १, पृ० १०१-२ ।

उपर्युक्त मरहटी सेना के मुकाबले में जो राजपूत काम आये, उनके स्मारक बांसवाड़ा राज्य में कई स्थानों पर बने हुए हैं और उनपर युद्ध की तिथि और वीर-गति प्राप्त होनेवाले व्यक्तियों के नाम एवं उनके कंठा(काटसिंह)की सेना से युद्ध करने का उल्लेख है।

(२) वीरविनोद प्रकरण ग्यारहवें में इस पत्र की नकल मुद्रित हुई है।

एक मास में देने का रुक्का' लिख महाराणा की सेना को बांसवाड़ा से लौटा दिया ।

महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास का कथन है—“महारावल विशनसिंह, महाराणा की नौकरी में आते जाते रहे । जब ईंडर के महाराजा आनंदसिंह पर महाराणा ने फौज भेजी तो रावल विशनसिंह नहीं गया । न जाने सर्कशी से या इस सबब से कि उस फौज का अफसर भींडर का महाराज था^१ ।”

उदयपुर राज्य के पुराने चित्रसंग्रह में महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) के समय का दशहरे के दरबार का एक चित्र है, जिसमें बाईं तरफ़ की

(१) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ग्यारहवां ।

कविराजा श्यामलदास ने उपर्युक्त रुक्के की नक़ल भी उद्धृत की है, जो इस प्रकार है—

॥ श्री ॥

लीखतं १ रु० ८५००१ रो बांसवाला रो तीरी नकल

सावत

सीधश्री दीवाणजी आदेसातु, प्रत दुए धान्नभाई नगजी पंचोली कान्हजी अप्रंच । बांसवाला रा रावलजी अब कै फौज में नहीं आया जणी बावत वेड़ खरच रा रु० ८५००१ अखरे रुपीआ पच्यासी हजार कीचा सो एवारु पहली भरणा । खंदी नहीं रोकडा भरणा । सं० १७८६ बेसाख वदि ८ सने । रावलजी श्री वीसनसीधजी मतो, सोहुआण अगरसीध लखतं ।

चौहान अगरसिंह, बनकोड़ा (डूंगरपुर राज्य) के सरदार केशरीसिंह का पुत्र था । वह डूंगरपुर से बांसवाड़े चला आया और वहाँ के स्वामी को प्रसन्न कर उसने अपनी प्रतिष्ठा में वृद्धि की । अगरसिंह, उस समय महारावल के विश्वासपात्र व्यक्तियों में था । उसके वंशजों में इस समय गढ़ी का ठिकाना मुख्य है, जो बांसवाड़ा राज्य के अन्तर्गत है ।

(२) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ग्यारहवां ।

पंक्ति में गद्दी के नीचे महारावल विष्णुसिंह बैठा हुआ बतलाया है^१। इससे अनुमान होता है कि महारावल दशहरे के अवसर पर उदयपुर जाता आता रहा होगा।

महारावल विष्णुसिंह ने अपनी बहिन गुमानकुंवरी का विवाह वि० सं० १७८७ श्रावण वदि ११ (ई० सं० १७३० ता० २६ जून) को बूंदी के पद-

महारावल की बहिन का
विवाह

च्युत महाराव राजा बुधसिंह से कर दिया। राज्य छूट जाने से बुधसिंह उन दिनों महाराणा संग्राम-सिंह के पास उदयपुर में आ रहा था और वहीं से

वह बरात लेकर बांसवाड़े गया, जहां महारावल ने उसे तीन महीने तक रक्खा और बहुत सा दहेज देकर विदा किया^२।

उदयपुर राज्य के दफ्तर की एक प्राचीन बही में महारावल विष्णु-सिंह के पुत्र उदयसिंह को वि० सं० १७८६ पौष सुदि २ (ई० सं० १७३२ ता० ८ दिसम्बर) को तलवार बंधवाना लिखा है^३।

महारावल का देहांत

इसके आधार पर कविराजा श्यामलदास ने महारावल विष्णुसिंह का देहांत वि० सं० १७८६ (ई० सं० १७३२) के पूर्व होना माना है^४, किन्तु उक्त महारावल की स्मारक छत्री के लेख में

(१) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ग्यारहवां।

(२) मिश्रण सूर्यमल; वंशभास्कर, भाग ४, पृ० ३१६६-६७, छंद ८-१६।

(३) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ग्यारहवां।

उपर्युक्त उदयपुर राज्य के पुराने दफ्तर की एक बही के आधार पर वीरविनोद में महारावल उदयसिंह को वि० सं० १७८६ पौष शुक्ला २ को तलवार बंधवाना लिखकर उसकी अंग्रेजी तारीख २० दिसम्बर ई० सं० १७३२ दी है, जो ठीक नहीं है। उस दिन दिसम्बर की आठवीं तारीख थी। तारीख की गड़बड़ी और महारावल विष्णुसिंह के स्मारक-लेख को देखते हुए हम को उक्त बही में दिये हुए संवत् १७८६ के सही होने में सन्देह होता है। आठ और नौ के अङ्क समान होकर थोड़े से अन्तर से लिखे जाते हैं। सम्भव है कि 'वीरविनोद' छपते समय अम से संवत् १७६६ को १७८६ लिख दिया गया हो।

(४) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ग्यारहवां।

(आषाढादि) वि० सं० १७६३ (चैत्रादि १७६४) चैत्र सुदि ७ (ई० सं० १७३७ ता० २७ मार्च) को उसका देहांत होना और (आषाढादि) वि० सं० १८०० (चैत्रादि १८०१) ज्येष्ठ सुदि ६ (ई० सं० १७४४ ता० ६ मई) को उसकी स्मारक छत्री की प्रतिष्ठा होने का स्पष्टतः उल्लेख है। ऐसी स्थिति में महारावल का देहांत छत्री के लेख में दिए हुए संवत् में ही मानना युक्ति-संगत है।

महारावल विष्णुसिंह के चार राणियां थीं, जिनमें से तीसरी राणी चौहान विजयकुंवरी के गर्भ से कुंवर उदयसिंह और पृथ्वीसिंह^२ का जन्म हुआ, जो क्रमशः बांसवाड़े के स्वामी हुए।

महारावल विष्णुसिंह के समय के वि० सं० १७७० से १७९४ (ई० सं० १७१३ से १७३७) तक के शिलालेख और ताम्रपत्र मिले हैं, जिनमें से अधिकांश युद्ध में मारे गये वीरों की स्मृति के सूचक हैं। नीचे उन लेखों आदि का कुछ व्यौरा दिया जाता है, जिनसे वहां के इतिहास और उस समय की स्थिति पर कुछ प्रकाश पड़ता है—

(१) वि० सं० १७७० कार्तिक सुदि १ (ई० सं० १७१३ ता० ६

(१) सं० १७६३ वर्षे चैत्र शुद ७ महारात्रोल श्रीविष्णुसिंहजी देवलोक पधारा शति १ पाशवान बाई रूपाए सहगमन कीधो सं० १८०० वर्षे जेठ शु० ६ माताजी श्रीपुरवणीजी रूपकुंऐरजी छत्री प्रतिष्ठा किधि।

(मूल लेख से)।

उपर्युक्त छत्री के लेख में उल्लिखित पुरवणी रूपकुंवरी महारावल भीमसिंह की राणी थी, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है।

(२) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र ८, पृ० २।

एक ख्यात में महारावल विष्णुसिंह के एक पुत्र का नाम जेतसिंह भी लिखा है।

अक्टोबर) के गांव सूजा के गुढ़े के दो लेख, जिनमें देवड़ा लीमा और चौहान सूजा का महारावल विष्णुसिंह की सेना में रहकर गढ़ टूटते समय काम आने का उल्लेख है। इन दोनों लेखों से यह ज्ञात नहीं होता कि उपर्युक्त व्यक्ति किस प्रतिपदी से लड़कर मारे गये।

(२) वि० सं० १७७१ मार्गशीर्ष सुदि १२ (ई० सं० १७१४ ता० ७ दिसम्बर) भौमवार का मेतवाला गांव का लेख, जिसमें चौहान केशवदास के महाराणा की सेना से लड़कर मारे जाने का उल्लेख है।

(३) (आषाढादि) वि० सं० १७७६ (चैत्रादि १७८०) चैत्र सुदि ५ (ई० सं० १७२३ ता० ३० मार्च) का सांगवा गांव का लेख, जिसमें बाघेला पूंजा के काम आने का उल्लेख है।

(४) वि० सं० १७८१ माघ सुदि १० (ई० सं० १७२५ ता० १२ जनवरी) के ऊंदेरा (अर्थूणा के पट्टे) के दो लेख, जिनमें राठोड़ जेतसिंह, सरूपसिंह और चौहान रूपा एवं ठाकुर जेतसिंह के भाई कीर्तिसिंह का शत्रु-सैन्य से लड़कर मारा जाना लिखा है, परन्तु यह ज्ञात नहीं होता कि यह युद्ध किस शत्रु से हुआ।

(१) संवत् १७७१ ना मगसर (मार्गशीर्ष) सुद (दि) १२ भुम (भोमे) सहुआण (चौहान) केस(श)वदासजी काम आव्या। फोज श्रीदीवाणजी नी आवी तारे काम आव्या।

(मूल लेख की नक़ल से)।

‘दीवाणजी’ शब्द महाराणा का सूचक है। मेवाड़ के महाराणा अपने इष्टदेव एकलिंगजी को मेवाड़ के स्वामी और अपने को उनका ‘दीवाण’ मानते हैं, जिससे उनकी एक उपाधि ‘दीवाण’ भी हो गई है, जो अब तक परवानों आदि में लिखी जाती है। कितने ही लोग उनको ‘दीवाण’ शब्द से संबोधन करते हैं एवं कविता में भी कहीं-कहीं ‘दीवाण’ शब्द का प्रयोग किया जाता है। उदयपुर राज्य के इतिहास में बांसवाड़ा राज्य पर वि० सं० १७७१ (ई० सं० १७१४) में चढ़ाई होने का कहीं उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु बांसवाड़ा राज्य और मेवाड़ की सीमा मिली हुई है, जिससे संभव है कि उस वर्ष कोई सीमा सम्बन्धी बखेड़ा हो गया हो और महाराणा की सेना वहाँ पहुंची हो।

(५) वि० सं० १७८४, शाके १६४६ मार्गशीर्ष सुदि ७ (ई० स० १७२७ ता० ६ नवम्बर) का बांसवाड़ा के राजतालाव पर का लेख, जिसमें सोलंकी सरदारसिंह का महारावल बिष्णुसिंह की सेना में रहकर मृत्यु पाने का उल्लेख है ।

(६) वि० सं० १७८५ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि १४ (ई० स० १७२८ ता० १६ नवम्बर) का गांव भाला का गुढ़ा का लेख, जिसमें कंठा की सेना से लड़कर भाला राजश्री सरूपसिंह के साथ चौहान धन्ना की मृत्यु होने का उल्लेख है^१ ।

(७) वि० सं० १७८५ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि १४ (ई० स० १७२८ ता० १६ नवम्बर) भौमवार का पाराहेड़ा के भंव-रिया गांव का लेख, जिसमें मेड़तिया गोपीनाथ के पुत्र मेड़तिया बस्ता के कंठा की फौज से लड़कर मारे जाने का उल्लेख है ।

(८) वि० सं० १७८५ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि १४ (ई० स० १७२८ ता० १६ नवम्बर) भौमवार के अडोर गांव के ११ लेख, जिनमें कंठा की फौज से लड़कर उक्त गांव के ठाकुर मोहकमसिंह के साथ में रहकर चौहान परबत, सीसोदिया भूमा, चौहान मदन आदि राजपूतों के काम आने के उल्लेख हैं ।

(९) वि० सं० १७८५ मार्गशीर्ष सुदि ४ (ई० स० १७२८ ता० २३ नवम्बर) का गांव भाला का गुढ़ा का लेख, जिसमें भाला सरूपसिंह का सदीलाव मगरे के घेरे में तलवाड़ा गांव में (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि १४ उग्रान्त अमावास्या (ई० स० १७२८ ता० १६ नवम्बर) को कंठा की फौज से लड़कर मारे जाने का उल्लेख है ।

(१०) वि० सं० १७८६ कार्तिक सुदि १४ (ई० स० १७२९ ता० २४ अक्टोबर) शनिवार के अडोर गांव के दो लेख, जिनमें मेड़तिया ठाकुर मोहकमसिंह और रावल सरूपसिंह के गनीम (शत्रु) कंठा की सेना-द्वारा

(१) लेखसंख्या ६, ७, ८, ९ और १० में उल्लिखित 'कंठा' शब्द का तात्पर्य मरहटे सेनापति सवाई काटसिंह कदमराव से है ।

घेरे जाने पर, शत्रु से लड़ते हुए वि० सं० १७८५ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि १४ (ई० सं० १७२८ ता० १६ नवम्बर) को मारे जाने और उनके स्मारकों की उपर्युक्त दिन प्रतिष्ठा होने का उल्लेख है।

(११) वि० सं० १७६० आश्विन सुदि १३ (ई० सं० १७३३ ता० ११ अक्टोबर) का गुरु बल्लराम तख्तराम के नाम का राणी विनेकुंबरी राठोड़ का ताम्रपत्र, जिसमें गोत्रिरात्र व्रत के उद्यापन के समय रहूँट १ सुतारिया दान करने का उल्लेख है।

(१२) वि० सं० १७६३ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि १३ (ई० सं० १७३६ ता० २० अक्टोबर) बुधवार का हिंगोलिया गांव का ताम्रपत्र।

महारावल विष्णुसिंह के समय बांसवाड़ा राज्य की स्थिति सामान्य ही रही। मुगल साम्राज्य की निर्बलता का अवसर पाकर मेवाड़ के महाराणाओं ने जब उसकी शक्ति को दबाने का यत्न किया तो उसने उस समय मरहटों का अभ्युदय देख उनके संरक्षण में जाकर उन्हें खिराज देना स्वीकार कर लिया। बादशाही फ़रमान होने से इधर मेवाड़ राज्य और उधर मरहटे सेनापति जब उसे दबाते तब वह नीति से काम लेकर अपने राज्य को बचाता था।

गढ़ी ठिकाने की ख्यात में लिखा है कि उदयपुर के महाराणा की शाहपुरे पर चढ़ाई हुई, उस समय बांसवाड़ा के महारावल ने ठाकुर उदयसिंह को सेना देकर भेजा था, जिसपर प्रसन्न होकर महाराणा ने चुंडा का परगना, जो पहले बांसवाड़े से जुक्त हो गया था, पीछा दे दिया। उस सेवा के उपलक्ष्य में महारावल ने चौहान उदयसिंह को पडाल गांव दिया। शाहपुरे पर महाराणा जगतसिंह (दूसरा) के समय वि० सं० १७६२ (ई० सं० १७३५) में चढ़ाई हुई थी। गढ़ीवालों के पूर्वज ठाकुर अगरसिंह की मृत्यु वि० सं० १७६४ (ई० सं० १७३७) में होने का लेख चींच

गांव में विद्यमान है। अतएव संभव है कि वह (उदयसिंह) अपने पिता अगरसिंह की विद्यमानता में सेना-नायक बनाकर भेजा गया हो।

उदयसिंह

महारावल विष्णुसिंह का देहांत होने पर वि० सं० १७६३ (ई० स० १७३७) में उसका पुत्र उदयसिंह चार वर्ष की आयु^१ में बांसवाड़े की गद्दी पर बैठा।

ख्यातों से पाया जाता है कि उस (उदयसिंह) की बाल्यावस्था के कारण उसका मामा गुलालसिंह चौहान (अर्थूणा का) राज्य का समस्त कार्य चलाता था, जिससे सरदार प्रायः असन्तुष्ट थे। इस कारण पारस्परिक वैमनस्य होकर वहां बड़ा उपद्रव मचा और चौहान सरदार राज्य से उदासीन हो गये। इतने में धार की सेना ने आकर खिराज की वसूली के लिए बांसवाड़ को घेर लिया^२। राजा बालक, खज़ाना खाली और सरदार असन्तुष्ट, फिर राज्य की रक्षा किस प्रकार हो सकती थी ? निदान शत्रु-सेना से तंग हो कर राज्य के सरदार बालक महारावल को लेकर भूतवे की पाल में चले गये। फिर मरहटी सेना ने वहां लूटमार आरम्भ की और राज्य के मुख्य कार्यकर्त्ता कैद कर लिये गये, किन्तु इसपर भी उन्हें कुछ न मिला तो उन्होंने राज-महलों को, जहां छिपा हुआ द्रव्य होने का संदेह था, खुदवाया। स्वामि-भक्त सरदारों ने यथा-साध्य देश को बचाने की चेष्टा की और कई सरदार अपने राजपूतों सहित शत्रु-सैन्य से लड़कर मारे गये।

(१) बांसवाड़ा राज्य की एक पुरानी वंशावली।

(२) वि० सं० १७६८ (ई० स० १७४१) में वागड़ पर मरहटी सेना का आक्रमण हुआ था, ऐसा मेवाड़ के कानोड़ ठिकाने की ख्यात और काराजों से पाया जाता है। उस सेना का मेवाड़ में आगमन होने पर महाराणा ने उसका मुकाबला करने के लिए कानोड़ के रावत पृथ्वीसिंह को भेजा, जिसका वर्णन मेरे 'राजपूताने के इति-हास' की जि० २, पृ० ६४५ में किया जा चुका है।

इस उत्पात से राज्य में बहुत दिनों तक अशांति बनी रही और राज्य संभलने भी नहीं पाया था कि साढ़े तेरह वर्ष की आयु में वि० सं० १८०३ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि (ई० सं० १७४६ सितम्बर) में महारावल उदयसिंह का देहांत हो गया^१। एक पुरानी ख्यात में विठ्ठलदेव के निकट के नीलकंठ महादेव में रहते समय उसका देहांत आश्विन सुदि ३ को होना बतलाया है तथा बड़वे की ख्यात में उसके दो राणियां भी होने का उल्लेख है^२।

महारावल उदयसिंह के समय के एक दानपत्र और तीन शिलालेख महारावल के समय के मिले हैं, जो वि० सं० १७६४ से ६६ (ई० सं० १७३७ से ३६) तक के हैं। उनका आशय नीचे लिखे अनुसार है—

(१) वि० सं० १७६४ (अमांत) मार्गशीर्ष (पूर्णिमांत पौष) वदि ४ (ई० सं० १७३७ ता० ३० नवम्बर) के चींच गांव के दो शिलालेख, जिनमें चौहान अग्रसिंह^३ और चंदनसिंह का महारावल उदयसिंह के समय काम आने का उल्लेख है।

(१) महाराजाधिराज महारावल श्रीउदयसिंहजी देवलोक पधारा सं० १८०३ ना आसो[ज]वद ते मुरती खंडीत थई हती ते सं० १८६३ ना जेठसुद १५ दीने बीजी मुरती बेसारी मारफत ठाकर अरजणसिंहजी दसगत जानी लखमीचंद।

(महारावल उदयसिंह की छत्री के लेख की छाप से)।

अर्जुनसिंह (अरजणसिंह) चौहाण गढ़ी का स्वामी था और वि० सं० १८२३ (ई० सं० १८३६) में बांसवाड़ा राज्य का मुख्य कार्यकर्ता था।

(२) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र ८, पृ० १।

(३) स्वस्ति श्रीसंवत् १७६४ वर्षे मार्गशीर्ष वदि ३ दिने चौ-आण श्रीअग्रसिंहजी रात्रोल श्रीउदयसिंहजी की नानोअ (बाल्या-वस्था) में काम आव्या।

(ठाकुर अग्रसिंह की छत्री के मूल लेख की छाप से)।

(२) वि० सं० १७६५ मार्गशीर्ष सुदि ७ (ई० सं० १७३८ ता० ६ दिसम्बर) का अर्थुणा ठिकाने के बखतपुरा गांव का शिलालेख, जिसमें चौहान बहादुरसिंह का भारतसिंह के साथ रहकर काम आना लिखा है^१ ।

(३) वि० सं० १७६६ कार्तिक सुदि १० (ई० सं० १७३९ ता० ३० अक्टोबर) भौमवार का ताम्रपत्र, जिसमें राजमाता विनयकुंवरी के वार्षिक-श्राद्ध के अवसर पर गांव ईसरीवास में जोशी दलता को ३ हल भूमि दान करने का उल्लेख है^२ ।

अगरसिंह तथा उसके भाई चंदनसिंह को बांसवाड़े आने पर प्रारम्भ में महारावल विष्णुसिंह ने निर्वाह के लिए कुछ जीविका निकाल दी; फिर अगरसिंह को सेमलिया और चंदनसिंह को बसी गांव दिया । अगरसिंह के वंशजों ने आगे चल कर बड़ी उन्नति की और अपने लिए गद्दी का एक बड़ा ठिकाना बना लिया । 'गद्दी की ख्यात' में लिखा है कि महारावल विष्णुसिंह का कुटुम्बी भारतसिंह और उसका पुत्र रुद्रसिंह (नौगामावाला) राज्यद्रोही हो गये, उस समय उन्हें दंड देने के लिए अगरसिंह को सेनानायक बनाकर भेजा । चींच गांव में युद्ध हुआ, जहां अगरसिंह और चंदनसिंह मारे गये, जिनके स्मारक वहां बने हुए हैं तथा उन दोनों पर लेख हैं ।

भारतसिंह, महारावल अजयसिंह का पुत्र था, जिसका वर्णन ऊपर किया गया है । यदि वह कथन ठीक हो तो यही मानना पड़ेगा कि भारतसिंह से वि० सं० १७६४ (ई० सं० १७३७) के अतिरिक्त वि० सं० १७६५ (ई० सं० १७३८) में भी बांसवाड़ा राज्य की सेना से युद्ध हुआ, जिसमें चौहान बहादुरसिंह, भारतसिंह के पक्ष में रहकर लड़ता हुआ मारा गया ।

(१) संवत् १७६५ वर्षे मागसरसुदि ७ देने चहुआण श्रीवादर-सिंगजी काम आवा सेती भारतसिंघजी नी फोज महे काम आवा फोज में ।

(मूल लेख की छाप से) ।

(२) विनयकुंवरी महारावल विष्णुसिंह की राठोड़ राणी थी और वह कुशाल-गढ़ के ठाकुर की पुत्री थी ।

पृथ्वीसिंह

महारावल पृथ्वीसिंह अपने भाई उदयसिंह की मृत्यु होने पर वि० सं० १८०३ (ई० सं० १७४६) में बांसवाड़े का स्वामी हुआ^१। उस समय वह बालक था और राज्य में चारों ओर प्रबल रूप से अशांति फैली हुई थी।

ऐसी दशा में धार के ऊदाजी पंवार का भाई आनंदराव चढ़े हुए खिराज की वसूली के लिए अपनी सेना सहित बांसवाड़े आ पहुँचा।

धार के स्वामी आनंदराव
का बांसवाड़ा आना

उन दिनों राज्य की आर्थिक दशा संतोषप्रद न होने से खिराज यथासमय दिया नहीं जाता था। इस-

लिए आनंदराव ने आकर बांसवाड़े को घेर लिया और प्रजा पर सख्ती होने लगी। तब सरदार लोग बालक महारावल को लेकर सुरक्षित स्थान में चले गये। आनंदराव ने बड़ी ही निर्दयतापूर्वक लूटमार कर २५००० हजार रुपये वसूल किये तथा बाक़ी रुपयों के एवज़ में कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों को पकड़कर वह अपने साथ ले गया। फिर उस (आनंदराव) की मृत्यु होने पर उसका पुत्र जसवंतराव (प्रथम) धार का स्वामी हुआ। पेशवा अपने सरदारों की बेईमानी जानता था, अतएव चढ़े हुए खिराज की पूरी रकम वसूल न होने में अपनी अप्रतिष्ठा समझ उसने मेघश्याम बापूजी नामक सेनानायक को इस मामले का निबटेरा करने के

(१) बांसवाड़ा राज्य के बढ़वे की ख्यात में महारावल पृथ्वीसिंह की गद्दी-नशीनी वि० सं० १८०४ आश्विन सुदि ३ (ई० सं० १७४७ ता० २६ सितम्बर) को होना लिखा है, परन्तु महारावल उदयसिंह का देहांत वि० सं० १८०३ (ई० सं० १७४६) में होना उसकी छत्री के लेख से प्रामाणित है, अतएव महारावल पृथ्वीसिंह की वि० सं० १८०३ में ही गद्दीनशीनी होना निश्चित है।

‘गद्दी ठिकाने की ख्यात’ में लिखा है कि महारावल विष्णुसिंह का उत्तराधिकारी उसका भतीजा पृथ्वीसिंह हुआ, जो ठीक नहीं है। विष्णुसिंह का उत्तराधिकारी उसका ज्येष्ठ पुत्र उदयसिंह हुआ, पर वह निःसंतान था, इसलिए उदयसिंह की मृत्यु होने पर उसका छोटा भाई पृथ्वीसिंह राज्य-सिंहासन पर बैठा। पृथ्वीसिंह विष्णुसिंह का भतीजा नहीं, किन्तु पुत्र था।

लिए नियत किया, जिसने वि० सं० १८०५ (ई० सं० १७४६) में अपनी सेना सहित बांसवाड़े जाकर पंवार-द्वारा पहले वसूल हुए २५००० रुपयों के अतिरिक्त ४५००० रुपये उस वर्ष के खिराज के, १३००० रुपये पहले के चढ़े हुए खिराज के और १४००० रुपये सेना-व्यय के कुल ७२००० रुपये ठहराकर फैसला किया। उनमें से २४००० रुपये जो आसामी कैद थे, उनके मुक्त होने पर और शेष ज्येष्ठ मास में लेना स्थिर हुआ। अंत में उस (मेघश्याम) ने जिस प्रकार पंवार-द्वारा खिराज की वसूली में पहले निर्दयता हुई थी, भविष्य में उस प्रकार निर्दयता न होने और व्यवस्थितरूप से खिराज वसूल करने का महारावल आदि को विश्वास दिलाकर संतुष्ट किया^१।

ख्यात में लिखा है कि महारावल पृथ्वीसिंह सितारे जाकर राजा शाहू से मिला और वहां प्रतिवर्ष नियमित रूप से खिराज देने का इत्तफाक कर मरहटे सेनापतियों की चढ़ाई से मुक्त हुआ। इसकी पुष्टि उपर्युक्त महारावल के समय के दो ताम्रपत्रों से होती है, जिनमें वि० सं० १८०४ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि ६ (ई० सं० १७४७ ता० १६ अक्टोबर) शुक्रवार^२ को उसके उज्जैन में जिप्रा के तट पर रहूँट दान करने का और

(१) वाड एण्ड पासेनीस; सिलेक्शन्स फ्रॉम दि सतारा राजाज एण्ड दि पेशवाज डायरीज; जिल्द ३, बालाजी बाजीराव, संख्या ३८ में दिया हुआ हरिविठ्ठल का पत्र, पृ० २६-२८।

‘गद्दी की ख्यात’ में यह भी लिखा है कि मोलां का सरदार सौभागसिंह महारावल पृथ्वीसिंह को राज्यन्युत करना चाहता था, परन्तु उसकी बात नहीं चली, जिसपर वह मरहटा सैन्य को बांसवाड़े पर चढ़ा लाया। इसका मिलान अन्य ख्यातों से तो नहीं होता, परन्तु सम्भव है कि जसवन्तराव पंवार की बांसवाड़े पर चढ़ाई का एक कारण यह भी हो और इसी कारण से महारावल पृथ्वीसिंह राजा शाहू के पास सतारा गया हो तो भी आश्चर्य नहीं।

(२) स्वस्ती श्रीबांसवाला शुभस्थाने महाराजाधिराज महारावल श्रीपृथ्वीसिंहजी विजयराज्ये जानी वसीहा सुतभास्कर.....रुट

सतारा से पीछे आते समय वि० सं० १८०६ (चैत्रादि १८०७, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि^१ (ई० सं० १७५० मई) में गोदावरी तीर्थ में स्नान करते समय गांव छोटी पाड़ी पाठक गोपाल को दान करने का उल्लेख है । इससे स्पष्ट है कि जसवंतराव पंवार की सेना ने आकर बांसवाड़े को घेर लिया, तब वि० सं० १८०४ (ई० सं० १७४७) में महारावल ने सितारा जाकर शिकायत की । इसपर मेघश्याम बापूजी इस मामले को शांत करने के लिए नियत हुआ, जिसका वर्णन ऊपर हो चुका है । फिर वि० सं० १८०७ (ई० सं० १७५०) में महारावल बांसवाड़े लौटा ।

‘गुजरात राजस्थान’ के कर्त्ता कालीदास देवशंकर पंड्या का कथन है कि स्र्थ के राणा रतनसिंह की कुंवरी का विवाह बांसवाड़ा के राजा के

(रहँट) १ चणा खारा माहे सेवक केसवावालो श्रीरामार्पणे आप्यो श्री-
उजेण मध्ये क्षीप्राजी माहे आप्यो छे नदीना टावा थी मांडीने मशीत
नी वाट सूधी पाटीयु छे जानी नाथा रायेला रुटनी लागतो थो.....
.....संवत १८०४ वरषे आसोज वदि ६
शुक्रवासेरे..... ।

(मूल ताम्रपत्र की प्रतिलिपि से) ।

(१) महाराजाधिराज महारात्रोल श्रीपृथ्वीसिंहजी आदेशात् पाठक
गोपालजी.....गाम पाड़ी छोटी स्वस्ती पत्रे आपी छे.....
दक्षिण सतारा री मुंम (मुहिम) करी पाछा आवते श्रीगोदावरी गंगा
मध्ये संवत १८०६ ना वैसाखवद.....तीरथमध्ये स्नान करी ने श्री-
रामार्पण तुलसीपत्रे दत्ते.....स्वस्ती भणावीछे.....
.....संवत् १८०७ मास माघ सुदी ६ वार चन्द्रे
..... ।

(मूल ताम्रपत्र की प्रतिलिपि से) ।

राणा रत्नसिंह के पुत्रों को मरवा- साथ हुआ था। जब रत्नसिंह का देहांत हुआ
कर बांसवाड़ा वालों का संध तो बांसवाड़ा की तरफ से शोक प्रदर्शनार्थ सर-
पर अधिकार करना दार लोग संध गये। उस समय रत्नसिंह का
उत्तराधिकारी (ज्येष्ठ पुत्र) बालक था। इसलिए इस अवसर का लाभ
उठाने के लिए बांसवाड़ा के सरदारों ने मृत राणा रत्नसिंह के तीन पुत्रों
को मारकर संध पर अधिकार कर लिया। चौथा पुत्र बदनसिंह उस
समय बच गया था, जिसको कोली (खांट) अपनी बस्ती में लेकर चले
गये। बांसवाड़ा से बैर लेने की बात ध्यान में रखकर वे थोड़े दिन तक
चुप बैठे रहे। फिर उन्होंने संध पर आक्रमण कर बांसवाड़ा वालों को
भगा दिया। कोलियों ने बालक राजा बदनसिंह को गद्दी पर बिठलाया और
जब तक वह योग्य न हुआ, तब तक वे उसकी रक्षा करते रहे। आगे
जाकर बदनसिंह शूरवीर राजा हुआ, जिसने बांसवाड़े का कितना एक
प्रदेश भी ले लिया^१।

(१) पृ० १६८। 'बांसवाड़ा राज्य के बढ़वे की ख्यात' में इस घटना का
कुछ भी उल्लेख नहीं है, परन्तु उक्त ख्यात से प्रकट है कि उसकी एक राणी संध की
राजकुमारी थी।

'गद्दी ठिकाने की ख्यात' में लिखा है—“लूणावाड़े की तरफ से एक चारण
ठाकुर उदयसिंह के पास मांगने आया। उसने उस (उदयसिंह) के कुटुम्बी गंभीरसिंह
के (जो संध वालों के द्वारा मारा गया था) बैर न लेने की बात कविता में कही, जिस-
पर ठाकुर उदयसिंह ने संध पर चढ़ाई कर शेरगढ़ का इलाका छीन लिया,” परन्तु
असंकेतित के 'बांसवाड़ा राज्य के गैज़ेटियर' और दि रूलिंग प्रिंसेज् चीफ्स एण्ड लीडिंग
परसोनेज् इन राजपूताना एण्ड अजमेर' में गद्दी ठिकाने के वर्णन में संध के शेरगढ़
और चिलकारी के परगने बांसवाड़ा राज्य की सेना-द्वारा, जो गद्दी के ठाकुर उदयसिंह
की अध्यक्षता में भेजी गई थी, छीन लेना लिखा है।

उपर्युक्त दोनों कथनों में कौनसा कथन ठीक है, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा
सकता, किन्तु यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त परगने ठाकुर उदयसिंह के बुद्धिकौशल से ही
हाथ आये थे, इससे उनपर अब तक उदयसिंह के वंशजों का अधिकार चला आता है
और वहां के सायर (दाण) की आय भी दीर्घकाल तक वे ही लेते रहे थे।

‘हिंद राजस्थान’ के कर्त्ताओं ने भी बांसवाड़ा के सरदारों-द्वारा संध पर अधिकार किये जाने की यही कथा दी है^१।

बांसवाड़ावालों के इस प्रकार संध पर अधिकार कर लेने पर लूणावाड़ा के राणा बख्तसिंह की भी अपने राज्य विस्तार की लालसा जाग

लूणावाड़ा के राणा बख्तसिंह
से युद्ध होना

उठी और निर्वल संध राज्य को दबाने के लिए वह

भी अपने सैन्य के साथ आगे बढ़ा। लूणावाड़े की

हमारे संग्रह की एक हस्तलिखित ख्यात में लिखा

है कि संध पर बांसवाड़ावालों का अधिकार होने से राणा बख्तसिंह कृत-कार्य न हुआ और भग्न मनोरथ होकर लौटा^२। ‘बांसवाड़ा राज्य के बढ़ने की ख्यात’ में लिखा है—“बांसवाड़ा और लूणावाड़ा की सेना में युद्ध होने पर बांसवाड़ा की सेना ने राणा बख्तसिंह को पकड़ लिया और उस- (बख्तसिंह) का चाचा तथा दो सौ सैनिक काम आये एवं उसका नक्कारा-निशान महारावल की सेना के हाथ लगा^३।”

ख्यात के उपर्युक्त कथन का समर्थन महारावल पृथ्वीसिंह के समय के भीमगढ़ गांव के एक ताम्रपत्र की प्रतिलिपि से होता है, जिसमें वि० सं० १८१३ मार्गशीर्ष सुदि ५ (ई० सं० १७५६ ता० २६ नवम्बर) को लूणावाड़ा के स्वामी से युद्ध होने पर उसके काका उदयसिंह के मारे जाने एवं फ़ते-जंग नामक नक्कारा छीन लिये जाने का उल्लेख है^४, किन्तु उसमें लूणावाड़ा के स्वामी का नाम शक्तसिंह दिया है, जो ठीक नहीं है।

(१) मार्केड एन्. महता एण्ड मनु एन्. महता; हिंद राजस्थान (अंग्रेज़ी), पृ० ८३० ।

(२) हमारे संग्रह की लूणावाड़ा की हस्तलिखित ख्यात ।

(३) पत्र ६, पृ० २ ।

(४) रायाराय महाराजाधिराज महारावल श्रीपृथ्वीसिंहजी विजेराज्ये नगरा जोड़ी सूतरी फतेजंग गांव लूणावाड़े राणा सखतसिंहजी सूं कजीयो हुओ तारे आवी छे । सं० १८१३ ना मगसरसुदी ५ दने श्रीराउलजी ने फते हुई। राणा नाठा, फोज मराणी, राणा नो काको उदेसिंहजी मारा

महारावल के सितारा जाने से थोड़े दिनों के लिए पेशवा के सेना-पतियों-द्वारा होनेवाली लूटमार बन्द हो गई, पर जब खिराज चढ़ जाता, तभी मरहटी सेना आकर घेरा दे देती थी। उस समय कभी-कभी राजपूत भी लड़ मरते थे। वह अशांति का युग था, इसलिए बहुधा भीतरी भगड़े भी होते रहते और पड़ोसी राज्यों से भी सीमासम्बन्धी भगड़े हो जाते थे। ऐसी स्थिति में प्राणों की बाज़ी लगा देना साधारण बात थी, जिससे प्रतिवर्ष महारावल के राजपूतों की संख्या कम होती जाती थी। अतएव सैनिक बल बनाये रखने के लिए महारावल पृथ्वीसिंह ने भी बाहर से कई मुसलमान सैनिकों को बुलाकर नौकर रक्खा। इस राज्य में युद्ध में मारे जाने-वाले वीरों के स्मारक जगह-जगह बने हुए हैं और उनपर नाम, संवत् भिती तथा उनके युद्ध में काम आने का उल्लेख भी है, जो इतिहास के लिए

गया.....फोज सर्व मागी गई घोड़ी १ बेरी आर्वी छे इस इनाम में नगराची मामथ (महम्मद) ने गाम भीमगढ़ आप्यु छे ते तुं खुशी थी वापरजे जुगो जुग।

(मूल ताम्रपत्र की प्रतिलिपि से)।

उपर्युक्त ताम्रपत्र में लूणावाड़ा के स्वामी का नाम सखतसिंह (शक्रिसिंह) दिया है, जो ठीक नहीं है। 'लूणावाड़ा राज्य की ख्यात' और 'बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात' तथा अन्य पुस्तकों से स्पष्ट है कि सखतसिंह (शक्रिसिंह) नाम का वहां कोई राणा ही नहीं हुआ। यह युद्ध राणा बल्लतसिंह के साथ हुआ था।

यह युद्ध कहां पर हुआ था, यह अनिश्चित है। बांसवाड़ा राज्य के नवा गांव में कुंवर उदयराम का स्मारक है, जिसपर लूणावाड़ा की सेना से युद्ध होने और उसमें उस (उदयराम) के मारे जाने के सम्बन्ध का वि० सं० १८१३ मार्गशीर्ष सुदि ८ (ई० सं० १७५६ ता० २६ नवम्बर) का लेख है।

संवत् १८१३ वर्षे मागसरसुद ८ देने (दिने) कोअर (कुंअर) श्रीउदेरामजी काम आव्या संधवाला नी फोज लूणावाड़ा..... भगड़ो.....।

(मूल लेख की छाप से)।

उपयोगी है, परन्तु इनका विस्तृत वृत्तांत जानने के लिए अन्य कोई सामग्री उपलब्ध न होने से इनकी वास्तविकता प्रकाश में नहीं आती।

वि० सं० १८४२ (अमांत) फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि १४
 महारावल का देहांत (ई० स० १७८६ ता० २६ मार्च) को महारावल
 पृथ्वीसिंह ३६ वर्ष राज्य कर परलोक सिंधारा^१।

महारावल के सात राणियां थीं, जिनसे पांच कुंवर विजयसिंह,
 तख्तसिंह^२, बख्तसिंह^३, रणसिंह^४ (रणजीतसिंह)
 महारावल की राणियां और सतति और खुशहालसिंह^५ तथा बख्तकुंवरी एवं चांद-
 कुंवरी नामक दो पुत्रियां हुईं। बख्तकुंवरी का

(१) महाराजधिराज महारावल श्रीपृथ्वीसीधजी देवलोक पधारा
 सं० १८४२ ना फागणवद १४ दिने.....।

(महारावल पृथ्वीसिंह के छत्री के लेख की छाप से)।

(२) एक ख्यात में तख्तसिंह को महारावल पृथ्वीसिंह का दूसरा पुत्र लिखा
 है और तख्तसिंह के पीछे रणसिंह, बख्तसिंह एवं खुशहालसिंह के नाम दिये हैं, परन्तु
 बड़वे की ख्यात में तख्तसिंह का नाम ही नहीं है तथा रणसिंह का नाम बख्तसिंह के
 पीछे दिया है।

(३) बख्तसिंह को वि० सं० १८४६ (ई० स० १७८६) में महारावल
 विजयसिंह ने खांधू दिया। उसके वंशज खांधू, लोंधा, छापरिया और सकरवट के
 जागीरदार हैं।

(४) रणसिंह (रणजीतसिंह) को तेजपुर मिला। वह निःसंतान था, इस-
 लिए खांधू के महाराज बख्तसिंह का छोटा पुत्र बहादुरसिंह उस (रणसिंह) का उत्तरा-
 धिकारी हुआ। महारावल भवानीसिंह के पीछे, बहादुरसिंह के बांसवाबे का स्वामी
 हो जाने पर तेजपुर की जागीर खालसा हो गई। फिर महारावल लक्ष्मणसिंह ने वह
 ठिकाना अपने छोटे पुत्र सुजानसिंह को दिया, परन्तु वह निःसंतान ही गुजर गया। तब
 उक्त महारावल ने वहां अपने चतुर्थ पुत्र सजनसिंह को नियत किया, जो इस समय
 तेजपुर का सरदार है।

(५) खुशहालसिंह को सूरपुर की जागीर मिली। उसके दो पुत्र हमीरसिंह
 और बख्तावरसिंह थे। हमीरसिंह के पुत्र माधोसिंह की निःसंतान मृत्यु होने पर सूरपुर
 खालसे में आ गया, क्योंकि बख्तावरसिंह का पुत्र लक्ष्मणसिंह महारावल बहादुरसिंह के

विवाह वि० सं० १८२८ (ई० सं० १७७१) में बूंदी के महाराव राजा अजीत-सिंह से हुआ था^१। महारावल की एक राणी दौलतकुंवरी संध के राणा की पुत्री थी।

महारावल पृथ्वीसिंह ने राजधानी बांसवाड़ा की रक्षा के लिए चारों तरफ़ शहरपनाह बनवाई। उसने पृथ्वीविलास बाग़ और मोती-महल तैयार करवाये तथा राजधानी में पृथ्वीगंज बसाया। उसकी राठोड़ राणी अनोप-कुंवरी ने, जो मालवे के आमभरार के स्वामी की बेटी थी, वि० सं० १८५६ (ई० सं० १७९९) में लक्ष्मीनारायण का मंदिर बनवाया^२।

महारावल के बनवाये हुए महल, बाग़ आदि

महारावल के समय के शिलालेख व दानपत्र

महारावल के समय के वि० सं० १८०३ से १८४० (ई० सं० १७४६-१७८३) तक के शिलालेख व दान-पत्र मिले हैं, जिनमें से कुछ ऊपर उद्धृत किये गये हैं। शेष नीचे लिखे अनुसार हैं—

(१) गरखिया गांव का वि० सं० १८०३ (अमांत) पौष (पूर्णि-गांत माघ) वदि १२ (ई० सं० १७४६ ता० २८ दिसम्बर) का शिलालेख, जिसमें सरदारसिंह.....की सेना से लड़कर काम आने का उल्लेख है।

(२) मोलां गांव का वि० सं० १८०३ माघ सुदि १५ (ई० सं० १७४७ ता० १५ जनवरी) का शिलालेख, जिसमें चौहान दौलतसिंह का महारावल पृथ्वीसिंह के समय काम आने का उल्लेख है।

(३) डडूका गांव (पट्टे गढ़ी) के लक्ष्मीनारायण के मंदिर के पास खड़ा हुआ (आषाढादि) वि० सं० १८०४ (चैत्रादि १८०५, अमांत) चैत्र

पीछे बांसवाड़े का स्वामी हो गया और वहाँ कोई शेष न रहा। फिर महारावल लक्ष्मण-सिंह ने वह जागीर अपने पुत्र सूर्यसिंह को दे दी, जिसका पुत्र अभयसिंह, इस समय सूरपुर का सरदार है।

(१) वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, अजीतसिंहचरित्र, पृ० ३७६८।

(२) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात बी.नरकल; पत्र ६, पृ० २।

(पूर्णिमांत वैशाख) वदि ३ (ई० स० १७४८ ता० ५ अप्रैल) का शिलालेख, जिसमें कुछ भूमि दान करने का उल्लेख है ।

(४) चिताव गांव (पट्टे कुंडला) का वि० सं० १८०५ माघ सुदि ५ (ई० स० १७४६ ता० १२ जनवरी) का शिलालेख, जिसमें राठोड़ नाथजी केसेना से लड़कर काम आने का उल्लेख है ।

(५) बांसवाड़ा के राजतालाब का वि० सं० १८१२ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १७५५ ता० १८ सितम्बर) का शिलालेख, जिसमें आभ्यन्तर नागर ज्ञाति के पंड्या उत्तमचन्द-द्वारा रुद्रेश्वर का शिवालय एवं सन्मुख-द्वारा बासवाड़े के राजतालाब पर एक घाट बनवाये जाने का उल्लेख है ।

(६) बांसवाड़ा के राजतालाब का वि० सं० १८१२ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि ८ (ई० स० १७५५ ता० २८ अक्टोबर) का शिलालेख, जिसमें आभ्यन्तर नागर ज्ञाति के जानी रंगेश्वर-द्वारा ५०१ रुपये व्यय कर राजतालाब पर एक घाट बनवाने का उल्लेख है ।

(७) सेरा गांव का बारहट गोरधनदास के नाम का वि० सं० १८१२ (अमांत) फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि ४ (ई० स० १७५६ ता० २० मार्च) का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव का एक भाग प्रदान करने का उल्लेख है ।

(८) टेकला गांव का मेहड़ मयानाथ के नाम का वि० सं० १८१३ (अमांत) भाद्रपद (पूर्णिमांत आश्विन) वदि ४ (ई० स० १७५६ ता० १२ सितम्बर) का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव देने का वर्णन है ।

(९) तरवाड़ी मोरली (मुरली) सुत अमरा अंदरिया के नाम का वि० सं० १८१५ कार्तिक सुदि ११ (ई० स० १७५८ ता० ११ नवंबर) का ताम्रपत्र, जिसमें रहूँट व दुकानें दान करने का उल्लेख है ।

(१०) कोनिया गांव के तालाब का वि० सं० १८१५ पौष सुदि १ (ई० स० १७५८ ता० ३१ दिसंबर) का शिलालेख, जिसमें राठोड़ बाघ-सिंह का युद्ध में काम आना लिखा है ।

(११) कोनिया गांव के तालाब के वि० सं० १८१५ (अमांत) माघ (पूर्णिमांत फाल्गुन) वदि १ (ई० स० १७५६ ता० १३ फरवरी) के

दो लेख, जिनमें कुंवर दुलहसिंह व राठोड़ सामंतसिंह की (युद्ध में) मृत्यु होने का वर्णन है ।

(१२) कोनिया गांव का वि० सं० १८१५ (अमांत) माघ (पूर्णि-
मांत फाल्गुन) वदि ६ (ई० स० १७५६ ता० १८ फरवरी) का शिलालेख,
जिसमें ढोली वज्रा की युद्ध में मृत्यु होने का उल्लेख है ।

(१३) तली गांव का (आपाढादि) वि० सं० १८१६ (चैत्रादि १८१७)
चैत्र सुदि १ (ई० स० १७६० ता० १८ मार्च) मंगलवार का ताम्रपत्र, जिसमें
सौदा चरण समर्थ को गांव तली देने का उल्लेख है ।

(१४) उबरडी (?) गांव का बारहट मनोहरदास के नाम का वि०
सं० १८१७ माघ सुदि ५ (ई० स० १७६१ ता० १० फरवरी) का ताम्रपत्र,
जिसमें महारावल पृथ्वीसिंह-द्वारा उक्त गांव बारहट मनोहरदास को
दान दिये जाने का विवरण है ।

(१५) सरवाणिया गांव का वि० सं० १८२० (अमांत) कार्तिक (पूर्णि-
मांत मार्गशीर्ष) वदि १ (ई० स० १७६३ ता० २० नवम्बर) का लेख, जिसमें महा-
रावल पृथ्वीसिंह के समय चौहान उदयसिंह की प्रमुखता में पटेल प्रेमा सुत
शेखा का शत्रु सेना से लड़कर मारे जाने का उल्लेख है ।

(१६) उमेदगढ़ी का लेख, जिसमें (आपाढादि) वि० सं० १८२४
(चैत्रादि १८२५) ज्येष्ठ सुदि १५ (ई० स० १७६८ ता० २१ मई) को
राठोड़ उदयसिंह की रणक्षेत्र में मृत्यु होने का वर्णन है ।

(१७) भट्ट भवानीशंकर कृपाशंकर के नाम का वि० सं० १८२५
(अमांत) मार्गशीर्ष (पूर्णिमांत पौष) वदि १० (ई० स० १७६६ ता० २
जनवरी) चन्द्रवार का परवाना, जिसमें कुशलगढ़ के मंदिर में मार्गशीर्ष
सुदि १५ चन्द्रग्रहण के अवसर पर जोबड़खा गांव के ब्राह्मणों को तीसरा
भाग पीछा बहाल करने का उल्लेख है ।

(१८) ओढारो (ओढोरा) गांव का वि० सं० १८२५ आश्विन सुदि
७ (ई० स० १७६८ ता० ७ अक्टोबर) का सहायच गोविंददास के नाम
का ताम्रपत्र, जिसमें उसे उरयुक्त गांव प्रदान किये जाने का उल्लेख है ।

(१६) बारोड़ (बारठ) जीवणा बदनसिंह श्यामलदास के नाम का वि० सं० १८२८ पौष सुदि १३ (ई० स० १७७२ ता० १८ जनवरी) का माखिया गांव का ताम्रपत्र, जिसमें वि० सं० १८२८ आषाढ सुदि १ (ई० स० १७७१ ता० १३ जून) को उपर्युक्त गांव प्रदान किये जाने का उल्लेख है।

(२०) पठान निज़ामखां भोपालवाले के नाम का वि० सं० १८३३ (अमांत) भाद्रपद (पूर्णिमांत द्वितीय भाद्रपद) वदि १० (ई० स० १७७६ ता० ७ सितम्बर) का परवाना, जिसमें सरदारखां को परखा गांव देने का उल्लेख है।

(२१) रणेटीबेड़ा गांव का वि० सं० १८३६ आश्विन सुदि १ (ई० स० १७७९ ता० १० अक्टोबर) का भट नरसिंह, देवकृष्ण और देवदत्त के नाम का ताम्रपत्र, जिसमें उक्त गांव का महारावल विष्णुसिंह के समय दिये जाने का उल्लेख है।

(२२) रोणिया गांव का वि० सं० १८४० (अमांत) फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि ७ (ई० स० १७८४ ता० १३ मार्च) का शिलालेख, जिसमें राठोड़ केसरी के संभाजी की फौज से लड़ते हुए काम आने का हाल है।

महारावल पृथ्वीसिंह नीलिकुशल और उदार राजा था। छोटी आयु में राज्य पाने पर भी उसने राज्य-कार्य को संभाल कर अव्यवस्था मिटा दी,

जो उसकी योग्यता का उत्तम उदाहरण है। उसे

महारावल का व्यक्तित्व

राजनीति का अच्छा ज्ञान था। वह अन्य नरेशों के साथ मेल रखता था और इसीलिए उसने सतारे जाकर राजा शाहू से अपने सजातीय सम्बन्ध में अभिवृद्धि की, जिसका फल उसके लिए अच्छा हुआ और धार के जसवन्तराव पंवार-द्वारा जो उपद्रव होते थे, वे सब शांत हुए। मरहट्टी सेना खिराज के लिए कभी-कभी आकर घेरा देकर तंग करती तो उस समय वह लड़ाई से भी मुंह न मोड़ता था। उन दिनों राजपूताने के अधिकांश राज्य मरहट्टों के उपद्रव से तंग हो रहे थे। ऐसे

समय में भी उसके राज्य का विस्तार हुआ और स्यूथ राज्य के दो परगने उसके सरदार गढ़ी के ठाकुर उदयसिंह के हाथ लग गये। राज्य बढ़ा न होने पर भी वह काव्य-प्रेम से प्रेरित हो कवियों को गांव और भूमि देकर अपने पास रखता था और बढ़ी हुई धार्मिक भावना के कारण वह ब्राह्मणों को निर्वाह के लिए जीविका देकर सन्तुष्ट करता था।

विजयसिंह

महारावल पृथ्वीसिंह का देहांत होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र विजयसिंह वि० सं० १८४२ (ई० सं० १७८६) में राज्य-सिंहासन पर बैठा।

वि० सं० १८५० फाल्गुन (ई० सं० १७९४ मार्च) में मेवाड़ का महाराणा भीमसिंह दूसरी बार विवाह करने को ईडर गया। वहां से लौटते समय उसने डूंगरपुर को घेर लिया। फिर वहां से उसने अपनी आठ हज़ार सेना और पच्चीस तोपों के साथ माही नदी के तट पर आकर मुक़ाम किया। महाराणा की इस चढ़ाई का महारावल पर पूरा आतङ्क छा गया और उस (महारावल) ने महाराणा से मेल कर लेना ही अच्छा समझ सेना-व्यय के तीन लाख रुपये^१ अपने सरदार ठाकुर जोधसिंह^२ के साथ भेज दिये, जिसपर वह वहां से लौट गया।

(१)संग सहस्र आठ सेना समत्थ,

पचवीस तोप अरि भंज जुत्थ।

ऊपरी मुक़ाम तट महीय आय,

धर बंसवार आतंक पाय।

रावल विजैस करि मंत्र साम

कर जोध भेज त्रय लक्ष दाम।

अहाड़ा कृष्णकवि; भीमविलास, पृ० ११५-१६।

वीरविनोद; प्रकरण ग्यारहवां और सत्तरहवां।

(२) जोधसिंह गढ़ी का ठाकुर था और वह उन दिनों बांसवाड़ा राज्य का मुसाहब था।

वि० सं० १८५५ (ई० सं० १७६८) में महाराणा अपने विवाह के लिए तीसरी बार ईंडर गया, जहां से लौटते समय उसने फिर बांसवाड़े को घेर लिया । अतन्तर वह वहां से दंड (जुर्माना) लेकर प्रतापगढ़ को रवाना हुआ^१ ।

बांसवाड़ा राज्य के बरोड़ा गांव के वि० सं० १८६२ कार्तिक सुदि १२^२ (ई० सं० १८०५ ता० ४ नवम्बर) के लेख से ज्ञात होता है कि उक्त संवत् में भी वहां मेवाड़ की सेना आई थी और उससे युद्ध हुआ था,

(१)पीछे आवत डंड लिय, गिरपुर वंसबहाल ।

देवलिया किय कर नजर, तब बहुरे भूपाल ॥ ४३ ॥

अहाबा कृष्णकवि; भीमविलास, पृ० १२० ।

भीमविलास में महाराणा भीमसिंह का ईंडर में तीसरी बार विवाह वि० सं० १८२५ के ज्येष्ठ मास में होना और वहां से लौटते समय डूंगरपुर, बांसवाड़ा और देवलिया (प्रतापगढ़) से दंड लेने का उल्लेख है, किन्तु बांसवाड़ा राज्य के पारोदा गांव के एक स्मारक लेख में (आपाढादि) वि० सं० १८२४ (चैत्रादि १८२५) वैशाख सुदि में वहां मेवाड़ राज्य की सेना आने और उससे लड़ाई होने पर वैशाख सुदि ४ को वहां हटीसिंह के काम आने का उल्लेख है ।

संवत् १८५४ वर्षे वइसाख सुदी ४ दने हटीसिंघ फोज दीवा(ण)जी री आवी तारे काम आवा..... ।

(मूल लेख की प्रतिलिपि से) ।

इन दोनों में कौनसा कथन ठीक है, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, किन्तु सम्भव है कि महाराणा की सेना उक्त संवत् के वैशाख मास में भी वहां गई हो ।

भीमविलास में महाराणा की वि० सं० १८२५ में बांसवाड़ा पर चढ़ाई होने का कोई कारण नहीं लिखा है । सम्भव है कि महाराणा की आज्ञा की अवहेलना करने के कारण बांसवाड़े पर यह चढ़ाई हुई हो ।

(२) संवत् १८६२ ना कातक (कार्तिक) सुदि १२ आड़ा भोपजी काम आवा राणाजी नी फोज आवी तारे काम आवा..... ।

(बरोड़ा गांव के स्मारक लेख की प्रतिलिपि से) ।

किन्तु मेवाड़ एवं बांसवाड़ा राज्य के इतिहास में इस घटना का कुछ भी उल्लेख नहीं है ।

पेशवा को खिराज की रकम देना स्थिर हो जाने पर भी राज्य की आर्थिक स्थिति ठीक न होने से नियत खिराज यथा-समय न पहुँचता था ।

धार के स्वामी आनंदराव इसलिए धारवालों की सेना प्रायः आकर बल-
(दूसरा) की बांसवाड़े पूर्वक रुपया वसूल करती थी । बांसवाड़ा राज्य के
पर चढ़ाई बड़वे की ख्यात में लिखा है कि वि० सं० १८५७
(ई० सं० १८००) में धार की सेना ने बांसवाड़े पर चढ़ाई की, तब महारावल
के सरदारों ने उससे युद्ध कर उसकी तोपें व निशान छीन लिये । इसका
बदला लेने के लिए तीन वर्ष पीछे दौलतराव सिंधिया और धार की सम्मि-
लित सेना ने आकर बांसवाड़े को घेर लिया । तीन महीने तक बराबर
लड़ाई होती रही । अंत में मरहटी सेना ने बांसवाड़े में प्रवेश कर उसे
लूटा^१ । इस आक्रमण में महारावल का एक कर्मचारी शिवनाथ खवास
(ब्राह्मण) भी मारा गया । इसकी पुष्टि वि० सं० १८७० आषाढ़ सुदि ५
(ई० सं० १८१३ ता० २ जुलाई) के ताम्रपत्र^२ से होती है, जिसमें शिवनाथ

(१) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र १०, पृ० २ ।

(२) रायां राय महाराजाधिराज महारावलजी श्रीवज्रसिंघजी आदे-
शात् खवास शंकरनाथ जोरय जत मया ओधारी ने गाम वाड़ीयु तथा
दोसी ऊदारी वाव जायगा सुधी खवास शिवनाथजी कारा भाटारी डोंगरी
ऊपर पुंआर आणंदरावरी फौज में मराणा ते मूंडकटी में यावत् चन्द्रार्क
तने दीदो दस्तखत जानी दत्तरामना संवत् १८७० आषाढ़सुदि ५ ... ।

(वाडिया गांव के ताम्रपत्र की प्रतिलिपि से) ।

राजपूताने में सामान्यतः नाई को खवास कहते हैं, परन्तु राजा महाराजाओं के पास रहनेवाले व्यक्ति एवं राजाओं की उपपत्तियां (प्रेमपात्री स्त्रियां, जो अन्तःपुर में रहती हैं) भी खवास कहलाती हैं । इससे निश्चित है कि खवास जातिवाचक शब्द नहीं, प्रत्युत पदविशेष का सूचक है और कई ब्राह्मण, दर्जी आदि भी खवास कहलाते हैं ।

के पंवार आनंदराव की सेना से लड़कर काले पत्थरों की पहाड़ी पर काम आने और उसके पवज़ में उसके पुत्र खवास शंकरनाथ को बाड़ीया गांव दिये जाने का वर्णन है ।

डूंगरपुर के महारावल जसवंतसिंह (दूसरा) के समय सिंधी खुदादादखां ने वि० सं० १८६६ (ई० स० १८१२) में डूंगरपुर पर चढ़ाई कर

खुदादादखां सिंधी का
वागड़ में उपद्रव करना

वहां अपना अधिकार कर लिया । तब उस (जस-
वंतसिंह) की सहायता के लिए गढ़ी के ठाकुर
अर्जुनसिंह^१ चौहान ने नवीन सेना भरती करने का

प्रयत्न किया, परन्तु उसमें सफलता नहीं हुई । इसपर उस (अर्जुनसिंह) ने
होलकर के सेनाध्यक्ष रामदीन से सहायता चाही । रामदीन इस संदेश के
मिलते ही डूंगरपुर की तरफ चला और इधर से डूंगरपुर के सरदार और
गढ़ी का ठाकुर अर्जुनसिंह भी उससे जा मिले । गलियाकोट में सिंधियों
से युद्ध हुआ, जिसमें उनकी बड़ी क्षति हुई, परन्तु उन्होंने महारावल

आनन्दराव पवार (दूसरा) वि० सं० १८३७-१८६४ (ई० स० १७८०-
१८०७) तक धार का स्वामी रहा । लापड़ी के पारड़ा गांव के वि० सं० १८२७
(चैत्रादि १८२८ अमांत) चैत्र (पूणिमांत वैशाख) वदि १२ (ई० स० १८०१
ता० १० अप्रैल) के एक ताम्रपत्र से (जो नीचे लिखे अनुसार है) प्रकट है कि आनन्दराव
की बांसवाड़ा पर यह चढ़ाई वि० सं० १८२७ (ई० स० १८०१) में हुई थी ।

राया राय महाराजा धीराजा महारावल श्रीवज्रसींघजी आदेशात्...
जोग जत मया ओधारी ने गाम पारड़ो लापड़ी नो पुत्रार आनंदरावजी नी
फोज बांसवाड़े आवी तारे कर्जीयो थयो तारे प्रभावजी आ ओधार काम
आव्या ते गाम पाड़लो भूपेली नो आल्यो.....संवत् १८५७ ना
चईत्रवद १२ दने दुआओत महेता अमर्जी

(मूल ताम्रपत्र की प्रतिलिपि से) ।

(१) सर माल्कम ने लिखा है—“गढ़ी का अर्जुनसिंह, वागड़ के सरदारों में
मुख्य है । वह अपने उत्तम आचरण तथा बड़ी जागीर के कारण (जो डूंगरपुर तथा
बांसवाड़ा राज्यों की तरफ से है) प्रतिष्ठा में लगभग वहां के राजाओं के समान है”
(ए मेमॉयर ऑफ् सेन्ट्रल इंडिया इन्क्ल्युडिंग मालवा; जि० २, पृ० १४१) ।

जसवंतसिंह को पकड़ लिया और उसको साथ लेकर वे सलूबर के मार्ग से मेवाड़ की तरफ चले। यह समाचार थाणा (मेवाड़) के रावत सूरजमल चूड़ावत ने सुनकर उस (खुदादादखां) पर हमला किया, क्योंकि सलूबर के रावत भीमसिंह का दूसरा पुत्र भैरुसिंह सलूबर से दो कोस दूर बसी गांव में इन्हीं सिंधियों-द्वारा युद्ध में मारा गया था, जिसका वह बदला लेना चाहता था। अंत में सूरजमल के हाथ से खुदादादखां मारा गया और वह महारावल को लुड़ा लाया। अनन्तर डूंगरपुर पर महारावल जसवंतसिंह का पुनः अधिकार हो गया। 'बांसवाड़ा राज्य की ख्यात' में लिखा है कि इस उपद्रव के समय डूंगरपुर के महारावल जसवंतसिंह की सहायतार्थ बांसवाड़ा से सेना भेजी गई, जिसमें महाराजकुमार उम्मेदसिंह भी विद्यमान था, परन्तु डूंगरपुर राज्य के इतिहास में महाराजकुमार उम्मेदसिंह के आने का कुछ भी उल्लेख नहीं है।

बांसवाड़ा राज्य के तलवाड़ा गांव के वि० सं० १८७० (अमांत) फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि ६ (ई० स० १८१४ ता० १२ मार्च) के मेड़तिया शेरसिंह के स्मारक लेख में उसका सिंधी शाहजादे की फौज से लड़कर काम आने का उल्लेख है, जिससे स्पष्ट है कि सिंधियों के इस आक्रमण के समय बांसवाड़ा की सेना से भी उसका युद्ध हुआ था।

सिंधियों के इस वखेड़े के समय सरदार लोग अपनी सहायतार्थ होल्कर के एक सेनापति रामदीन को रुपया देने का क़ौल-करार कर वागड़ में लाये थे। वह (रामदीन)^१ बड़ा लोभी था।

होल्कर के सेनापति
रामदीन का उपद्रव

उसको तो रुपया चाहिये था, फिर भले ही उससे चाहे जितना अत्याचार करा लो, वह उसके करने

(१) संवत् १८७० दीने राजश्री मेडतीआ सेरसिंधजी काम आव्या फागणवदी ६ दीने.....फोज शाहेजादा शेदीया नी फोज में खोड़ने वेले काम आव्या।

(मूल लेख की छाप से)।

(२) मेरा; राजपूताने का इतिहास; जिल्द ३, भाग १, पृ० १३७।

में संकोच न करता था। उन दिनों वागड़ की आर्थिक दशा बड़ी ही खराब थी, इसलिए उसको वहां से जब भरपूर रुपया न मिला तो उसने अर्थ-सिद्धि के लिए बांसवाड़ा राज्य में उपद्रव करना आरंभ किया। तलवाड़ा गांव के वि० सं० १८७२ कार्तिक सुदि १४ (ई० सं० १८१५ ता० १५ नवंबर) के एक स्मारक लेख से प्रकट है कि उस उपद्रव में खड़िया शक्ता का पुत्र हंमीरसिंह अमरेई गांव में काम आया था^१।

तीस वर्ष राज्य करने के पश्चात् वि० सं० १८७२ माघ सुदि ७ (ई० सं० १८१६ ता० ५ फरवरी) को महारावल विजय-सिंह का परलोकवास हो गया^२। उसके दो राणियां थीं, जिनमें से राठोड़ गंगाकुंवरी (सैलानावाली) के गर्भ से कुंवर उम्मेद-सिंह का जन्म हुआ था।

महारावल विजयसिंह के समय के वि० सं० १८४५ से १८७२ (ई० सं० १७८६ से १८१५) तक के शिलालेख व ताम्रपत्र मिले हैं, जिनमें से कुछ ऊपर उद्धृत किये गये हैं। शेष इस प्रकार हैं—

(१) बांसवाड़ा के पृथ्वीविलास बाग में सतियों के सामने के मंदिर का वि० सं० १८४५ माघ सुदि ६ (ई० सं० १७८६ ता० ४ फरवरी) का शिलालेख, जिसमें राठोड़ कनीराम की स्त्री-द्वारा उपर्युक्त मंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है।

(१) संवत् १८७२ ना कार्तक सुदी १४ दिने खड़ीआ सकताजी सुत हमीरसिंघजी काम आव्या तेनो चीरो रोप्यो छे गाम अमरेई उपर काम आव्या रामदीन नी फोज आवी तारे।

(मूल लेख की छाप से)।

(२) माहाराजधिराज माहारावल श्रीविजैसिंघजी देवलोक पधारा संवत् १८७२ ना माहा सुदी ७ तेनी मुरती बेसारी संवत् १८६७ ना जेठसुद १४ दने.....।

(महारावल विजयसिंह की स्त्री के लेख से)।

(२) राठड़िया पारड़ा गांव का वि० सं० १८४६ आषाढ़ सुदि ११ (ई० सं० १७६२ ता० ३० जून) का चारण धांधड़ा भारता के नाम का ताम्रपत्र, जिसमें उसको उपर्युक्त गांव दिये जाने का वर्णन है ।

(३) उम्मेदगढ़ी का वि० सं० १८४६ (ई० सं० १७६३) का लेख, जिसमें गांव उगमणियां के राठोड़ जालिमसिंह की मृत्यु होने का उल्लेख है ।

(४) गढ़े गांव का वि० सं० १८५२ आश्विन सुदि १ (ई० सं० १७६५ ता० १३ अक्टोबर) मंगलवार का भट भवानीशंकर सुत दोलिया के नाम का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव पुरायार्थ देने का उल्लेख है ।

(५) शामपुरे गांव का वि० सं० १८५२ माघ सुदि ५ (ई० सं० १७६६ ता० १३ फरवरी) का खवास जयशंकर की पुत्री फतेबाई और उसके पति रंगेश्वर के नाम का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव फतेबाई के विवाह के अवसर पर कन्यादान में देने का उल्लेख है ।

(६) जानावाली गांव का (आषाढादि) वि० सं० १८५३ (चैत्रादि १८५४) वैशाख सुदि ४ (ई० सं० १७६७ ता० ४ अप्रैल) का गोर नाथजी के नाम का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव महारावल पृथ्वीसिंह के गया श्राद्ध के उपलक्ष्य में देने का उल्लेख है ।

(७) बांसवाड़ा के सिद्धनाथ महादेव के समीपवर्ती चबूतरे के (आषाढादि) वि० सं० १८५५ (चैत्रादि १८५६, अमांत) चैत्र (पूर्णिमांत वैशाख) वदि १२ (ई० सं० १७६६ ता० १ मई) बुधवार के दो लेख, जिनमें कसारा रणछोड़, ओमा, दोला आदि का महारावल विजयसिंह की सैन्य में काम आने का उल्लेख है ।

(८) सागड़ोद की बावली का वि० सं० १८५८ शक सं० १७२३ आषाढ सुदि २ (ई० सं० १८०१ ता० १३ जुलाई) का शिलालेख, जिसमें कोठारी नाथजी, अमरजी, शोभाचन्द्र और उम्मेदबाई का उपर्युक्त बावली (वापी) बनवाने का वर्णन है ।

(९) फतेपुरे की बावली का (आषाढादि) वि० सं० १८६० (चैत्रादि १८६१) शक सं० १७२६ (अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि ६

(ई० स० १८०४ ता० ३० मई) बुधवार की प्रशस्ति, जिसमें बड़-नगरा जाति के नागर ब्राह्मण पंचोली प्रभाकरण का उपर्युक्त बावली (वापी) बनवाने का उल्लेख है ।

(१०) बांसवाड़ा की विजयबाव (वापी) की वि० सं० १८६३ आषाढ सुदि ३ (ई० स० १८०६ ता० ११ जून) गुरुवार की प्रशस्ति, जिसमें उपर्युक्त बावली (वापी) महारावल विजयसिंह-द्वारा बनवाये जाने का उल्लेख है ।

(११) डडूका गांव (पट्टे गढ़ी) का वि० सं० १८६४ पौष सुदि ७ (ई० स० १८०८ ता० ५ जनवरी) का स्मारक लेख, जिसमें परमार जयसिंह की बसी गांव दूटते समय मृत्यु होने का उल्लेख है ।

(१२) गरखिया गांव का (आषाढादि) वि० सं० १८६८ (चैत्रादि १८६६) वैशाख सुदि ७ (ई० स० १८१२ ता० १८ अप्रैल) का स्मारक लेख, जिसमें सीसोदिया देवीसिंह के युद्ध में काम आने का उल्लेख है ।

मरहटों, सिंधियों और मेवाड़वालों के आक्रमणों से महारावल विजय-सिंह के समय बांसवाड़ा राज्य की और भी क्षति हुई, एवं आय के साधन कम हो गये । उस समय प्रजा के धन और जन का महारावल के समय की बांस-
वाड़ा राज्य की स्थिति रक्षक कोई नहीं था । चारों तरफ लूट-मार का दौरा था । प्रायः इन भूगडों में राजपूत आदि लोग शत्रु-समूह से लड़कर बराबर प्राण दिया करते थे, जिनके जगह-जगह पर स्मारक बने हुए हैं और उनमें मृत व्यक्तियों के नाम तथा संवत् भी खुदे हैं, किन्तु अधिकांश लेख ऐसे हैं, जिनसे उस समय के इतिहास पर विशेष

(१) स्वस्ति श्रीबांसवाला शुभस्थाने रायां राये माहाराजाधिराज माहारावल श्रीबीजेसिंघजी माहाराजकुंओर श्रीउमेदसिंघजी बीजे राज्ये नागर बड़नगरा जाति पंचोली प्रभाकरणजी सुत रतीचंदजी पोते बावड़ी गाम फतेपुरे करावी तेने परणावी संवत् १८६० ना व्रषे शाके १७२६ प्रवर्तमाने वैशाखवदि ६ वार बुध दीने.....।

(मूल लेख की बाप से) ।

प्रकाश नहीं पड़ता, क्योंकि उनपर मृत व्यक्ति का नाम संवत्, मिती आदि कुछ भी नहीं है। विजयसिंह ने इन दुःखों से छुटकारा पाने के लिए वि० सं० १८६६ (ई० सं० १८१२) में अंग्रेज़ सरकार से संधि करने का विचारकर बड़ौदा के रेज़िडेंट के पास अपना वकील भेजा, परन्तु रेज़िडेंट ने यह कहकर उसके प्रस्ताव को टाल दिया कि बांसवाड़ा राज्य राजपूताना प्रदेश के अन्तर्गत है, इसलिए दिल्ली के रेज़िडेंट के पास यह प्रस्ताव उपस्थित करना चाहिये^१।

महारावल विजयसिंह उदार राजा था। उसके समय में कई गांव चारण और ब्राह्मणों को दिये गये। उसने विजय वाव (विजयबावली) और विजय महल तथा राजमहलों में रघुनाथजी का मंदिर बनवाया। उसका कुंवर उम्मेदसिंह क्रूर स्वभाव का था, इसलिए वह सदा उससे असंतुष्ट रहता था।

उम्मेदसिंह

महारावल उम्मेदसिंह अपने पिता का इकलौता पुत्र था। वह वि० सं० १८७२ (ई० सं० १८१६) में बांसवाड़ा राज्य का स्वामी हुआ।

उस समय राज्य में चारों तरफ़ अराजकता फैली हुई थी। देश ऊजड़ होने से आय के साधन घट गये थे और लुटेरों ने उत्पात मचा रक्खा था। ऐसे में वि० सं० १८७४ (ई० सं० १८१७) में नवाब करीमख़ां का नवाब करीमख़ां (पिंडारी)^२ बांसवाड़ा राज्य में आ पहुंचा और उसने वहां लूटमार आरम्भ की। सूरपुर गांव के (आपाढादि) वि० सं० १८७३ (चैत्रादि १८७४) वैशाख

नवाब करीमख़ां का
बांसवाड़े आना

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वकाये राजपूताना, जि० १, पृ० २१५।

(२) संवत् १८७३ वैशाख सुद १२ दने तंवर नारसिंघजी काम आव्या नवाब करमख़ां नी फोज आवी.....।

(मूल लेख की प्रतिलिपि से)।

सुदि १२ (ई० स० १८१७ ता० २८ अप्रैल) के स्मारक लेख से ज्ञात होता है कि करीमखां की सेना से वहां युद्ध हुआ था, जिसमें तंघर नाहर-सिंह मारा गया ।

बारीगांवा पट्टे के बूड़वा गांव के उसी वर्ष के (अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि १० (ई० स० १८१७ ता० १० मई) शनिवार के एक लेख से प्रकट है कि उस दिवस चौहान उदयसिंह काम आया था^१ । उस समय उपर्युक्त गांव राठोड़ गंभीरसिंह की जागीर में था । बूड़वा गांव का लेख सूरपुर गांव के स्मारक लेख के समीप का है, जिससे अनुमान होता है कि करीमखां का उपद्रव बांसवाड़ा राज्य में कई दिनों तक रहा होगा ।

लार्ड हेस्टिंग्स की शासन-नीति के अनुसार देशी राज्यों को अंग्रेज-सरकार के संरक्षण में लाने का उद्योग हुआ, इससे प्रेरित होकर राजपूताने के नरेश भी अंग्रेज-सरकार की शरण लेने लगे । अंग्रेज-सरकार से संधि मरहटों आदि के दुःखों से पीड़ित होकर महारावल विजयसिंह ने भी अंग्रेज-सरकार के संरक्षण में आने का प्रस्ताव किया था, परन्तु उस समय वह प्रस्ताव स्वीकृत न होकर स्थगित रहा । अब महारावल उम्मेदसिंह के राज्यासीन होने के पीछे जब कष्ट और भी बढ़ गये तथा उनसे प्राण पाने का अंग्रेज-सरकार के संरक्षण में आने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय दीख न पड़ा तो उस (उम्मेदसिंह) ने फिर यह प्रस्ताव दिल्ली के रेजिडेंट-द्वारा सरकार के समक्ष रक्खा । तदनन्तर जब राजपूताना के राज्यों से संधि करना आरंभ हुआ, तब ई० स० १८१८ ता० १६ सितंबर (वि० सं० १८७५ आश्विन वदि २) को भारत के गवर्नर-जेनरल

(१) संवत् १८७३ वर्षे वैशाख वद १० शनीवासर सौआण उदसंघजी गाम वारी काम आव्या, राओल उदसंघ (उमेदसिंह) जी नी वारे राठोड़ गंभीरसिंहजी गाम बूडव ।

(मूल लेख की प्रतिलिपि से) ।

मार्किंस ऑव् हेस्टिंग्ज के समय दिल्ली के मुक़ाम पर अंग्रेज़-सरकार के प्रतिनिधि थिओफिलस् मेटकॉफ़ तथा महारावल के प्रतिनिधि रतनजी पंडितजी की मध्यस्थता में दस शर्तों का एक अहदनामा लिखा गया, किन्तु महारावल ने उस अहदनामे की शर्तों को कठोर समझकर उसकी तसदीक़ न की तथा उसपर अमल करने से इन्कार कर दिया^१ ।

उन दिनों अंग्रेज़-सरकार ने धार राज्य से अहदनामा कर लिया, जिसके अनुसार डूंगरपुर और बांसवाड़ा राज्यों का खिराज़ अंग्रेज़ सरकार-द्वारा लिया जाना निश्चित हुआ। तब महारावल ने कुछ और शर्तें बढ़ाकर ता० २५ दिसंबर सन् १८१८ ई० (मिती पौष वदि १३ वि० सं० १८७५) को बांसवाड़ा में कप्तान जेम्स कॉलफील्ड के द्वारा तेरह शर्तों का नीचे लिखा हुआ दूसरा अहदनामा स्वीकार कर लिया। तदनुसार बांसवाड़ा राज्य अंग्रेज़ सरकार के संरक्षण में लिया जाकर उसके एवज़ में जो खिराज़ धार राज्य को दिया जाता था, वह अंग्रेज़ सरकार को देना निश्चित हुआ।

अहदनामा

आर्नरेबल् ईस्ट इंडिया कंपनी तथा राय रायां महारावल श्रीउम्मेद-सिंह उनके वारिसों तथा जानशीनों के बीच का अहदनामा, जो ब्रिगेडियर जेनरल सर जॉन मालकम के० सी० बी०, के० एल्० एस०, पोलिटिकल एजेंट श्रीमान् गवर्नर जेनरल की आज्ञा से कप्तान जेम्स कॉलफील्ड के द्वारा आर्नरेबल् ईस्ट इंडिया कंपनी और बांसवाड़ा के राजा राय रायां महारावल श्रीउम्मेदसिंह तथा उनके वारिसों एवं उत्तराधिकारियों की ओर से तय हुआ।

उक्त ब्रिगेडियर सर जॉन मालकम को (इस मामले में) मोस्ट नोब्ल कैंसिस, मार्किंस ऑव् हेस्टिंग्ज, के० जी०, से पूरे अधिकार मिले थे।

(१) एचिसन; टीटीज़ एंजेजमेंट्स एण्ड सनदज, जिल्द ३, पृ० ४६८-७०।
मुंशी ज्वाहासहाय; वक्रामे राजपूताना (उर्दू), जि० १, पृ० २१५।

शर्त पहली—अंग्रेज़ सरकार और बांसवाड़ा के राजा महारावल श्री-उम्मेदसिंह तथा उनके वारिसों एवं जानशीनों के बीच मेल-जोल, मित्रता और स्वार्थ की एकता सदा बनी रहेगी और दोनों पक्षों में से किसी के मित्र एवं शत्रु दोनों के मित्र तथा शत्रु समझे जायेंगे।

शर्त दूसरी—अंग्रेज़ सरकार इत्तरार करती है कि वह बांसवाड़ा राज्य तथा मुल्क की रक्षा करेगी।

शर्त तीसरी—महारावल, उनके वारिस तथा जानशीन अंग्रेज़ सरकार का बड़प्पन स्वीकार करते हुए सदा उसके अधीन रहकर उसका साथ देंगे और अब से किसी दूसरे रईस या रियासत के साथ कोई तअल्लुक न रखेंगे।

शर्त चौथी—महारावल, उनके वारिस और जानशीन अपने मुल्क तथा रियासत के खुदमुक्तर रईस रहेंगे और उनके देश एवं राज्य में अंग्रेज़ सरकार की दीवानी तथा फ़ौजदारी हुक्मत दाखिल न होगी।

शर्त पांचवीं—बांसवाड़ा राज्य के मामले अंग्रेज़ सरकार के परामर्श के अनुसार निर्णीत होंगे, पर उनमें अंग्रेज़ सरकार महारावल की मर्ज़ी का मुनासिब लिहाज़ रखेगी।

शर्त छठी—बिना मंजूरी अंग्रेज़ सरकार की महारावल, उसके वारिस और जानशीन किसी रईस या रियासत के साथ अहद व पैमान न करेंगे, पर अपने दोस्तों और रिश्तेदारों के साथ उन(महारावल)की मामूली दोस्ताना लिखा-पढ़ी जारी रहेगी।

शर्त सातवीं—महारावल, उनके वारिस और जानशीन किसी पर ज़्यादती न करेंगे और यदि दैवयोग से किसी के साथ कोई भगड़ा पैदा हो जायगा तो उसका फ़ैसला अंग्रेज़ सरकार की मध्यस्थता में होगा।

शर्त आठवीं—महारावल, उनके वारिस और जानशीन वादा करते हैं कि जो ख़िराज धार के राजा या और किसी राज्य को देना बाक़ी है, वह हर साल ऐसी क्रिशतों में दिया जायगा, जो उन(महारावल)की आय के अनुकूल होंगी। किश्तें अंग्रेज़ सरकार की राय से नियत की जायेंगी।

शर्त नवीं—महारावल, उनके वारिस और जानशीन अंग्रेज़ सरकार को खिराज देते रहेंगे, जो प्रतिवर्ष बांसवाड़ा प्रदेश की उन्नति के अनुसार बढ़ता जायगा और उतना ही होगा जितना कि अंग्रेज़ सरकार बांसवाड़ा राज्य की रक्षा के खर्च के लिए काफ़ी समझे, तो भी यह खिराज बांसवाड़ा राज्य की आमदनी पर फ़ी रुपये छः आने से अधिक न होगा ।

शर्त दसवीं—महारावल, उसके वारिस तथा उत्तराधिकारी वादा करते हैं कि बांसवाड़ा प्रदेश की सेना हमेशा अंग्रेज़ सरकार के काम के लिए तैयार रहेगी ।

शर्त ग्यारहवीं—महारावल, उनके वारिस तथा उत्तराधिकारी इक्क़ार करते हैं कि वे कभी अरबी, मकरानी, सिंधी या अन्य परदेशी सिपाहियों को अपनी सेना में भरती न करेंगे । उनकी फ़ौज में उनके देश के ही लड़ाकू जाति के मनुष्य रहेंगे ।

शर्त बारहवीं—महारावल, उनके वारिसों तथा उत्तराधिकारियों के विद्रोही व नाफ़रमाबरदार बंधु-बांधवों एवं संबंधियों की अंग्रेज़ सरकार सहायता न करेगी, किन्तु उनका दमन करने में महारावल को मदद देगी ।

शर्त तेरहवीं—इस अहदनामे की नवीं शर्त में महारावल इक्क़ार करते हैं कि वह अंग्रेज़ सरकार को खिराज देंगे और इसके इत्मीनान के लिए वादा करते हैं कि उस (खिराज) के अदा करने में देर होने या न देने की हालत में अंग्रेज़ सरकार की ओर से कोई एजेंट बांसवाड़ा में तैनात हो, जो दाण के चबूतरे तथा उसके मातहत नाकों की आमदनी से रुपये वसूल करे ।

तेरह शर्तों का यह अहदनामा आज की तारीख़ कप्तान जेम्स कॉल्फ़ील्ड की मारफ़त ब्रिगेडियर जेनरल सर जॉन माल्कम के० सी० बी०, के० एल० एस०, की आज्ञा से, जो आनरेबल ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से प्रतिनिधि था और बांसवाड़ा के राजा रायराया महारावल श्रीउस्मेद-सिंह के द्वारा—जो स्वयं अपनी, अपने वारिसों तथा उत्तराधिकारियों की

तरफ़ से प्रतिनिधि था—तय हुआ। कप्तान कॉलफील्ड ने अंग्रेज़ी, फ़ारसी तथा हिन्दुस्तानी भाषा में इसकी एक नक़ल कराकर और उसपर अपने दस्तख़त एवं मुहर करके उसे महारावल श्रीउम्मेदसिंह के सुपुर्द किया और इसी की अपनी मोहर और दस्तख़तवाली नक़ल महारावल ने उस (कॉलफील्ड) को दी।

कप्तान कॉलफील्ड वादा करता है कि मोस्ट नोबुल गवर्नर जनरल के तस्दीक़ किये हुए, इस अहदनामे की, जिसे उन्होंने स्वयं तैयार किया है, एक नक़ल, जो उसकी हूबहू नक़ल है, आज की तारीख़ से दो महीने के भीतर महारावल श्रीउम्मेदसिंह को दी जायगी और उसके दिये जाने पर कप्तान कॉलफील्ड का तैयार किया हुआ यह अहदनामा लौटा दिया जायगा। महारावल श्रीउम्मेदसिंह ने अपनी इच्छा तथा अपने शरीर एवं मन की पूर्ण स्वस्थता की दशा में यह अहदनामा किया।

स्थान बांसवाड़ा, २५ दिसम्बर ई० स० १८१८ अर्थात् ता० २४ सफ़र, हिजरी १२३४, तदनुसार (अमांत) पौष वदि १३ संवत् १८७५।

(हस्ताक्षर) जे० कॉलफील्ड

अॉनरेबल कंपनी की
मुहर

(हस्ताक्षर) हेस्टिंग्ज़
,, जी० डोइसवेल
,, जेम्स स्ट्रुअर्ट
,, जे० पेंडम्

गवर्नर जनरल की
छोटी मुहर

आज १३ वीं फ़रवरी ई० स० १८१६ को हिज़ एक्सेलेंसी गवर्नर जनरल ने कौंसिल में तस्दीक़ की^१।

(दस्तख़त) सी० टी० मैट्काफ़,
सेक्रेटरी गवर्नमेंट

महारावल उम्मेदसिंह ने केवल चार वर्ष राज्य किया और इस अहदनामे के कुछ ही महीनों बाद (आषाढादि) वि० स० १८७५

महारावल उम्मेदसिंह का
देहांत

(चैत्रादि, १८७६) वैशाख सुदि १० (ई० स० १८१६ ता० ५ मई) को उसका परलोकवास हो गया^१ ।

उसके ६ राणियों से तीन कुंवर भवानीसिंह, चंदनसिंह और दीप-सिंह तथा चार कुंवरीयां गुलाबकुंवरी, हेमकुंवरी, लालकुंवरी एवं फ़ते-कुंवरी उत्पन्न हुईं । इनमें से चंदनसिंह, दीपसिंह एवं गुलाबकुंवरी और हेमकुंवरी की मृत्यु बाल्य-काल ही में हुई^२ । वह क्रोधी और निष्ठुर था, जिससे उसका पिता महा-रावल विजयसिंह उससे अप्रसन्न रहता था । विजयसिंह की कृपा खांधू के महाराज सरदारसिंह पर अधिक थी, जिससे उम्मेदसिंह ने उस (सरदार-सिंह) को मार डाला ।

महारावल के समय के
शिलालेख व दानपत्र

महारावल उम्मेदसिंह के समय के वि० सं० १८७४-७५ (ई० स० १८१७-१८) के दो शिलालेख व दो ताम्रपत्र मिले हैं, जिनका सारांश नीचे लिखे अनुसार है—

(१) वूड़वा पट्टे वारी गावां (गांव) का (आपाढादि) वि० सं० १८७३ (चैत्रादि १८७४, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि १० (ई० स० १८१७ ता० १० मई) शनिवार का शिलालेख, जिसमें चौहान उदयसिंह का महारावल उम्मेदसिंह के समय काम आने का उल्लेख है^३ ।

(१) महाराजाधिराज महारावल श्रीउम्मेदसिंघजी देवलोक पधारा सं० १८७५ ना वैसाख सुदी १० तेनी मूरती बेसारी सं० १८६७ ना ज्येष्ठ सुदी १४ मारफत ठाकोर अरजणसिंहजी नी दस्तखत जानी लखमीचंद ना... ।

(मूल लेख की प्रतिलिपि से) ।

(२) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र १२, पृ० २ ।

फ़तेकुंवरी और लालकुंवरी का विवाह ईडर हुआ था ।

(३) देखो ऊपर पृ० १५०, टिप्पण १ ।

(२) मूंगाणा गांव का वि० सं० १८७५ आषाढ सुदि १ (ई० स० १८१८ ता० ४ जुलाई) का कोठारी ऋषभदास के नाम का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव उक्त कोठारी को देने का उल्लेख है ।

(३) सेमलिया गांव का वि० सं० १८७५ (अमांत) पौष (पूर्णिमांत माघ) वदि ७ (ई० स० १८१६ ता० १८ जनवरी) का ताम्रपत्र, जिसमें उपर्युक्त गांव द्वारिकानाथ को भेंट करने का उल्लेख है ।

(४) सूरपुर गांव का वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१६) का शिलालेख, जिसमें (आषाढादि) वि० सं० १८७३ (चैत्रादि १८७४) वैशाख सुदि १२ (ई० स० १८१७ ता० २८ अप्रैल) को तंवर नाहरसिंह का नवाब करीमख़ां की फ़ौज से लड़कर काम आने का उल्लेख है ।

छठा अध्याय

महारावल भवानीसिंह से वर्तमान महारावल सर पृथ्वीसिंहजी तक

भवानीसिंह

महारावल उम्मेदसिंह की मृत्यु होने पर उसका पुत्र भवानीसिंह वि० सं० १८७६ (ई० सं० १८१६) में बांसवाड़ा राज्य का स्वामी हुआ ।

अंगरेज़ सरकार और बांसवाड़ा राज्य के बीच संधि वि० सं० १८७५ (ई० सं० १८१८) में महारावल उम्मेदसिंह के समय में हो चुकी थी,

परन्तु उसमें चढ़े हुए खिराज का तथा भविष्य में बांसवाड़ा राज्य से कितना खिराज लिया जावे, इसका कोई निर्णय नहीं हुआ था । उसके थोड़े

दिनों बाद ही महारावल उम्मेदसिंह का परलोकवास हो गया । तब अंग्रेज़ सरकार ने वि० सं० १८७६ (ई० सं० १८२०) में महारावल भवानीसिंह के साथ उस विषय का नीचे लिखा अहदनामा किया—

२५ वीं दिसंबर ई० सं० १८१८ तदनुसार वि० सं० १८७५ को अंग्रेज़ सरकार तथा बांसवाड़ा के महारावल श्रीउम्मेदसिंह के बीच जो अहदनामा हुआ था, उसकी आठवीं शर्त में उपर्युक्त रावल ने स्वीकार किया था कि उक्त अहदनामे की तारीख तक उनके ज़िम्मे धार के राजा या अन्य किसी राज्य का जो खिराज बाकी रहा होगा, वह सब वे प्रतिवर्ष उक्त अंग्रेज़ सरकार को ऐसी किशतों में और ऐसे समय पर दिया करेगा कि जो उसकी आय के अनुकूल एवं अंग्रेज़ सरकार की इच्छा के अनुसार होंगी । अंग्रेज़ सरकार ने रावल के मुल्क तथा आय की खराब स्थिति का विचार कर कृपापूर्वक आठवीं शर्त में दिये हुए कुल बक्राया के बदले में केवल

पैंतीस हजार सालिमशाही रुपये लेना स्वीकार किया है, जो अपनी उन्नति के दिनों में दिये जाने वाले बांसवाड़ा राज्य के वार्षिक खिराज के बराबर है। इस लिखावट के द्वारा महारावल यह रकम अंग्रेज सरकार को नीचे लिखे हुए समयों पर किश्तवार देना स्वीकार करता है—

फाल्गुन	सं० १८७६, फ़रवरी ई० स० १८२० रु० १५००
वैशाखसुदि १५	सं० १८७७, अप्रैल ई० स० १८२० रु० १५००
माघसुदि १५	सं० १८७७, जनवरी ई० स० १८२१ रु० २५००
वैशाखसुदि १५	सं० १८७८, अप्रैल ई० स० १८२१ रु० २५००
माघसुदि १५	सं० १८७८, जनवरी ई० स० १८२२ रु० ३०००
वैशाखसुदि १५	सं० १८७९, अप्रैल ई० स० १८२२ रु० ३०००
माघसुदि १५	सं० १८७९, जनवरी ई० स० १८२३ रु० ३५००
वैशाखसुदि १५	सं० १८८०, अप्रैल ई० स० १८२३ रु० ३५००
माघसुदि १५	सं० १८८०, जनवरी ई० स० १८२४ रु० ३५००
वैशाखसुदि १५	सं० १८८१, अप्रैल ई० स० १८२४ रु० ३५००
माघसुदि १५	सं० १८८१, जनवरी ई० स० १८२५ रु० ३५००
वैशाखसुदि १५	सं० १८८२, अप्रैल ई० स० १८२५ रु० ३५००

उक्त अहदनामे की मर्जी शर्त में महारावल ने अंग्रेज सरकार को रक्षण के बदले में अपने देश की उन्नति के अनुसार खिराज देना स्वीकार किया है, जो बांसवाड़ा राज्य की निश्चित आय पर रुपये पीछे छुः आने से अधिक न होगा और अंग्रेज सरकार ने इस इच्छा से कि रावल के देश की शीघ्र उन्नति हो, ई० स० १८१६, २० तथा २१ में चुकाई जानवाली खिराज की रकम स्थिर करने का प्रबन्ध किया है। महारावल को स्वीकार है कि वह उक्त तीन वर्षों में नीचे लिखे अनुसार रकम चुकावेगा—

फाल्गुन	सं० १८७६, फ़रवरी ई० स० १८२०, रु० ८५००
वैशाखसुदि १५	सं० १८७७, अप्रैल ई० स० १८२०, रु० ८५००

ई० स० १८१६ के कुल १७०००

माघसुदि १५ सं० १८७७, जनवरी ई० सं० १८२१, रु० १००००

वैशाखसुदि १५ सं० १८७८, अप्रैल ई० सं० १८२१, रु० १००००

ई० सं० १८२० के कुल २००००

माघसुदि १५ सं० १८७८, जनवरी ई० सं० १८२२, रु० १२५००

वैशाखसुदि १५ सं० १८७९, अप्रैल ई० सं० १८२२, रु० १२५००

ई० सं० १८२१ के कुल २५०००

यह प्रबन्ध केवल तीन वर्ष के लिए है, जिसके बाद अंग्रेज़ सरकार अहदनामे की नवीं शर्त के अनुसार खिराज की ऐसी व्यवस्था करेगी, जो उसकी नेकनीयती के अनुसार होगी और जो रावल के देश की उन्नति तथा दोनों सरकारों की हित की दृष्टि से उचित होगी।

आज १५ वीं फ़रवरी ई० सं० १८२०, तदनुसार फाल्गुन सुदि २ वि० सं० १८७६ व २६ (?) वीं रबिउस्सानी हि० सं० १२३६ को बांसवाड़ा में जेनरल सर मालकम के० सी० बी०, के० एल्० एस्०, की आज्ञानुसार कप्तान ए० मैकडॉनल्ड ने अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से और महारावल श्री भवानीसिंह ने अपनी ओर से यह अहदनामा किया^१।

अंग्रेज़ सरकार से संधि हो जाने पर बांसवाड़ा राज्य में शांति स्थापित हो गई और उपद्रव के कारण देश छोड़कर जो प्रजा बाहर चली गई ई० सं० १८२३ में अंग्रेज़ थी, वह फिर आकर बसने लगी, जिससे आय सरकार से खिराज सम्बन्धा बढ़ गई। फलतः किशतों के अनुसार नियत खिराज नया अहदनामा होना यथा समय दिया जाने लगा। तीन वर्ष के लिए खिराज का जो अहदनामा हुआ था, वह ई० सं० १८२२ में पूरा हो गया; इसलिये ई० सं० १८२३ के फ़रवरी में दश वर्ष के लिए नीचे लिखा अहदनामा हुआ—

ता० २५ दिसंबर ई० सं० १८१८, तदनुसार पौष वि० सं० १८७५ को अंग्रेज़ सरकार और बांसवाड़ा के राजा महारावल श्रीउम्मेदसिंह के

बीच जो अहदनामा हुआ था, उसकी नवीं शर्त में उक्त रावल ने उपर्युक्त अंग्रेज़ सरकार को रक्षा के बदले में अपने देश की उन्नति के अनुसार खिराज देना स्वीकार किया है, जो उस (बांसवाड़ा) की निश्चित आय के अनुसार फ़ी रुपया छः आने से अधिक न होगा और चूंकि उक्त रावल ने १५ फ़रवरी ई० स० १८२०, तदनुसार फाल्गुन सुदि २ वि० सं० १८७६ के अहदनामे के मुताबिक़ ई० स० १८१६, १८२० तथा १८२१ के खिराज की रकम अदा करदी है, इसलिए अंग्रेज़ सरकार ने इस उद्देश्य से कि रावल के देश की उन्नति हो कृपापूर्वक नीचे लिखे हुए वर्षों का खिराज अदा किये जाने का बंदोबस्त किया है—

	सालिमशाही
ई० स० १८२२ का खिराज	२४००० रु०
धार राज्य के बकाया खिराज का मीज़ान जोड़	७००० रु०

कुल रक़म ३१००० रु०

वह इस प्रकार से अदा किया जायगा—

फाल्गुन वदि अमावस, मार्च ई० स० १८२३ को	१५५०० रु०
वैशाखसुदि १५ वि० सं० १८८० अप्रैल ई० स० १८२३ को	१५५०० रु०

ई० स० १८२३ का खिराज	२५००० रु०
धार राज्य के बकाया खिराज का मीज़ान	७००० रु०

कुल रक़म ३२००० रु०

इस रक़म में से फाल्गुनवदि अमावस वि० सं०

१८८० मार्च ई० स० १८२४ को	१६००० रु०
--------------------------	-----------

वैशाखसुदि १५ वि० सं० १८८१ मई ई० स०

१८२४ को	१६००० रु०
---------	-----------

ई० स० १८२४ का खिराज	२६००० रु०
धार राज्य का बक्राया खिराज		७००० रु०
मीज़ान कुल जमा		३३००० रु०
इस तादाद में से फाल्गुन वदि अमावस वि० सं०		
१८८१ मार्च ई० स० १८२५ को		१६५०० रु०
वैशाख सुदि १५ वि० सं० १८८२ मई ई० स०		
१८२५ को		१६५०० रु०
ई० स० १८२५ का खिराज	३४००० रु०
इस रकम में से फाल्गुन वदि अमावस वि० सं० १८८२		
मार्च ई० स० १८२६ को		१७००० रु०
वैशाख सुदि १५, वि० सं० १८८३ मई ई० स०		
१८२६ को		१७००० रु०
		३४०००
ई० स० १८२६ का खिराज	३५००० रु०
इस तादाद में से फाल्गुन वदि अमावस वि० सं० १८८३		
मार्च ई० स० १८२७ को		१७५०० रु०
वैशाख सुदि १५ वि० सं० १८८४ मई ई० स०		
१८२७ को		१७५०० रु०

अगले पांच वर्षों अर्थात् ई० स० १८२७, १८२८, १८२९, १८३० तथा १८३१ में हर साल दो किशतों में ऊपर लिखे हुए महीनों में वही रकम याने ३५००० रु० सालिमशाही अदा की जायगी।

यह प्रबन्ध दस साल के लिए किया गया है, जिसकी अवधि पूरी हो जाने पर अंग्रेज़ सरकार अहदनामे की नवीं शर्त के अनुसार ऐसा बंदोबस्त करेगी, जो उसकी नेकनीयती, रायल के मुल्क की तरफ़ी

और दोनों सरकारों के फ़ायदे के ख़याल से ठीक होगा' ।

यह अहदनामा मालवा एवं राजपूताना के रेज़िडेन्ट मेजर जेनरल सर डेविड ऑफ्टरलोनी, बैरोनेट जी० सी० बी०, की आज्ञानुसार वागड़ एवं कांठल के स्थानीय एजेंट कप्तान ए० मैकडॉनल्ड^३ एवं बांसवाड़ा के नरेश महारावल भवानीसिंह के बीच ११ वीं फ़रवरी ई० स० १८२३ तदनुसार माघ वदि ३० वि० सं० १८७६ को बांसवाड़ा में तय हुआ^३ ।

(हस्ताक्षर) ए. मैकडॉनल्ड

लोकल एजेंट

मुहर

(,,) महारावल श्रीभवानीसिंह

(नागरी लिपि में)

उपर्युक्त तीनों अहदनामों के होने से बांसवाड़ा राज्य का धार से संबंध छूट गया, परन्तु राज्य में भीलों की अधिकता होनेसे समयसमय पर वहां नये उपद्रव खड़े होते एवं सरदार सब निरकुंश होकर मनमानी करते थे, अतएव देश को आबाद करने में बड़ी ही कठिनाइयां होने लगीं । तब उपद्रवकर्त्ताओं का दमन कर वागड़ में स्थायी रूप से शांति स्थापित करने के लिए वहां अंग्रेज़ सरकार की अध्यक्षता में सेना रखना निश्चय हुआ और इस सेना व्यय के ८४०० रुपये बांसवाड़ा राज्य से लेने का

(१) उपर्युक्त अहदनामे की अवधि समाप्त होने के पीछे बांसवाड़ा राज्य से ३५००० रु० सालिमशाही वार्षिक ख़िराज लेना नियत हुआ, जो ई० स० १६०४ तक अंग्रेज़ सरकार लेती रही । जब उक्त सन् में बांसवाड़ा राज्य में सालिमशाही के स्थान में कलदार रुपयों का चलन आरम्भ हुआ, तब से ३५००० रुपये सालिमशाही के स्थान में १७५०० रुपये कलदार ख़िराज के लिये जाने लगे, जो अब तक लिये जाते हैं ।

(२) लेफ़्टिनेन्ट ए० मैकडॉनल्ड, जो सर जॉन माल्कम का असिस्टेन्ट था धार राज्य की स्थिति की जांच करने के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से नियत हुआ । उसने अपनी जो रिपोर्ट सर माल्कम के पास पेश की, उसमें धार राज्य का हुंगरपुर राज्य से १७५०० रु० और बांसवाड़ा से ७०००० रुपये वार्षिक ख़िराज का लेना लिखा है ।

(सर जॉन माल्कमस रिपोर्ट, ता० २२ सितम्बर १८१८ ई०) ।

(३) एचिसन; टीटीज़ पंगेजमंदस एण्ड सनदज़; जिल्द ३, पृ० ४७२-४ ।

ई० स० १८२४ (वि० सं० १८८०) में इक्करारनामा लिखा गया^१ परन्तु बांसवाड़ा राज्य के खिराज के अतिरिक्त सेना व्यय का भार उठाने में असमर्थ होने के कारण वह इक्करारनामा स्थगित हुआ।

अंग्रेज़ सरकार से संधि हो जाने के पश्चात् इन छः वर्षों में राज्य की आय बढ़ गई, लूट-खसोट और वारदातों में कमी होकर आशा का अंकुर उत्पन्न हुआ, किन्तु महारावल भवानीसिंह की रुचि विलासिता की ओर बढ़ी हुई होन और उसके समान ही उसके मंत्री के विलासी तथा राज्य-कार्य के अयोग्य होने के कारण राज्य-प्रबंध ठीक तरह से न हो सका एवं अंग्रेज़ सरकार का खिराज भी बाक़ी रहने लगा। प्रजा पर विशेष रूप से ज्यादती होने लगी, अतएव जब महारावल के द्वारा शासन-सुधार की आशा न दीख पड़ी तो पोलिटिकल एजेंट ने शासन-कार्य में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता समझी। बहुत ही कठिनातापूर्वक अंत में महारावल ने दीवान को पृथक् करना स्वीकार किया और चढ़े हुए खिराज की रकम में से भी कुछ रकम दे दी। इसपर भी लूट-खसोट और हत्याओं का होना बंद न हुआ तो प्रतापगढ़ राज्य की सहायता से उसकी रोक का उचित प्रबंध किया गया^२।

वि० सं० १८८६ (ई० स० १८२६) में कप्तान स्पियर्स.....ने, जो महारावल को उत्तम सलाह देकर शासन-कार्य चलाने के लिए नियत हुआ था, एक पुलिस के कर्मचारी को उसका कुछ अप-राध साबित होने पर मौकूफ़ कर दिया। उस(कर्म-चारी)ने पुनः अपनी जगह मिलने के लिए कई बार प्रार्थना की, जो मंजूर न हुई। इसपर उस (कर्मचारी) को जब निश्चय हो गया कि उसकी जगह फिर उसे न मिलेगी तो उसने एक मुसलमान नौकर को मिलाकर उक्त कप्तान को मार डालने का इरादा किया, किन्तु

महारावल के अंग्रेज़ सलाह-कार को मारने का प्रयत्न

(१) एचिसन; ड्रीडीज एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़, जिल्द ३, पृ० ४४५।

(२) ज्वालासहाय; वक्ताये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५१६।

यह बात प्रसिद्ध हो गई और जांच से अपराध साबित होने पर उन दोनों अपराधियों को राज्य से निर्वासित करने की सज़ा दी गई, परन्तु मुख्य अपराधी बंबई जाते हुए रास्ते में ही भाग गया' ।

महारावल भवानीसिंह के समय में शासन-संबंधी कार्यों में अव्यवस्था बनी ही रही । सरकारी खिराज भी बहुत सा बाक़ी रह गया । तब महारावल का शासन-कार्य महारावल ने कप्तान स्पियर्स के नाम ता० ६ जून १८३६ (वि० सं० १८६३ आषाढ़ वदि ११) ईस्वी सन् १८३६ (वि० सं० १८६३ आषाढ़ वदि ११) का इक़रार करना को खरीता भेजकर शासन-कार्य को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए नीचे लिखा इक़रार किया—

मैं भविष्य में अपने देश के भीलों का दमन करने और आस-पास के राज्यों के पदाधिकारियों-द्वारा उनके विरुद्ध की गई शिकायतों को मिटाने की भरसक चेष्टा करूंगा । अगर वे (भील) मेरी हुकूमत न मानने की कोशिश करेंगे और अपने बेज़ाबता अमल जारी रखेंगे तो मैं उन्हें दंड देने का उचित प्रबन्ध करूंगा तथा उनके उपद्रव से जो हानि होगी, उसकी पूर्ति करूंगा । साथ ही मैं इक़रार करता हूं कि नीचे लिखी हुई शर्तों में जो बातें कही गई हैं, उनके मुताबिक़ अमल करूंगा—

शर्त पहली—सबसे पहले मैं नियमित रूप से तथा ठीक समय पर सरकार को खिराज देने और ऐसे उपाय करने की तरफ़, जिनसे मेरे देश की उन्नति एवं हित हो, ध्यान दूंगा । मैं कभी छली, धूर्त और कारसाज़ आदमियों का कहना न मानूंगा ।

शर्त दूसरी—मेरे ज़िम्मे सरकार का जो खिराज बाक़ी है उसे ठीक समय पर निर्धारित किशतों के मुताबिक़ अदा कर सकने के लिए मैं अपना ज़ाती और अपने राज्य का खर्च घटाने का भरसक प्रबंध करूंगा, जिससे खिराज की जो रक़म सरकार को देना बाज़िब है उसे दे सकूँ ।

शर्त तीसरी—अपने राज्य के सुप्रबन्ध के लिए मैं आपकी स्वीकृति

से अपने मातहत मैनेजर, पोतदार आदि के ओहदों पर ऐसे व्यक्तियों को नियत करूंगा, जो मेरी रियासत का कार-बार ठीक-ठीक कर सकें और बुरे स्वभाव के मनुष्यों के बहकाने से उन्हें अलग न करूंगा। यदि वे गल-तियां करते पाये जायेंगे तो उन्हें सज़ा मिलेगी।

शर्त चौथी—वे लोग, जो बदचलनी की वजह से पहले मौकूफ़ किये गये हैं, मेरी सेवा में फिर भरती न किये जायेंगे। भविष्य में मैं भाटों, चारणों और नीच प्रकृति के लोगों की सुहबत से बचूंगा।

बक्राया खिराज के १६६३८५ रुपये में से सरकारी तौर पर, मैं आपको ८०००० रुपये की हुंडियां पहले ही दे चुका हूं। अगले साल के खिराज के साथ २०००० रुपये की एक और रकम अदा की जायगी और मैं प्रतिष्ठा करता हूं कि आठ वर्ष के भीतर सब बक्राया खिराज किशतों से बेबाक कर दूंगा, जैसा कि साथ की कैफ़ियत में दर्ज है।

कुल बक्राया रकम फ़ौरन न चुका सकने के कारण मैंने उसके लिये जो बंदोबस्त किया है, जिसे, मैं आशा करता हूं, आप मंज़ूर करेंगे। साथ ही मेरा निवेदन है कि आप मेरे देश की बुरी दशा और मेरी वर्तमान स्थिति पर विचार करें तथा उसे सरकार को बतावें ताकि सूद का भार, जिसे मैं किसी तरह उठा नहीं सकता, मेरे ऊपर न रहे।

बांसवाड़ा राज्य के ज़िम्मे सरकार का जो खिराज बाक़ी है, उसे चुकाने के लिए जो किशतें मुकर्रर हुई, उनकी कैफ़ियत—

वि० सं० १८६३ ई० स० १८३६-३७ का खिराज रु०	३५०००
पिछली बक्राया	२००००
	५५०००
वि० सं० १८६४ ई० स० १८३७-३८ का खिराज	
और बक्राया	४५०००
वि० सं० १८६५ ई० स० १८३८-३९ का खिराज और बक्राया	४५०००
” १८६६ ” १८३९-४० ”	४५०००

वि० सं०	१८६७ ई०	स०	१८४०-४१	का खिराज और बक्राया	४५०००
„	१८६८	„	१८४१-४२	„	४५०००
„	१८६९	„	१८४२-४३	„	४५०००
„	१९००	„	१८४३-४४	„	४४३८५

३६६३८५

इस इक्करारनामे से थोड़े ही दिनों बाद महारावल भवानीसिंह का वि० सं० १८६५ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि ५ (ई० स० १८३८ ता० ६ नवम्बर) को निःसंतान देहांत हो

महारावल का देहांत
और संतति

गया^१। उसकी राठोड़ राणी राजकुंवरी (आऊवावाली)

के उदर से वाई गुलाबकुंवरी का जन्म हुआ, जिसका

विवाह बूंदी के महाराव राजा रामसिंह के ज्येष्ठ पुत्र महाराजकुमार भीमसिंह से वि० सं० १९१२ मार्गशीर्ष सुदि ११ (ई० स० १८५५ ता० १६ दिसम्बर) बुधवार को हुआ^२, जो अपने पिता की विद्यमानता में ही मर गया।

महारावल भवानीसिंह के समय के वि० सं० १८७७ से १८९५ तक के

महारावल के समय के
शिलालेख

लेख मिले हैं, जिनमें से निम्नलिखित लेख उस समय

के इतिहास पर यत्किंचित् प्रकाश डालते हैं, इस-

लिए यहां उनका सारांश दिया जाता है—

(१) सूरपुर गांव का वि० सं० १८७७ (अमांत) कार्तिक (पूर्णिमांत मार्गशीर्ष) वदि १४ (ई० स० १८२० ता० ४ दिसम्बर) का स्मारक लेख, जिसमें तंवर बहादुरसिंह की मादथला नामक पहाड़ पर मृत्यु होने का उल्लेख है।

(१) महाराजाधिराज महारावल श्रीभवानीसिंहजी देवलोक पधारा संवत् १८६५ ना कारतक वदि ५ वार भौम दिने.....
.....जणी री छत्री करावी ने प्रतिष्ठा करीने एंडु चडाव्यु संवत् १८६७ ना ज्येष्ठ सुदी १४ वार गुरु.....।

(महारावल भवानीसिंह की छत्री के लेख से)।

(२) मिश्रण सूर्यमल; वंशभास्कर, भाग ४, पृ० ४३४०।

(२) भंवरिया गांव का (आषाढादि) वि० सं० १८७६ (चैत्रादि १८८०) चैत्र सुदि ४ (ई० स० १८२३ ता० १६ मार्च) का स्मारक लेख, जिसमें केसरीसिंह का लेंवडिया गांव में काम आने का उल्लेख है ।

(३) भंवरिया गांव का (आषाढादि) वि० सं० १८७६ (चैत्रादि १८८०, अमांत) चैत्र (पूर्णिमांत द्वितीय चैत्र) वदि ४ (ई० स० १८२३ ता० ३० मार्च) का स्मारक लेख, जिसमें मेड़तिया राठोड़ कल्याणसिंह के काम आने का उल्लेख है ।

(४) भंवरिया गांव का (आषाढादि) वि० सं० १८७६ (चैत्रादि १८८०, अमांत) चैत्र (पूर्णिमांत द्वितीय चैत्र) वदि ४ (ई० स० १८२३ ता० ३० मार्च) का लेख, जिसमें मेड़तिया रूपसिंह का लेंवडिया गांव में काम आने का उल्लेख है ।

उपर्युक्त लेखों से पाया जाता है कि वि० सं० १८७७ और १८७६ में बांसवाड़ा राज्य में कोई उपद्रव हुआ था । अंग्रेज़ सरकार से संबंध हो जाने के पीछे बाहरी आक्रमणों का भय मिट गया था इसलिये इन लोगों का किसी आन्तरिक विग्रह में ही मारा जाना संभव है । उस(महारावल)के अन्य लेखों में गांव, भूमि आदि दान करने का वर्णन है, परन्तु वे इतिहास के लिए उपयोगी नहीं हैं ।

बहादुरसिंह

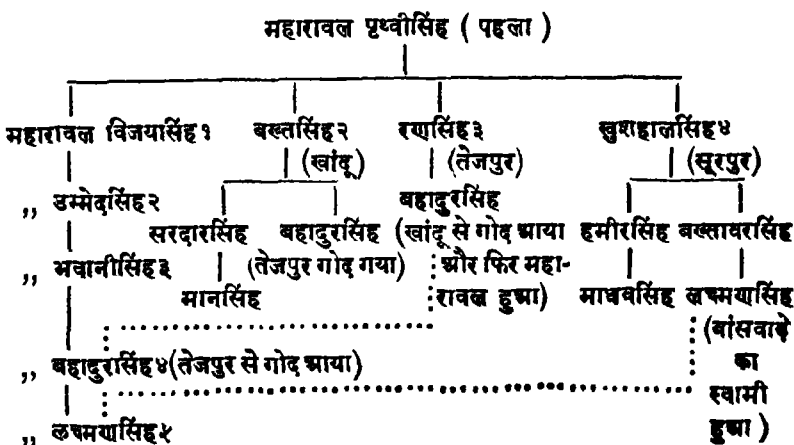
महारावल भवानीसिंह के पुत्र न होने के कारण उसकी मृत्यु होने पर गद्दी के चौहान ठाकुर अर्जुनसिंह व कामदार शोभाचंद कोठारी ने कुवा-
 महारावल की गद्दीनरानी
 णिया के सरदार दीपसिंह को, जो बहुत ही दूर का हकदार था, गद्दी पर बैठाने का विचार किया^१, परन्तु सब से प्रथम हक़ खांदू के महाराज का था, अतएव दूर के खान-दान से लाकर गद्दी बिठलाने में खांदूवालों की ओर से उपद्रव होने की

आशंका जान पड़ी। तब खांदू ठिकाने के संस्थापक महाराज बख्तसिंह के दूसरे पुत्र^१ बहादुरसिंह को (जो तेजपुर के महाराज रणसिंह के यहां गोद गया था) वि० सं० १८६५ मार्गशीर्ष सुदि ५ (ई० स० १८३८ ता० २२ नवंबर) को बांसवाड़ा का स्वामी बनाया, किन्तु वह वृद्ध और निःसंतान था, इसलिए उस (बहादुरसिंह) ने गद्दी बैठने के साथ ही सूरपुर के महाराज खुशहालसिंह के दूसरे पुत्र बख्तावरसिंह के बेटे लक्ष्मणसिंह को, जो खांदूवालों की अपेक्षा कुछ दूर का इक़दार था, अपना उत्तराधिकारी नियत किया^२। इसपर खांदू के महाराज मानसिंह ने उसपर उज्र किया, तब महारावल बहादुरसिंह ने उसकी हक़तलफ़ी के पबज़ में उसके ख़िराज में सदैव के लिए १३०० रुपये की कमी कर^३ वि० सं० १८६६ (ई० स० १८३९) में राज़ीनामा करवा लिया।

महारावल बहादुरसिंह का केवल पांच वर्ष राज्य करने के बाद ही महारावल का देहांत वि० सं० १९०० (ई० स० १८४४) में देहांत हो गया।

(१) असकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० १६४।

(२) नीचे के वंशवृत्त से विदित होगा कि महारावल बहादुरसिंह और लक्ष्मणसिंह में क्या संबंध था—



(३) असकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० १६४।

राजपूताने का इतिहास—



महारावल लक्ष्मणसिंह

लक्ष्मणसिंह

वि० सं० १६०० (अमांत) माघ (पूर्णिमांत, फाल्गुन) वदि १४ (ई० सं० १८४४ ता० १७ फरवरी) को महारावल लक्ष्मणसिंह का पांच वर्ष की आयु में राज्याभिषेक हुआ^१। उसका जन्म ई० स० १८३६ (वि० सं० १८६६) में हुआ था^२। गद्दीनशीनी के समय उसकी आयु अल्प होने से राज्य-प्रबन्ध के लिए अंग्रेज़ सरकार की तरफ से मुंशी शहामतअलीखां आदि नियत हुए^३ और ई० सं० १८५६ (वि० सं० १९१३) में जब वह राज्य करने के योग्य हो गया, तब शासनप्रबन्ध उसको सौंपा गया^४।

बांसवाड़ा राज्य में विशेषतः भीलों का निवास है और वे लोग लूट-मार को ही अपना मुख्य पेशा समझते हैं, इसलिए मालवे के समीपी इलाक़े की प्रजा अपनी रक्षा के लिए बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ के भीलों को रखवाली के नाम से कुछ कर दिया करती थी। वह कर संधि होने के पीछे पुलिस आदि का प्रबन्ध हो जाने से उन (भीलों) को मिलना बन्द हो गया। इसपर बांसवाड़ा के भीलों ने मोखेरी गांव पर आक्रमण किया, जिसमें उनके मुखिया गांगा का भार्ग जीजा मारा गया और इस खून का झगड़ा कई दिनों तक चलता रहा^५।

उन दिनों सूय राज्य के भीलों में भी उपद्रव हो रहा था और मही-कांटा एंजेसी के पोर्सोना एवं सिरोही राज्य के भाखर के गरसिये भी बाधी हो रहे थे। अतएव भीलों के उपद्रव को रोकने के लिए पश्चिमी

(१) बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात; पत्र १३, पृ० १।

(२) डा० हंडली; रूलर्स ऑफ़ इंडिया; पृ० ३६।

(३) वीरविनोद; प्रकरण ग्यारहवां।

(४) अर्सेकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० १६४।

(५) मुंशी जवाहरलालदास; दक्षिण राजपूताना; जि० १, पृ० ५२३।

मालवे के एजेंट के पास बांसवाड़ा राज्य की तरफ से वकील नियत किया गया और कोठारी केसरीसिंह ने, जो दीवान बांसवाड़ा और होशियार अहलकार था, कुछ समय के लिए भीलों का उपद्रव शांत कर दिया^१।

वि० सं० १६१४ (ई० सं० १८५७) में भारतवर्ष में सिपाही-विद्रोह की ज्वाला फूट पड़ी। उस कठिन समय में सरदारों ने महारावल का साथ

छोड़ दिया, जिससे उसको अपने ही भरोसे पर रहना पड़ा^२। ई० सं० १८५८ के दिसम्बर (वि०

सं० १६१५ मार्गशीर्ष) मास में विद्रोही दल के मुखिया तांतिया टोपी के साथ के विद्रोही कुशलगढ़ होते हुए बांसवाड़ा की तरफ बढ़े। मार्ग में कुशलगढ़ के राव ने उन लोगों को रोकने का बहुत कुछ प्रयत्न किया, परंतु उसमें सफलता नहीं हुई, क्योंकि विद्रोहियों की संख्या लगभग पांच हजार थी। अंग्रेज़ सरकार ने कुशलगढ़ के राव की मदद की इस सेवा से प्रसन्न होकर उस (कुशलगढ़ के राव) को खिलअत देकर सम्मानित किया^३।

ता० ११ दिसम्बर (मार्गशीर्ष सुदि ६) को विद्रोहियों ने बांसवाड़े पहुँच वहाँ अधिकार कर लिया^४। उस समय महारावल ने अपने राज्य के उत्तर की तरफ जंगल में जाकर आश्रय लिया^५। तांतिया टोपी वहाँ एक दिन ठहरा और उसके आदमियों ने कपड़ों से लदे हुए सोलह-सतरह ऊंटों को, जो अहमदाबाद से आ रहे थे, लूट लिया^६। विद्रोहियों-द्वारा बांसवाड़ा लूटे जाने की पूरी आशंका थी, परंतु चारों तरफ से सरकारी सेनाओं के

(१) ज्वालासहाय; वक्ताये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५२३।

(२) अर्सकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० १६४।

(३) शॉवर्स; ए मिसिंग चैप्टर ऑव् इंडियन म्युटिनी; पृ० १३८। मुंशी ज्वालासहाय; दि लॉयल राजपूताना; पृ० २५०।

(४) शॉवर्स; ए मिसिंग चैप्टर ऑव् इंडियन म्युटिनी; पृ० १३८।

(५) अर्सकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० १६४।

(६) मुंशी ज्वालासहाय; दि लॉयल राजपूताना, पृ० २५०।

आ जाने तथा नीमच से मेजर लियरमाउथ की अध्यक्षता में सेना खाना होने और रतलाम की तरफ से ब्रिगेडियर सोमरसेट के पहुंचने के समाचार पाकर वे (बाणी) लोग सलुंवर की तरफ होते हुए मेवाड़ की ओर चल दिये^१ ।

ई० स० १८५६ (वि० सं० १६१५) में तांतिया टोपी जीरापुर में कर्नल बेसन से हार गया, परंतु दो हजार विद्रोहियों के साथ फ्रीरोज़ के आ मिलने से फिर उसका बल बढ़ गया और वह मारवाड़ की तरफ से मेवाड़ में घुसकर ता० १७ फ़रवरी (माघ सुदि १५) को कांकरोली पहुंचा, किन्तु ब्रिगेडियर सोमरसेट तथा कप्तान शॉवर्स के आने का समाचार पाकर वह बांसवाड़ा की ओर चल दिया, पर सोमरसेट ने उसे रास्ते में ही जा दबाया और उसकी सेना तितर-बितर कर दी^२ । अंत में विद्रोहियों के मुखिया के आत्मसमर्पण करने पर तांतिया टोपी पेरोन (Parone) के जंगल में जा छिपा और वह ता० ७ अप्रैल ई० स० १८५६ (वि० सं० १६१६ चैत्र सुदि ४) को गिरफ़्तार किया जाकर सिप्री (ग्वालियर) में लाया गया, जहां उसे फांसी दी गई^३ ।

लॉर्ड डलहौज़ी की अनुदार नीति के कारण उस समय कितनेक देशी राज्य वास्तविक उत्तराधिकारी न होने के कारण अंग्रेज़ सरकार के अधिकार में ब्रम्हेज सरकार से गोदनशानी चले गये, जिससे भारत के देशी राजा-महाराजाओं की सनद मिलना का सरकार के प्रति असंतोष होना स्वाभाविक था और उसके कुछ चिह्न ई० स० १८५७ (वि० सं० १६१४) के सिपाही-विद्रोह में प्रत्यक्ष दीखने लगे थे तथापि अधिकांश नरेश सरकार के सहायक बने रहे। फिर महाराणी विक्टोरिया ने भारत का शासन-सूत्र ईस्ट इंडिया कंपनी से अपने हाथ में लिया तब उसने देशी राज्यों के अधिकार को बाजिब समझा। निदान पुत्र न होने पर गोद (दत्तक) लेकर उत्तरा-

(१) मुंशी ज्वालासहाय; दि लॉयल राजपूताना, पृ० २५० ।

(२) शॉवर्स; प मिंसिंग चैप्टर ऑव् इंडियन म्युटिनी; पृ० १४२-४४ ।

(३) वही; पृ० १४५-१४६ ।

धिकारी बनाने की सनद ई० स० १८६२ ता० ११ मार्च (वि० सं० १६१८ फाल्गुन सुदि १०) को तैयार होकर भारत के तत्कालीन वाइसराय और गवर्नर जनरल लॉर्ड कैनिङ्ग के द्वारा उसके हस्ताक्षर सहित समस्त देशी राज्यों को दी गई। तदनुसार वांस्वाड़ा राज्य को भी वह सनद भेजी गई, जिसका आशय नीचे लिखे अनुसार है—

“श्रीमती महाराणी विक्टोरिया की इच्छा है कि भारत के राजाओं तथा सरदारों का अपने अपने राज्यों पर अधिकार तथा उनके वंश की जो प्रतिष्ठा एवं मान मर्यादा है, वह हमेशा बनी रहे, इसलिए उक्त इच्छा की पूर्ति के निमित्त मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वास्तविक उत्तराधिकारी के अभाव में यदि आप या आपके राज्य के भावी शासक हिन्दू धर्मशास्त्र और अपनी वंश-प्रथा के अनुसार दत्तक लेंगे तो वह जायज़ समझा जायगा।

“आप यह निश्चय जानें की जब तक आपका घराना सरकार का खैरस्वाह रहेगा और उन अहदनामों, सनदों तथा इक्कामनामों का पालन करता रहेगा, जिनमें अंग्रेज़ सरकार के प्रति उसके कर्त्तव्य दर्ज हैं, तब तक आपके साथ के इस इक्काम में कोई बात बाधक न होगी।”

सोम और माही नदियों के संगम पर जहां वांस्वाड़ा और डूंगरपुर राज्य की सीमा मिलती है, डूंगरपुर के महागवर्ल आसकरण का बनजाया बेणेश्वर के मंदिर के लिए हुआ बेणेश्वर का शिवालय है, जहां प्रति वर्ष मेला लगता है। उसका सब प्रबन्ध डूंगरपुर राज्य की तरफ से होता है और मटनूल आदि की आय भी वही लेता है। वांस्वाड़ा राज्य ने वहां अपना अधिकार जमाना चाहा और डूंगरपुर राज्य से इसके लिए छेड़-छाड़ की। अंत में अंग्रेज़ सरकार के प्रतिष्ठित आफसर मेजर मैकेंज़ी-द्वारा वि० सं० १६२१ (ई० स० १८६४) में फ़ैसला होकर उक्त स्थान पर वास्तविक हक डूंगरपुर राज्य का ही माना

गया, जिससे यह भागड़ा शांत हुआ^१ ।

ई० स० १८६५ (वि० सं० १६२२) में महारावल ने अंग्रेज सरकार को बांसवाड़ा राज्य में होकर रेलवे निकालने के लिए कितने ही अधिकारों के साथ बिना मूल्य भूमि देना और अपने राज्य में महारावल का रेलवे निका- के साथ बिना मूल्य भूमि देना और अपने राज्य में लने के लिए जमान देने होकर गुजरनेवाले माल पर महसूल राहदारी का इक़रार करना छोड़ देना स्वीकार किया^२; किन्तु फिर बांसवाड़ा राज्य की सीमा में होकर रेलवे निकालने का विचार अंग्रेज सरकार ने स्थगित रक्खा, जिससे अंतिम लिखा पढ़ी नहीं हुई और आवागमन की कठिनाइयां पहले जैसी बनी रहीं ।

बांसवाड़ा राज्य की ई० स० १८६७ (वि० सं० १६२४) तक सलामी की तोषें नियत न थीं । अतएव ई० स० १८६७ बांसवाड़ा राज्य की सलामी की (वि० सं० १६२४) में अंग्रेज सरकार ने बांसवाड़ा के नरेश की स्थायी रूप से १५ पन्द्रह तोपों की सलामी नियत की^३ ।

बांसवाड़ा राज्य में कुशलगढ़ का ठिकाना आय की दृष्टि से प्रमुख है, जिसको बांसवाड़ा के अतिरिक्त रतलाम राज्य की तरफ से भी ६५ गांव जागीर में मिले हुए हैं । ई० स० १८५५ (वि० सं० १६१२) में रतलाम के स्वामी और कुशलगढ़ के महारावल का कुशलगढ़ के राय से विरोध राय के बीच जब भागड़ा हुआ, तब यह फ़ैसला हुआ कि उक्त राय रियासत बांसवाड़ा का मातहत है^४, परन्तु फिर कई

(१) वि० सं० १६२२ माघ सुदि १५ (ई० स० १८६६ ता० ३० जनवरी) का मेजर ए० एम० मैकेंज़ी, पोजिटिवल गवर्निमेन्ट हिली ट्रेन्ड्स के हस्ताक्षर सहित बेणेश्वर का शिलालेख ।

(२) टीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२); जिल्द ३, पृ० ४४५ ।

(३) वही; पृ० ४४५ ।

(४) मुंशी ज्वालासहाय; वक्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५२४ ।

बातें ऐसी हुई कि जिनसे उक्त राव अपने को स्वतन्त्र मानकर बांसवाड़ा राज्य की आकाश्यों की उपेक्षा करने लगा। जब उसकी उदूलहुकमी और सर्कशी की शिकायतें हुई तो उसने मेवाड़ के पोलिटिकल एजेंट को स्पष्ट जवाब दिया कि मेरी रियासत बांसवाड़ा से बिलकुल पृथक् है। यदि बांसवाड़ा के द्वारा मुझ से लिखा पढ़ी होगी तो कदापि उत्तर न दूंगा। उसे बहुत समझाया गया कि वह बांसवाड़ा राज्य के मातहत है और सरकार का अहदनामा बांसवाड़ा से है, उसके साथ नहीं, परन्तु उसने न माना। पोलिटिकल एजेंट के बुलाने पर राव बांसवाड़े गया, पर महारावल के पास नहीं गया^१। इससे महारावल तथा उसके बीच और भी मनमुटाव हो गया।

महारावल, कुशलगढ़ के राव के ज़िम्मे खिराज आदि की रकम बाक़ी निकाल कर, उससे धसूल करना चाहता था। ऐसे में वि० सं० १६२३ (ई० सं० १८६६) में कलिंजरा के धाने से एक क़ैदी भाग गया, जिसके लिए यह बात फैलाई गई कि उक्त क़ैदी को कुशलगढ़ के राव का कुंवर^२ कई आदमियों को घायल कर छुड़ा ले गया है। बांसवाड़ा राज्य ने इस बात की आड़ लेकर कुशलगढ़ के राव के विरुद्ध कड़ी शिकायत की। तब पोलिटिकल अफ़सरों ने कुशलगढ़ के राव को क़ैदी सौंप देने की आकाश दी, पर वह क़ैदी कुशलगढ़वालों की तरफ़ से डमला कर नहीं छुड़ाया गया था, इसलिए कुशलगढ़ के राव ने अपनी निर्दोषिता बतलाते हुए कई उज्र किये, किन्तु मेवाड़ के पोलिटिकल एजेंट कर्नल निक्सन ने उसके उज्र ठीक न समझे। अन्त में उक्त कर्नल के रिपोर्ट करने पर अंग्रेज़ सरकार ने कुशलगढ़ के राव की रतलाम की जागीर पर भी ज़ब्त होने की कार्यवाही की^३।

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक्राये राजपूताना; जि० १, पृ० ५२४।

(२) वही; पृ० ५२४।

(३) अर्सेकिन; गैज़ेटियर ऑव् बांसवाड़ा स्टेट; पृ० १६४।

(४) टीटीज एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़ (ई० सं० १६३२); जिल्द ३, पृ० ४४८। अर्सेकिन; गैज़ेटियर ऑव् बांसवाड़ा; पृ० १६५।

इसपर कुशलगढ़ के राव ने इस मामले में अपने को सर्वथा निर्दोष सिद्ध करने के लिए पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ के फ़ैसले के विरुद्ध पैरवी की, तो पुनः इस मामले की जांच का हुक्म हुआ। जब यह मामला कर्नल हचिन्सन, पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ के सामने उपस्थित हुआ तो उसने राव के उच्च बड़े ध्यान से सुने और उसे निर्दोष माना। फिर यह मामला मेजर मैकेंज़ी आदि खैरवाड़ा के अफ़सरों को सौंपा गया, जिन्होंने घटना-स्थल पर जाकर तहकीकात की। महारावल लक्ष्मणसिंह उन दिनों अपने कामदार केसरीसिंह कोठारी से नाराज़ हो गया था, इसलिए उक्त कोठारी ने महारावल की नाराज़गी का बदला लेने के लिए डूंगरपुर के कामदारों की मारफ़्त वास्तविक हाल उक्त अफ़सर को ज़ाहिर कर दिया और महारावल से भी किसी प्रकार यह तहरीरी इत्तार कर लिया—“अपराधी का भागना कुशलगढ़ की मदद से न था, राज्य के अहलकारों की ग़फलत से सुनने में आया और इस मामले में कामदारों ने सब कार्यवाही मेरे (महारावल के) हुक्म से की है।”

इसपर उक्त अफ़सरों ने अंग्रेज़ सरकार में इस विषय की विस्तृत रिपोर्ट पेश कर महारावल की शिकायत की तो सरकार ने नाराज़ होकर ई० स० १८६६ ता० १ अगस्त (वि० सं० १६२६ थावण वदि ८) से महारावल की सलामी में चार तोपें छः वर्ष के लिए घटाकर ग्यारह तोपें नियत कर दीं^१। गांव ज़ब्त करने के बदले कुशलगढ़ के राव को ६३६७ रुपये

(१) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ग्यारहवां।

(२) एचिसन; टीडीज़ एंगेज़मेंट्स एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२); जिल्द ३, पृ० ४४५।

ई० स० १८७७ (वि० सं० १६३३) के देहली दरबार के समय भारत सरकार ने बांसवाड़ा राज्य की सलामी की तोपें सदैव के लिए पन्द्रह के स्थान में ग्यारह नियत कर दीं। फिर ई० स० १८७८ (वि० सं० १६३५) में इस आज्ञा में परिवर्तन होकर रियासत की १५ तोपों की सलामी स्थिर कर दी गई और महारावल लक्ष्मणसिंह की सलामी ११ तोपों की ही रखी गई, जो ई० स० १८८० फ़रवरी (वि० सं०

हूँ जाने के दिलाना तजवीज़ होकर भविष्य में कुशलगढ़ के भीतरी मामलों में महारावल के किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करने, कुशलगढ़ के इलाके में से जानेवाली व्यापार की वस्तुओं का महसूल राव के ही लेने, ११००^१ रुपये (सालिमशाही) वार्षिक खिराज के पोलिटिकल एजेंट के द्वारा बांसवाड़ा को देते रहने और अंग्रेज़ अफ़सर बांसवाड़े का स्वत्व समझ कर जो बात कहे, उसकी तामील करने का फ़ैसला हुआ^२।

इस फ़ैसले से कुशलगढ़ का राव बांसवाड़ा से बिल्कुल ही स्वतन्त्रसा हो गया। उसकी गणना अंग्रेज़ सरकार के संरक्षित ठिकानों में होने लगी^३ एवं उसके न्यायसम्बन्धी अधिकार सीमित कर दिये गये। वार्षिक खिराज नियमित रूप से बराबर दाखिल करने और खास-खास अवसरों अर्थात् महा-रावल की गद्दीनशीनी, कुंवर तथा कुंवरीयों के विवाह पर स्वयं बांसवाड़ा में उपस्थित रहने^४ के अतिरिक्त उसका अन्य कुछ भी सम्बन्ध बांसवाड़ा राज्य से न रहा।

१६३६ माघ) के पीछे १५ हो गई [एचिसन; टीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२); जिल्द ३, पृ० ४४६-७]।

(१) सालिमशाही रुपये का भाव गिर जाने से ई० स० १६०४ (वि० सं० १६६१) में उसका प्रचलन बन्द होकर उसके स्थान में कलदार रुपये का बांसवाड़ा राज्य में चलन हुआ। उस समय कुशलगढ़ के ठिकाने से जो ११०० रुपये सालिम-शाही बांसवाड़ा राज्य में खिराज के पहुँचते थे, उसके स्थान में ५५० रुपये कलदार प्रति वर्ष लेने का नियम हुआ। तब से कुशलगढ़ का राव ५५० रुपये कलदार बांसवाड़ा राज्य को खिराज के देता है। इसी प्रकार रतलाम राज्य की तरफ़ से खेड़ा की जागीर है, जिसका खिराज वह १२०५ रुपया सालिमशाही (कलदार ६००) प्रति वर्ष रतलाम राज्य को देता है (अर्सेकिन; गैज़ेटियर ऑफ़ बांसवाड़ा स्टेट; पृ० १६०)।

(२) एचिसन; टीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२); जि० ३, पृ० ४४५-४६। अर्सेकिन; गैज़ेटियर ऑफ़ बांसवाड़ा स्टेट; पृ० १६४-६५।

(३) अर्सेकिन; गैज़ेटियर ऑफ़ बांसवाड़ा स्टेट; पृ० १६०।

(४) वही; पृ० १६०।

बांसवाड़ा और कुशलगढ़ के उपर्युक्त भगड़े में महारावल लक्ष्मण-सिंह ने अंग्रेज़ अफ़सरों के पास यह बात पेश की कि—कुछ अहलकारों ने व्यर्थ ही मेरा नाम शामिल कर मुझको बदनाम किया है। इस कार्यवाही का मुखिया कोठारी केसरीसिंह ही था, जिसको सरकार ने बेकसूर समझ विश्वास कर लिया है कि उसने इस कार्यवाही में सम्मिलित न होने के कारण ही अपने ओहदे से पृथक् होने का नुकसान उठाया है, परन्तु उसी ने बांसवाड़ा के अहलकारों को ज़िद कर इस काम के लिए तैयार किया था। जो तहरीर इस मामले में कृत्रिम कागज़ बनाये जाने की बांसवाड़ा राज्य से पेश हुई, वह उक्त कोठारी के यह दबाव देने पर कि रियासत ज़प्त हो जायगी, पेश की गई है। उसकी खास मनशा यह थी कि वे अहलकार जो इस मामले में फ़र्ज़ी कार्यवाही करने के अपराध में सम्मिलित हुए, सरकार के कोप से बच जावें,—किन्तु महारावल के इस कथन का कुछ भी प्रभाव न पड़ा।

अंग्रेज़-सरकार के उपर्युक्त फैसले से कुशलगढ़ का ठिकाना बांसवाड़ा राज्य के दबाव से मुक्त हो गया और उसको अपना वकील असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट के पास बांसवाड़ा में नियत करने का स्वत्व मिल गया। भारत सरकार के फ़ॉरेन सेक्रेटरी डब्ल्यू० एस० सेटनकर-द्वारा ई० स० १८६६ ता० २२ जुलाई (वि० स० १६२६ आपाठ सुदि १४) को इस निर्णय की सूचना आने पर पोलिटिकल एजेंट के कथनानुसार राव ने ई० स० १८७० ता० ६ अप्रैल (वि० स० १६२७ चैत्र सुदि ८) को असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट के पास अपना वकील नियत कर दिया^१ तथा ई० स० १८७३ जनवरी (वि० स० १६२६) में उसने खिराज भी दाखिल कर दिया^२; परन्तु तलवारबन्दी का नज़राना, जिसके लिए महारावल का उज्र था, दाखिल नहीं किया। अंत में पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ के सिफ़ारिश करने

(१) ज्वालासहाय; वक़ाये राजपूताना; जि० १, पृ० ५२६।

(२) वही; पृ० ५२८।

(३) वही; पृ० ५२६।

पर ई० स० १८७५ (वि० सं० १९३२) में वह (नज़राना) अंग्रेज़ सरकार ने माफ़ कर दिया^१।

मरहटों, पिंडारियों, सिंधियों और सरदारों आदि के उपद्रवों के कारण प्रजा को न्याय मिलने के जितने भी साधन थे, वे सब मिटकर देश में

महारावल का दीवानी

फ़ौजदारी की अदालतें

नियत करना

अव्यवस्था और अराजकता का सूत्रपात हुआ।

उस समय महारावल और प्रधान का हुक्म ही

सर्वोपरि न्याय माना जाता था। इस परिपाटी से

जैसे आजकल निर्धन रियाया के लिए न्याय महंगी वस्तु है, उस समय वह वैसी महंगी नहीं थी और न अधिक ध्ययसाध्य थी, तो भी कभी-कभी अन्याय हो जाता था। जिसके पास देने की अधिक द्रव्य होता, वह सच्चा हो जाता था। जब से अंग्रेज़ सरकार से देशी राज्यों के साथ राजनैतिक संबंध स्थापित हुआ, तब से उसने देशी राज्यों से न्याय व्यवस्था में सुधार करने का आग्रह किया। फलतः अंग्रेज़ सरकार की प्रचलित न्याय-प्रणाली के अनुसार न्याय विभाग पृथक् किया जाकर उसको सुव्यवस्थित रूप से चलाने के हेतु नियमानुसार अदालतें स्थापित करने की योजना हुई। पोलिटिकल अफ़सरों की सलाह के अनुसार महारावल लक्ष्मणसिंह ने भी अपने यहां दीवानी और फ़ौजदारी अदालतें कायम कीं, परंतु बांसवाड़ा राज्य के सरदारों की मनमानी कार्यवाही से बहुत दिनों तक कार्य सफलतापूर्वक न चला और न वे दीवानी तथा फ़ौजदारी क़ानून, जो पारसी फ़ामजी (असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट बांसवाड़ा,) ने ई० स० १८६६-७० (वि० सं० १९२६) में काठियावाड़ के दीवानी तथा फ़ौजदारी क़ानूनों का गुजराती में अनुवाद कर जारी किये थे^२, बराबर चल सके।

अंग्रेज़-सरकार और देशी राज्यों के बीच अपराधियों के लेन-देन के विषय में कोई निश्चित नियम न होने से अंग्रेज़ी इलाक़े के अपराधी देशी

(१) ज्वालासहाय; वक्राये राजपूताना; जि० १; पृ० ५२६।

(२) वही; पृ० ५४३-४४।

अपराधियों के संबंध में अंग्रेज सरकार के साथ अहदनामा होना राज्यों में और देशी राज्यों के अंग्रेजी अमलदारी में चले जाते थे। जब वे मांगे जाते तो सौंपने में बड़ी कठिनाता हुआ करती थी, जिससे वे दंड से बचकर निर्भयतापूर्वक विचरण करते थे। फलतः अपराधियों की संख्या में वृद्धि होकर उपद्रव बना ही रहता था और शांति स्थापित होना दुष्कर था। इस बुराई को मिटाने के लिए अंग्रेज सरकार ने देशी राज्यों के साथ अपराधियों के लेन-देन के नियम निश्चित कर, इकरारनामा करना चाहा। तदनुसार ई० स० १८६८ (वि० सं० १६२५) में बांसवाड़ा राज्य के साथ नीचे लिखा अहदनामा हुआ—

पहली शर्त—अंग्रेजी राज्य या उसके बाहर का कोई व्यक्ति यदि अंग्रेजी इलाके में कोई संगीन जुर्म करे और बांसवाड़ा राज्य की सीमा के भीतर आश्रय ले तो बांसवाड़ा सरकार उसे गिरफ्तार करेगी और उसके तलब किये जाने पर प्रचलित नियम के अनुसार सरकार अंग्रेज के सुपुर्द करेगी।

दूसरी शर्त—कोई आदमी, जो बांसवाड़ा की प्रजा हो, बांसवाड़ा राज्य की सीमा के भीतर कोई बड़ा जुर्म करे और अंग्रेजी राज्य में शरण ले, तो उसके तलब किये जाने पर अंग्रेज सरकार उसे गिरफ्तार करेगी और दस्तूर के मुताबिक सरकार बांसवाड़ा के हवाले करेगी।

तीसरी शर्त—कोई व्यक्ति, जो बांसवाड़ा की प्रजा न हो, बांसवाड़ा राज्य की सीमा के भीतर कोई संगीन जुर्म कर अंग्रेजी इलाके में शरण ले, तो अंग्रेज सरकार उसे गिरफ्तार करेगी और उसके मुकदमे की तहकीकात वह अदालत करेगी, जिसे अंग्रेज सरकार हुक्म देगी। साधारण नियम के अनुसार ऐसे मुकदमों की तहकीकात उस पोलिटिकल एजेंट की अदालत में होगी, जिससे बांसवाड़ा राज्य का राजनैतिक संबंध होगा।

चौथी शर्त—किसी सूरत में कोई सरकार किसी व्यक्ति को, जिस पर संगीन जुर्म का अभियोग लगाया गया हो, सुपुर्द करने के लिए बाध्य न होगी, जब तक कि प्रचलित नियम के अनुसार जिसके राज्य में अपराध

किये जाने का अभियोग लगाया गया हो, वह सरकार या उसकी आज्ञा से कोई व्यक्ति अपराधी को तलब न करे और जब तक जुर्म की ऐसी शह-दत पेश न की जाय, जिससे जिस राज्य में अभियुक्त मिले उसके अनुसार उसकी गिरफ्तारी जायज़ समझी जाय और यदि वह अपराध उसी राज्य में किया जाता, तो वहां भी अभियुक्त दोषी होता।

पांचवीं शर्त—नीचे लिखे हुए अपराध संगीन जुर्म समझे जायंगे—

- (१) क़त्ल ।
- (२) क़त्ल करने का प्रयत्न ।
- (३) उत्तेजना की दशा में किया हुआ दंडनीय मनुष्य-वध ।
- (४) ठगी ।
- (५) विष देना ।
- (६) ज़िना-बिल्-जत्र (बलात्कार) ।
- (७) सख्त चोट पहुंचाना ।
- (८) बच्चों का चुराना ।
- (९) स्त्रियों का बेचना ।
- (१०) डकैती ।
- (११) लूट ।
- (१२) सेंध लगाना ।
- (१३) मवेशी की चोरी ।
- (१४) घर जलाना ।
- (१५) जालसाज़ी ।
- (१६) जाली सिका बनाना या खोटा सिका चलाना ।
- (१७) दंडनीय विश्वासघात ।
- (१८) माल असबाब का हज़म करना, जो दंडनीय समझा जाय ।
- (१९) ऊपर लिखे हुए अपराधों में मदद देना ।

छठी शर्त—ऊपर लिखी हुई शर्तों के अनुसार अपराधी को गिरफ्तार करने, रोक रखने या सुपुर्द करने में जो खर्च लगे, वह उस सर-

कार को देना पड़ेगा, जो अपराधी को तलब करे।

सातवीं शर्त—ऊपर लिखा हुआ अहदनामा तब तक जारी रहेगा, जब तक अहदनामा करनेवाली दोनों सरकारों में से कोई उसके तोड़े जाने के सम्बन्ध में अपनी इच्छा दूसरी से प्रकट न करे।

आठवीं शर्त—इस (अहदनामे) में जो शर्तें दी गई हैं, उनमें से किसी का भी ऐसे किसी अहदनामे पर असर न होगा, जो दोनों पक्षों के बीच इससे पहले हो चुका है, सिवा किसी अहदनामे के उस अंश के, जो इसके विरुद्ध हो।

यह अहदनामा २४ वीं दिसम्बर ई० स० १८६८ (मिती पौष सुदि १० वि० सं० १६२५) को बांसवाड़े में हुआ।

(हस्ताक्षर) ए० आर० ई० हचिन्सन,

लेफ्टिनेंट-कर्नल, स्थानापन्न पोलिटिकल

एजेंट, मेवाड़।

बांसवाड़ा के महारावल का हस्ताक्षर और मुहर।

(हस्ताक्षर) मेयो

ता० ५ वीं मार्च ई० स० १८६६ (मिती चैत्र वदि ८ वि० सं० १६२५) को फ़ोर्ट विलियम (कलकत्ता) में हिन्दुस्तान के वाइसरॉय और गवर्नर जेनरल ने इस अहदनामे की तस्दीक की।

(हस्ताक्षर) डबल्यू० एस० सेटनकर,

सेक्रेटरी, गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, फ़ारेन

डिपार्टमेंट।

अठ्ठारह वर्ष के पश्चात् इस अहदनामे में जो थोड़ा परिवर्तन हुआ, वह नीचे लिखे अनुसार है—

ता० ५ वीं मार्च ई० स० १८६६ को अंग्रेज़-सरकार और बांसवाड़ा रियासत के बीच अपराधियों को सौंपने के बाबत जो अहदनामा हुआ था

(१) एचिंसन; डीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२);
वि० ३, पृ० ४७१-७७।

और चूंकि अंग्रेज़ी इलाके से भागकर बांसवाड़ा राज्य में पनाह लेनेवाले मुजरिमों को सौंपने के लिए उस अहदनामें में जो प्रणाली निश्चित हुई थी वह अनुभव से अंग्रेज़ी राज्य में प्रचलित क़ानूनी बर्ताव से कम आसान और कम कारगर पाई गई, इसलिए इस लिखावट के द्वारा अंग्रेज़ सरकार तथा बांसवाड़ा राज्य के बीच यह शर्त हुई है कि भविष्य में अहदनामे की वे शर्तें, जिनमें मुजरिमों को सुपुर्द करने की कार्रवाई बतलाई गई है, अंग्रेज़ी इलाके से भागकर बांसवाड़ा राज्य में आश्रय लेनेवाले मुजरिमों को सौंपने के विषय में न लगाई जायगी, लेकिन इस समय ऐसे प्रत्येक विषय में अंग्रेज़ी भारत में जो नियम प्रचलित हैं, उन्हीं के अनुसार कार्यवाही होगी।

आज ता० २७ वीं जुलाई ई० स० १८८७ (मिती श्रावण सुदि ७ वि० सं० १६४४) को बांसवाड़ा में हस्ताक्षर हुए।

(हस्ताक्षर) महारावल बांसवाड़ा

(हस्ताक्षर) ए० एफ० पिन्हे, लेफ़्टिनेंट,

असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट बांसवाड़ा

तथा प्रतापगढ़।

(हस्ताक्षर) डफ़रिन

वाइसरॉय एण्ड गवर्नर जनरल ऑफ़

इंडिया।

ता० २८ मार्च ई० स० १८८८ (मिती द्वितीय चैत्र वदि १ वि० सं० १६४५) को फ़ोर्ट विलियम (कलकत्ता) में हिन्दुस्तान के वाइसरॉय और गवर्नर जनरल ने इसको मंज़ूर करके इसकी तसदीक़ की^१।

(दस्तख़त) एच० एम० ज्यूरंड,

सेक्रेटरी, गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, फ़ॉरेन

डिपार्टमेंट।

(१) एचिसन; द्वितीय एंग्रेजमेन्डस एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२);
जि० ३, पृ० ४७७-७८।

मेवाड़ के पोलिटिकल एजेंट के अधीन मेवाड़, डूंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ के राज्य होने से वहां काम अधिक रहता था, जिससे वहां बांसवाड़े में असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट का नियत होना थी। इधर फिर बांसवाड़ा और कुशलगढ़ के भगड़े में उक्त पोलिटिकल एजेंट के पास कार्य बढ़ गया। फलतः ई० स० १८६६ (वि० सं० १६२६) में पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ की अधीनता में राजपूताना एजेंसी का हेडक्वार्टर पारसी फ़ामजी भीकाजी बांसवाड़ा में असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट नियत किया गया^१ और ई० स० १८१८ (वि० सं० १८७५) की संधि की धारा ६ के अनुसार उसके वेतन आदि के पंद्रह हजार रुपये सालिमशाही (कलदार ११७४१ रु० १० आने) वार्षिक बांसवाड़ा राज्य के ज़िम्मे लगाये गये^२। फिर वही अफ़सर प्रतापगढ़ राज्य के असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट का कार्य भी करने लगा, जिससे ई० स० १८८४ (वि० सं० १६४१) में इस हुकम में परिवर्तन होकर दौरे व अमले के वेतन का वाजिबी हिस्सा जोड़कर असिस्टेंट एजेंट की तनख्वाह के पांच सौ रुपये माहवार से अधिक रकम बांसवाड़ा राज्य से न लेता स्थिर हुआ^३। फिर ई० स० १८८६ (वि० सं० १६४६) में इस विषय में बांसवाड़ा राज्य से केवल पांच हजार रुपये वार्षिक लेना तय रहा और जो १८००० रुपये ई० स० १८८४ (वि० सं० १६४१) तक बाक़ी रह गये थे, वे चढ़े हुए ख़िराज में जोड़ लिये गये^४।

(१) ज्वालासहाय; वक्ताये राजपूताना; जि० १, पृ० १२५।

(२) एचिसन; ट्रीटीज़ पंगेजमेन्ट्स एण्ड सनदज़ (ई० स० १६३२); जि० ३, पृ० ४४६।

(३) वही; पृ० ४४६।

(४) वही; पृ० ४४६।

बांसवाड़ा में रहनेवाला यह पोलिटिकल अफ़सर पहले असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट बांसवाड़ा कहलाता था। फिर प्रतापगढ़ राज्य का सम्बन्ध उससे हो जाने पर वह असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट बांसवाड़ा व प्रतापगढ़ कहलाने लगा। कई वर्ष पीछे

रोगियों आदि की चिकित्सा अब तक पुरानी रीति से ही होती थी और विशेषतः भाड़-फूंक तथा देशी दवाइयों-द्वारा उपचार किया जाता था।

वि० सं० १९२६ (ई० सं० १८६६-७०) में महारावल
अस्पताल की स्थापना ने अपने यहां, एक हकीम नौकर रक्खा। फिर

एक देशी डाक्टर अंग्रेज़ सरकार से मांगा। इसपर ई० सं० १८७० अगस्त (वि० सं० १९२७) में वहां पर अंग्रेज़ी चिकित्सा प्रणाली का प्रारंभ होकर अस्पताल खोला गया और चेचक का टीका लगाने की भी व्यवस्था हुई।

वि० सं० १९२७ मार्गशीर्ष (ई० सं० १८७० नवम्बर) में ओरीवाड़े का राठोड़ ठाकुर ओंकारसिंह, जो प्रथम वर्ग का सरदार था, मर गया।

उसकी विधवा स्त्री ने परबतसिंह को सब लोगों की सम्मति से गोद ले लिया, परन्तु महारावल ने ओंकारसिंह की गोदनशीली भी बेकायदा समझ रखी थी, क्योंकि ओरीवाड़े के ठाकुर प्रतापसिंह का सम्बन्धी दौलतसिंह, जो ओंकारसिंह की अपेक्षा समीपी सम्बन्धी था, विद्यमान था। इसलिये ओंकारसिंह की मृत्यु हो जाने पर महारावल ने दौलतसिंह का स्वत्व वाजिब समझ, उसका पक्ष लिया। फिर उस (महारावल) ने परबतसिंह को धोखे से बुलाकर बांसवाड़े में कैद कर लिया और ओंकारसिंह की स्त्री की इच्छा के विरुद्ध दौलतसिंह को वहां का मालिक बना दिया। इससे सब सरदार बिगड़ उठे। उन्होंने दौलतसिंह से जाति-वहिष्कृत की भांति व्यवहार किया और कुवानिया के ठाकुर की गमी के अवसर पर वार्षिक भोज में दौलतसिंह को न बुलाया, जिससे महारावल ने नाराज़ होकर कुवानिया के ठाकुर के रिश्तेदार को बुलाकर कैद कर दिया। इसपर राज्य के

जब से इंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ राज्यों का सम्बन्ध मेवाड़ की पोलिटिकल एजेंसी (फिर रेजिडेंसी) से पृथक् हुआ, तब से उक्त असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट का पद हट कर वही अरुसर दक्षिणी राजपूताने का पोलिटिकल एजेंट कहलाता है।

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० २५१-२२।

जागीरदारों और गद्दी के राव रत्नसिंह ने महारावल के विरुद्ध पोलिटिकल एजेंट के पास शिकायत की। तब पोलिटिकल एजेंट ने जाति के मामले में महारावल को हस्तक्षेप करने का अधिकार न होना बतलाकर कुवानिया के ठाकुर के रिश्तेदार को छोड़ देने के लिए लिखा, जिसपर महारावल ने उसको छोड़ दिया^१।

मेवाड़, डूंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ के राज्यों में भील आदि जरायम पेशा लोगों को दवाने के लिए मकरानी तथा विलायती नौकर विलायती और मकरानी रखे जाते थे, जिनसे भील और मीने दबे हुए तो लोगों को नौकरी से अवश्य रहते थे, परन्तु वे भीलों आदि के साथ इतना बड़ा कठोर व्यवहार करते थे। वे उन लोगों को अधिक सूद पर रुपये उधार देकर उनके बाल-बच्चों को गिरवी (रेहन) लिखवा लेते थे और जब रुपया नहीं मिलता तो वे भीलों पर सस्ती करते तथा उनके बाल-बच्चों को छीनकर उनको लौंडी या गुलाम बना लेते थे। इसपर भील आदि क्रुद्ध होकर कभी-कभी विलायती लोगों को मार भी डालते थे। इससे फ़साद बढ़ जाया करता था और उसको दवाने में बहुत परिश्रम उठाना पड़ता था। उन्हीं दिनों ईंडर राज्य के पोसिना ठिकाने का सरदार विद्रोही हो गया। उस समय पानरवा ठिकाने (भोमट, मेवाड़) के विलायती नौकर भी जाकर पोसिना के सरदार के शामिल हो गये, जिससे फ़साद बढ़ गया। अन्त में जब अंग्रेज़ सरकार ने उन लोगों के पृथक् होने पर ही शांति स्थापित होने की सम्भावना देखी तो उसने उक्त राज्यों को उन्हें नौकर न रखने की सलाह दी, जिससे बड़ी कठिनता से पठानों को नौकर रखने की प्रथा बंद हुई और ई० स० १८७०-७१ (वि० सं० १६२७) से वे बांसवाड़ा राज्य से भी पृथक् किये जाने लगे^२।

उन्हीं दिनों गुढ़े का ठाकुर हिम्मतसिंह बांसवाड़ा राज्य की आज्ञा की उपेक्षा कर विद्रोही हो गया। जब उसका उपद्रव बढ़ गया तो राज्य ने

(१) मुंशी ज्वालासहाय; ब्रह्मराजे राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५३२।

(२) वही; पृ० ५३३।

गुढ़ के ठाकुर हिम्मत्सिंह का
विद्रोही होकर मारा जाना

उसको गिरफ्तार करने के लिए सेना भेजी, जिसका
कई बार उसने मुकाबला किया। अंत में ई० स० १८७१
ता० १७ मई (वि० सं० १६२८ ज्येष्ठ वदि १३) को

उसका राज्य के सिपाहियों से युद्ध हुआ, जिसमें वह उनके हाथ से मारा
गया^१।

बांसवाड़ा राज्य में गढ़ी का ठिकाना प्रथम वर्ग का है और कुशल-
गढ़ के समान वह भी दो राज्यों का जागीरदार है अर्थात् डूंगरपुर की तरफ
गढ़ी के राव रत्नसिंह और से भी उसको चीतरी की जागीर प्राप्त है। गढ़ी का राव
महारावल के बीच मनो- रत्नसिंह उदयपुर के महाराणा शंभुसिंह का श्वसुर
मालिन्य होना था, अतएव उक्त महाराणा ने उसका सम्मान बढ़ाने

के लिए ई० स० १८७१ (वि० सं० १६२८) में उसको राव का खिताब
दिया^२, जिससे महारावल नाराज़ हुआ, क्योंकि रत्नसिंह को खिताब लेने
के पूर्व उससे आज्ञा लेनी चाहिये थी। महारावल की नाराज़गी के दूसरे
कारण ये भी हुए कि उस (राव रत्नसिंह) ने निःसंतान होने से महा-
रावल की आज्ञा के बिना ही एक लड़के को गोद ले लिया तथा संगीन
मामलों के अपराधियों को पोलिटिकल अफसरों के मांगने पर भी नहीं
सौंपा^३। महारावल ने उसके बाग के कुछ हिस्से को सड़क बनाने के बहाने
से ले लिया और उसके इलाक़े में महसूल राहदारी, जो माफ़ था, वसूल
करना आरम्भ किया। इसपर राव रत्नसिंह ने पोलिटिकल अफसरों के
पास महारावल की शिकायत की। अन्त में राव रत्नसिंह ने, जो सन्मदार
आदमी था, लोगों के समझाने से महारावल से मेल कर लिया। महारावल
ने उसका राव का खिताब वहाल रखवा, बाग के एवज़ में दूसरी ज़मीन
दे दी और महसूल राहदारी के लिए संतोषप्रद निबटारा कर दिया। पीछे

(१) वीरबिनोद; भाग दूसरा, प्रकरण ग्यारहवां। वक्राये राजपूताना;
जिल्द १, पृ० ५३२।

(२) वीरबिनोद; भाग दूसरा, प्रकरण ग्यारहवां। ज्वालासहाय; वक्राये
राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५३१।

से जब वि० सं० १९३१ (ई० सं० १८७४) में कोठारी चिमनलाल बांसवाड़ा के मंत्री पद से पृथक् किया गया तब महारावल ने राव रत्नसिंह को अपना मन्त्री बनाया^१ ।

उस समय तक बांसवाड़ा राज्य में शिक्षा का प्रचार प्राचीन शैली पर था और आधुनिक शिक्षा प्रणाली के अनुसार बालकों के पठन-पाठन की कोई व्यवस्था न थी । राजपूत तो शिक्षा से दूर रहते ही थे, ब्राह्मण, महाजन आदि भी थोड़ा बहुत जहां उनको अवसर मिलता, निजी तौर पर कुछ सीख-कर काम चलाते थे । उन दिनों विशेषतः जैन यतियों के उपाश्रयों में ही पढ़ाई होती थी, परन्तु पठनपाठन की शैली ऐसी थी कि जिससे न तो विद्यार्थी शुद्ध लिख सकते और न पढ़ सकते थे । अतएव इस खराबी को मिटाने के लिए वि० सं० १९२८ (ई० सं० १८७१-७२) में बांसवाड़ा में हिन्दी की शिक्षा के लिए राज्य की ओर से एक अध्यापक नियत होकर राज्य के व्यय से मदरसा स्थापित किया गया^२ ।

उन्हीं दिनों वि० सं० १९२७ (ई० सं० १८७०) में बांसवाड़े में चिट्ठियों आदि पहुँचाने के लिए सरकार की तरफ से डाकखाना खोला गया, पर आय कम होने से ई० सं० १८७१ के मार्च में वह बन्द कर दिया गया, किन्तु डाकखाने के बिना जनता को कष्ट होने लगा । इसपर महारावल ने अंग्रेज सरकार से लिखा पढ़ी की, जिससे वि० सं० १९३१ मार्गशीर्ष सुदि ६ (ई० सं० १८७४ ता० १४ दिसंबर) को स्थायी रूप से बांसवाड़े में डाकखाना खोला जाकर खैरवाड़े से डाक की लाइन का सम्बन्ध जोड़ दिया गया^३ ।

धनवान लोगों में दास दासी रखने की प्रथा प्राचीन है और उच्च

(१) वीरविनोद; भाग दूसरा, प्रकरण ग्यारहवां । ज्वालासहाय; वज्राये राजपूताना; जि० १, पृ० ४३१ ।

(२) ज्वालासहाय; वज्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ४४२ ।

(३) वही; पृ० ४४३ ।

धैर्यी के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि काम-काज के लिए दास-दासियों को रखते हैं। प्रतिष्ठित राजपूतों का काम बिना दास दास-प्रथा की रोक होना दासी के चल ही नहीं सकता। उनके यहां दास-दासियों का होना प्रतिष्ठा का चिह्न समझा जाता है और प्रायः कन्या के विवाह के अवसर पर दास-दासी उसकी परिचर्या के लिए दहेज में दिये जाते हैं। इसके लिए दुर्भिक्ष में गरीब लोग आपत्ति के मारे अपने बाल बच्चे दूसरों को (जो उनका निर्वाह कर सकें) प्रसन्नता से दे देते या आवश्यकता पड़ने पर बेच देते थे। ऐसे बाल बच्चों को संपन्न लोग अपना दास-दासी बनाने के लिए ले लेते थे। इस दासप्रणाली से मनुष्य-विक्री की प्रथा बढ़ती जाती थी, अतः अंग्रेज़ सरकार ने इस प्रथा को मिटाने के लिए मनुष्य-विक्री को दंडनीय अपराध ठहराया। इसपर देशी राज्यों का भी इस तरफ ध्यान आकर्षित हुआ और वे दास-प्रणाली को मिटाने के लिए यत्न करने लगे। महारावल लक्ष्मणसिंह ने भी इस बात को स्वीकार कर दास-प्रथा रोकने के हेतु मनुष्य-विक्री को रोकने की आज्ञा प्रचलित की,^१ तो भी किसी न किसी रूप में अब तक वह प्रथा कुछ कुछ जारी है।

सोदलपुर का दल्ला रावत भीलों का एक मुखिया था। वि० सं० १६२६ (ई० सं० १८७२-७३) में महारावल से उसका विरोध हो गया, जिसका कारण यह था कि महारावल उसकी पाल से बराड़ का दो हजार रुपया वसूल करना चाहता था, जब कि वह असली नौ सौ रुपये ही बतलाता था। जब राज्य ने उससे पूरे दो हजार रुपये वसूल करने के लिए दस्तक (धौंस) जारी की तो वह गांव छोड़कर बांसवाड़ा राज्य से प्रतापगढ़ राज्य में जाकर आबाद हो गया। वह यथासमय आठ हजार मनुष्यों की जमीयत इकट्ठी कर सकता था। इसलिए जब पोलिटिकल अफसरों को फ़साद की आशंका हुई तब उन्होंने महारावल से दल्ला को समझाकर अनुयायी बना लेने की सिफ़ारिश की। इसपर महारावल ने उससे समझौता कर

सोदलपुर के दल्ला रावत का
बखेड़ा करना

लिया, परन्तु उस (दल्ला) ने अपने स्वभाव को नहीं छोड़ा और बांसवाड़ा लौटने के बाद भी प्रतापगढ़ राज्य में जाकर धारदारों की^१ ।

सिपाही विद्रोह के समय का एक अपराधी सआदतख़ां, जो इंदौर रेज़िडेंसी के बागियों का प्रमुख था, बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी इधर उधर छिपते रहने के कारण गिरफ़्तार नहीं होता था । फिर वह बांसवाड़े में जाकर राज्य में जमा-दार के ओहदे पर नौकर हो गया और लगभग दस वर्ष तक वहां नौकर रहा, परन्तु उसको किसी ने न पहचाना । वि० सं० १९३० मार्गशीर्ष (ई० सं० १८७३ नवंबर) में वह असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट तथा पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ कर्नल हचिन्सन की विद्यमानता में बांसवाड़े में पकड़ा जाकर ई० सं० १८७४ जनवरी (वि० सं० १९३० माघ) में इंदौर भेजा गया^२ ।

बोरी और रेचेरी नामक गांवों के लिए बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ राज्य का परस्पर भगड़ा चल रहा था । वह वि० सं० १९३१ (ई० सं० १८७४ बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ राज्यों के सितम्बर) में बहुत ही बढ़ गया, जिसमें प्रता-
के बीच सीमा संबंधी पगढ़ के २६ आदमी मारे गये और ५४ घायल हुए तथा
भगड़ा होना प्रतापगढ़ का माल भी लूट लिया गया । इस भगड़े
में बांसवाड़े के दो आदमी मारे गये और चार घायल हुए । अंत में पोलि-
टिकल एजेंट-द्वारा इस मामले की तहकीकात होने पर कोठारी चिमन-
लाल, कामदार (दीवान) बांसवाड़ा, पर एक हज़ार^३ रुपया जुरमाना किया
जाकर वह दस वर्ष के लिए निर्वासित कर दिया गया । पांच दूसरे अहल-
कार, जो इस भगड़े में सम्मिलित थे, पांच-पांच वर्ष के लिए कैद किये
जाकर उदयपुर के जेलखाने में भेजे गये । फिर मेजर गर्निंग दोयम कमा-

(१) वक्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० २४७ ।

(२) वही; जिल्द १, पृ० २४२ ।

(३) वीरविनोद; भाग २, प्रकरण ११ वें में कोठारी चिमनलाल से दस हज़ार रुपये जुरमाना लेना लिखा है ।

नडेन्ट मेवाड़ भील कॉर्प्स ने मौक्रे पर जाकर उचित फ़ैसला कर दोनों राज्यों की सीमा पर मीनारें खड़े करवा दिये^१।

इसी प्रकार बांसवाड़ा राज्य का प्रतापगढ़ के साथ एक दूसरा मुक़दमा अजंदा गांव के बाबत था, जिसपर बांसवाड़ा राज्य ने ई० स० १८६० (वि० सं० १६१७) से बलपूर्वक अधिकार जमा लिया था। यह मुक़दमा ई० स० १८७४-७५ (वि० सं० १६३१) में फ़ैसल हुआ, जिसमें उक्त गांव पर प्रतापगढ़ राज्य का अधिकार कराया जाकर बांसवाड़ा राज्य की तरफ़ से जो पत्र सुवृत्त में पेश हुए वे जाली माने गये^२। इस घटना से अंग्रेज़ सरकार का महारावल के प्रति विश्वास उठ गया और उसकी बड़ी बदनामी हुई। फलतः उसकी सलामी की ४ तोपें छः वर्ष तक के लिए ई० स० १८६६ (वि० सं० १६२६) में घटाई गईं, जो ई० स० १८७६ (वि० सं० १६३६) तक न बढ़ीं^३।

बांसवाड़ा राज्य के अन्तर्गत चिलकारी तथा शेरगढ़ के भील उहंड थे, जिनकी दोहद, सूथ आदि में उपद्रव करने की बहुत शिकायतें होती थीं।

गढ़ी का राव उनको सौंपने और गिरफ़्तार करने में उज़्र करता था, इसलिए वे लोग सज़ा से बच

जाते थे^४। वि० सं० १६३० (ई० स० १८७३-७४) में बांसवाड़ा तथा कुशलगढ़ के भीलों ने उपद्रव कर सैलाना और भावुआ राज्य में जाकर वारदातें कीं। इसपर भोपावर के पोलिटिकल एजेंट ने मालवा भील कॉर्प्स की कम्पनी वहां के प्रबंध के लिए नियुक्त की। उधर पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ ने बांसवाड़ा और कुशलगढ़ के भीलों को अपने इलाके से दूसरे इलाके में जाकर वारदातें करने से रोकने के लिए दबाव डाला और मेजर कनकेड को आवश्यकता

(१) वक़ाये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५२८।

(२) वही, पृ० ५५०। वीरविनोद; भाग दूसरा, प्रकरण ग्यारहवां।

(३) एबीसन; ट्रीटीज़ एंगेज़मेंट्स एंड सनदज़ (ई० स० १६३२); जि० ३, पृ० ४४६। असंकिन; गैज़ेटियर ऑव् बांसवाड़ा स्टेट; पृ० १६५।

(४) वक़ाये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५४६।

होने पर सहायता देने के लिए लिखा। तब बांसवाड़ा राज्य ने अपने इलाके के प्रबंध के लिए एक योग्य अफसर नियत किया, परंतु भीलों का उपद्रव न रुका। इस उपद्रव का कारण यह था कि उस वर्ष पैदावार थोड़ी हुई थी तथा प्रतापगढ़ और बांसवाड़ा राज्यों के सीमा के भगड़े से उत्तेजना बढ़ गई थी। ई० स० १८७४ फ़रवरी (वि० सं० १६३० फाल्गुन) में पोलिटिकल अफसर ने कुशलगढ़ पहुंचकर वहां के स्वामी को पूरी ताकीद और सख्ती की तब कुछ बन्दोबस्त हुआ^१। उसके दूसरे वर्ष ही मोरीखेड़ा व पीपलखूंट (इलाके बांसवाड़ा) के बीच फ़साद हो गया, जिसका मुख्य कारण यह हुआ कि पीपलखूंट के भीलों ने मोरीखेड़ावालों के विरुद्ध एक डकैती की मुखबिरी की, जिससे उत्तेजित होकर तीन-चार वर्ष तक मोरीखेड़ावाले वारदातें करते रहे और ई० स० १८७५ जून (वि० सं० १६३२) में मोरीखेड़ावालों ने औंकारिया रावत की प्रमुखता में पीपलखूंटवालों पर आक्रमण किया, जिसमें उनके दो आदमी मारे गये, एक की नाक कट गई और गांव लूटकर जला दिया गया। जब बांसवाड़ा के अहलकार उस भगड़े का फ़ैसला न कर सके तब असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट ने मोरीखेड़ा में जाकर दोनों स्थानों के मुखियों को बुलवाकर परस्पर राजीनामा करवा एक दूसरे के हाथ से अफ़्रीम पिलवाई तथा एक गड़ड़ा खुदवा दोनों से उसमें पत्थर डलवाकर इस आशय से मिट्टी भरवा दी कि आपसी द्वेष को सदैव के लिए ज़मीन के भीतर गाड़ दिया है^२।

मोरीखेड़ा गांव घने जंगल में है, जहां राज्य के अहलकार नहीं जाते हैं। जब असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट के अरदली ने, जो भील जाति का था, समझाया तब उक्त गांव का मुखिया देवा व औंकारिया रावत, पहाड़ से उतर आये, जो रात दिन वहीं कैम्प में रहते और दूसरे लोग इस खयाल से कि शायद फौज़ मंगवाकर उनपर हमला किया जाय, रात्रि के समय

(१) वक्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५४७।

(२) वही; पृ० ५४८।

पहाड़ों में चले जाते थे^१। ई० स० १८७५ दिसम्बर (वि० सं० १६३२ पौष) में चिलकारी गांव में चटाथला और अंग्रेजी इलाके के भील लड़ पड़े, जिसमें दोनों तरफ़ के दो-दो आदमी मारे गये।

वि० सं० १६३२ आश्विन (ई० स० १८७५ जुलाई) में बांसवाड़ा राज्य का असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट पारसी फ़ामजी भीकाजी उदयपुर लेफ़्टिनेन्ट चार्ल्स येट का के महाराणा सज्जनसिंह का गार्जियन नियत होकर असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट चला गया, तो उसके स्थान पर लेफ़्टिनेन्ट चार्ल्स येट नियत होना बांसवाड़ा में रहकर असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट का कार्य करने लगा^२।

श्रीमती महाराणी विक्टोरिया के एम्प्रेस ऑफ़ इंडिया (Empress of India) पदवी धारण करने के उपलक्ष्य में ई० स० १८७७ ता० १ जनवरी (वि० सं० १६३३ माघ वदि २) को भारत के तत्कालीन वॉइसराय और गवर्नर-जेनरल लॉर्ड लिटन ने दिल्ली में एक बड़ा दरबार किया, जिसमें भारत के सब नरेश और प्रतिष्ठित पुरुष निमंत्रित किये गये थे। महारावल लक्ष्मणसिंह उस बृहत् दरबार में सम्मिलित नहीं हुआ। इस दरबार में उपस्थित नरेशों को महाराणी की तरफ़ से राजकीय निशान (भंडे) वॉइसराय-द्वारा बांटे गये, तदनुसार बांसवाड़ा राज्य के लिए बांसवाड़े में पोलिटिकल एजेंट-द्वारा भंडा आने पर महारावल ने उसे दरबार कर ग्रहण किया।

बांसवाड़ा राज्य का अधिकांश भाग भी अन्य राज्यों की भांति जागीरदारों के अधिकार में है और खालसा की भूमि कम है। महारावल लक्ष्मणसिंह के समय बांसवाड़ा राज्य के सरदार सरदारों से समझौता होना इतने निरंकुश हो गये कि वे महारावल की आज्ञा की कोई परवाह नहीं करने लगे। उनका साहस यहां तक बढ़ गया कि

(१) वक्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० २४६।

(२) वही; पृ० २५१।

एजेंट गवर्नर जेनरल राजपूताना के बुलाने पर भी केवल कुछ सरदार उपस्थित हुए। किस सरदार को कितनी अवधि तक सेना के साथ सेवा करनी चाहिये, राज्य के दफ्तर से इसका कुछ भी सही हाल नहीं मिल सकता था। सरदार स्पष्ट रूप से यहां तक कहने लग गये थे कि रियासत केवल खिराज ले सकती है, उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकती। वे अपराधियों को सौंपने में उज्र करते थे, क्योंकि अपराधियों-द्वारा उनको धन मिलता था। उनका यह भी उज्र था कि हमसे खिराज के अतिरिक्त और भी रकम ली जाती है तथा महारावल प्रतिष्ठा के अनुसार हमारा सम्मान नहीं करता। असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट के समझाने पर महारावल ने सरदारों का उचित सम्मान करना आरंभ किया और खिराज में भी थोड़ी सी कमी कर उनको शांत करने की चेष्टा की, परंतु कुशलगढ़ और गढ़ी के सरदारों से समझौता नहीं हो सका, जिससे यह भगड़ा बढ़ता ही रहा। अंत में दि० सं० १६३६ फाल्गुन सुदि ७ (ई० सं० १८८३ ता० १५ मार्च) को नीचे लिखा समझौता हो गया—

सरदारों की शिकायतें

महारावल का निर्णय

- (१) दशहरे के त्यौहार के अवसर पर राजधानी में सरदारों के आने पर महारावल उनसे मुलाकात के लिए डेर जाने का हुक्म देगा और कि पहले वह उनके डेरों पर जायगा।
जाकर उनसे मिले।
- (२) जिनको सदैव राज्य से भोजन मिलता आया है, उनको मिलना चाहिये।
जिन सरदारों के यहां भोजन पहुंचता है, वह पहुंचता रहेगा।
- (३) जिनके यहां महारावल के रसोड़े से कांसा (भोजन का निर्भर है।
यह महारावल की इच्छा पर निर्भर है।

थाल) पहुँचता है, उनके यहां
वह पहुँचना चाहिये ।

- (४) जब हम महारावल के पास यह बात महारावल की इच्छा पर
मुजरा करने को जावें तब हमारा निर्भर है ।
मुजरा स्वीकार किया जावे ।
- (५) जब हम दरबार में मुजरा करने सरदारों के साथ दरीखाने में ऐसे
को जावें तब हमारे सेवक साथ सेवक जा सकेंगे, जो उसके योग्य
रहें । होंगे ।
- (६) ताज़ीमी सरदारों के कुंवरों को जो सदा से आते हैं, वे आया करेंगे ।
सिंहवाहिनी माता के मंदिर तक
घोड़ों पर चढ़े हुए जाने दिया
जावे ।
- (७) जब महारावल बैठ जायेंगे, तब प्राचीन रीति के अनुसार बैठेंगे ।
हम अपनी-अपनी नियत बैठक
पर बैठेंगे ।
- (८) जहां कहीं महारावल जायेंगे आवश्यकता के अनुसार आज्ञा
वहां हम उनके साथ रहेंगे, पर दी जायगी और सरदारों को साथ
कामदार आदि के साथ न जाना होगा ।
जायेंगे ।
- (९) जब किसी सरदार के यहां इस विषय पर दर्खास्त आने पर
कोई आवश्यक कार्य होगा, आवश्यक कार्य का विचार कर
तब वह महारावल के साथ नहीं आज्ञा दी जायगी ।
जायगा ।
- (१०) खांदू और सूरपुर के महा- यह महारावल की इच्छा पर
राज महारावल के साथ एक ही निर्भर है ।
थाल में भोजन करें और हुक्का
पियें ।

- (११) तलवारबन्दी प्राचीन रीति जागीर के दर्जे और हैसियत के अनुसार ली जावे और जिन अनुसार तलवारबन्दी पुरानी रीति के अनुसार ली जायगी। सरदारों से वह नहीं ली जाती, उनसे न ली जावे।
- (१२) पोल के बारे में कोई चिट्ठी पोल के संबंध में कोई चिट्ठी जारी न की जाय। जारी न की जायगी।
- (१३) जागीरदार नये पट्टे न लेंगे। कोई नया पट्टा न दिया जायगा।
- (१४) जब तक तलवारबन्दी की रस्म न होगी, तब तक कोई जागीर-दार मुजरा करने को न जायगा। ऐसा न कराया जायगा।
- (१५) गोद के मामले में राज्य की किसी जागीर में जब गोद लेने तरफ़ से कोई दस्तअंदाज़ी की आवश्यकता होगी, तब जागीरदार नहीं होनी चाहिये। भाई-बेटे की स्त्रियां तथा संबंधी जिसे चाहें उसे गोद ले सकेंगे और पगड़ी बंधाई और संबंधी उसे तय करेंगे। उसे गोद ले सकेंगे और पगड़ी बंधाई की रस्म पूरी कर दरबार को इस कार्रवाई की सूचना करेंगे।
- (१६) हमारी अर्ज़ियों का जवाब जबाब दिये जायेंगे। मिले।
- (१७) सीमा संबंधी सब झगड़ों का छः मास के भीतर न्यायपूर्वक उचित निर्णय किया जाय। उचित फैसला किया जायगा।
- (१८) हम मेले और गणगौर के त्यौ-सब जागीरदारों को मेले और गण-हारों के अवसर पर उपस्थित गौर के त्यौहारों पर आना पड़ेगा। केवल गद्दी और खांदू के सरदार गणगौर के अवसर पर न आवें और अपने भले आदमियों को सेवारों के साथ भेज दें, किन्तु आवश्यकता के

समय आजा पाने पर उन्हें भी आना पड़ेगा ।

(१६) खांदू का नाज जो राज्य की तय हो जायगा ।
तरफ़ से रोक लिया गया है,
उसका मामला राज्य से तय
हो जाना चाहिये ।

(२०) हमको जो कुछ कहना होगा, पेसा कर सकते हैं ।
यह हम बादमें निवेदन करेंगे ।

सब जागीरदारों को सच्चे भाव से महारावल की आज्ञा का पालन करना चाहिये और महारावल ऊपर लिखी हुई बातों पर अमल करेंगे। मिती फाल्गुन सुदि ७ बृहस्पतिवार वि० सं० १६३६ (ता० १५ मार्च ई० सं० १८८३^१)।

अनुलेख

वि० सं० १६३५ में खिराज में जो साढ़े पांच आने की वृद्धि की गई थी, उसमें से चार आने माफ़ कर दिये गये हैं । जागीरदारों ने दरीखाने का जल्लेख किया है, उसका आशय यह है कि जहां दरबार हो । मिती फाल्गुन सुदि ७ बृहस्पतिवार वि० सं० १६३६ (ता० १५ मार्च ई० सं० १८८३) ।

दस्तखत राय गंभीरसिंह, गढ़ी

छोकरू फ़तहसिंह, खांदू

प्रतापसिंह, देवदान

जोरावरसिंह, कुंडला

गुमानसिंह, भुनिया

दूलहसिंह, गांवड़ा

बलधंतसिंह, मेतबाला

बस्तावरसिंह, तलवाड़ा

लालसिंह, आमजा

(१) एन्ड्रिसन; ट्रीटीज़ एंगेजमेन्ट्स एण्ड सनड्राज़ (ई० सं० १६३२); जि० ३; अपेंडिक्स संख्या ३, पृ० ११-१३ ।

माधोसिंह, सुलकिया
गुलाबसिंह, कुवानिया

इसपर सरदारों ने महारावल की सेवा में नीचे लिखा राजीनामा पेश किया—

हम लोगों ने महारावल की सेवा में इक्कीस उज्र पेश किये, उनपर आझाप हो गई हैं, जिनकी नकल चिट्ठे के साथ हमको दी गई है। उसमें जो बातें लिखी हुई हैं, वे सर्वथा हम लोगों को स्वीकार हैं। हमें अब उसके सम्बन्ध में और कोई शिकायत नहीं है और हम फ़ेदरिस्त की तफ़सील के अनुसार चलेंगे। इस मामले में बतौर राजीनामे के हम लोग यह अर्जी पेश करते हैं। मिति फाल्गुन सुदि ७ वि० सं० १९३६^१ (ता० १५ मार्च ई० सं० १८८३)।

(हस्ताक्षर) राव गंभीरसिंह

छोरू फ़तहसिंह

बलवंतसिंह

बस्तावरसिंह

गुमानसिंह

दूलहसिंह

लालसिंह

अमरसिंह

प्रतापसिंह

ज़ोरावरसिंह

उपर्युक्त राजीनामा पेश हो जाने पर सरदारों का बख़ेड़ा मिट गया, परन्तु शासन नीति में कुछ भी परिवर्तन न होने के कारण अव्यवस्था बनी रहने से पोलिटिकल अफ़सरों और महारावल के बीच मनमुटाव बना ही रहा।

(१) एचिसन; ट्रीटीज, एंगेजमेन्ट्स एंड सनद्ज़ (ई० सं० १९३२), जि० ३, अपोन्डिक्स संख्या ३, पृ० ११-१३ ।

बांसवाड़ा राज्य से डूंगरपुर, उदयपुर, प्रतापगढ़, रतलाम, सैलाना, भावुआ, भालोद और स्यूथ इलाकों की सीमा मिलती है, जिससे प्रायः सीमा संबंधी विवाद बना ही रहता और उधर राज्य के खालसे और जागीरदारों के गांवों की सीमा के भगड़े भी हुआ करते थे। उनका निबटारा न होने से बांसवाड़ा राज्य को प्रतिवर्ष विशेष रूप से हानि उठानी पड़ती थी। अतएव असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंट ने बांसवाड़ा में नियत होते ही राज्य में सुख शांति का विस्तार करने के लिए इन सरहद्दी भगड़ों को मिटाने का कार्य आरंभ किया। कप्तान बेअर्ड ने ई० स० १८७१-७२ (वि० सं० १६२८) में चार मुकदमे बांसवाड़ा और रतलाम की सीमा के तय किये तथा ई० स० १८७२-७३ (वि० सं० १६२९) में जानपाल्या और जानपुरा का मुकदमा जो सरवन (इलाके रतलाम) तथा बांसवाड़ा राज्य के बीच चल रहा था, फ़ैसल किया। सात मुकदमे कुशलगढ़ तथा रतलाम राज्य के और एक मुकदमा कुशलगढ़ तथा सैलाना का एवं अन्य बांसवाड़ा तथा प्रतापगढ़ के बीच के मुकदमे भी फ़ैसल हो गये^१।

इसी प्रकार ई० स० १८७५ (वि० सं० १६३२) तक बांसवाड़ा तथा कुशलगढ़ के बीच के सीमा संबंधी डेढ़ सौ मुकदमे फ़ैसल हुए^२। चटाथला एवं मेड़ीखेड़ा (परगने चिलकारी) तथा ज़ालिमपुरा (पट्टे कुशलगढ़) के बीच बहुत समय से भगड़ा चल रहा था। उसमें कई व्यक्ति भी हताहत हुए थे, अतः दोनों जगहों के सीमा संबंधी वृत्त जाननेवाले व्यक्तियों को एकत्रित कर भविष्य में लड़ाई न हो, इस दृष्टि से तलवार की शपथ दिलवाकर फ़ैसला करा दिया गया^३। इन सब का परिणाम यह हुआ कि वहां के निवासी शान्तिपूर्वक निवास कर कृषि कार्य को बढ़ाने लगे।

(१) मुंशी ज्वालासहाय; वक्राये राजपूताना; जिल्द १, पृ० ५५० ।

(२) वही; पृ० ५३० ।

(३) वही; पृ० ५३० ।

महारावल लक्ष्मणसिंह के समय का पिल्लुला वृत्तांत अन्तरङ्ग भगड़ों एवं गृहकलह आदि घटनाओं से भरा हुआ है, जो महत्वपूर्ण न होने से उल्लेखनीय नहीं है। वह पुरानी चाल का कट्टर नरेश था, इसलिए उसके समय में बांसवाड़ा राज्य समयोचित उन्नति से वंचित रहा। शासन-कार्य सुव्यवस्थित रूप से न चला, जिससे अव्यवस्था बनी ही रही। अंग्रेज़ सरकार का खिराज भी समय पर नहीं दिया जाता था और इधर संवत् १६५६ (वि० सं० १८६६-१९००) का भीषण अकाल पड़ा, जिससे राज्य ऋण-ग्रस्त हो गया। जब अंग्रेज़-सरकार ने राज्य को ऋण-ग्रस्त तथा चढ़ा हुआ खिराज चुकाने में असमर्थ एवं दुर्भिक्ष-पीड़ित देखा तब शासन-संबंधी अधिकार महारावल से लेकर असिस्टेन्ट रेज़िडेन्ट मेवाड़ के सुपुर्द कर दिया। चढ़े हुए खिराज, दुर्भिक्ष का खर्च एवं अन्य कर्जदारों को चुकाने के लिए ढाई लाख रुपये, पच्चीस हजार रुपये वार्षिक जमा कराने की शर्त पर, अंग्रेज़-सरकार से कर्ज लेकर उचित रीति से प्रबंध करना आरंभ हुआ, जिसका वर्णन आगे किया जायगा।

महारावल लक्ष्मणसिंह को शिल्प से प्रेम होने के कारण महल आदि बनवाने का अनुराग था। उसने अपने राज्य-काल में बांसवाड़े के बाईतालाब में जलविलास महल, राजधानी के पुराने महलों में शहर-विलास, अजबविलास, वसंतमहल, लक्ष्मणमहल, रणजीतविलास, सुखऋतुविलास, अमरसुखविलास, चंपामहल, नज़रमहल, शीशमहल, कुशलबाग के महल आदि बनवाये। उसने बांसवाड़ा के प्राचीन महलों का जीर्णोद्धार करवाया, कई नये कुंए और बावलियां बनवाई तथा शहरकोट की मरम्मत करवाई। शिव का परम भक्त होने के कारण उसने कुशलबाग में राजराजेश्वर नामक शिवमंदिर बनवाया और वहीं अगड़कोट पर उसने विशाल पाषाण स्तम्भ पर ऊंची

(१) एचीसन; टीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़ (ई० सं० १६३२); जि० ३, पृ० ४४७। अर्सकिन; बांसवाड़ा राज्य का गैज़ेटियर; पृ० ४४७।

अंगुली किये हुए बैठी हुई तपस्वी पुरुष की मूर्ति बनवाई, जिसका आशय लोग यह बतलाते हैं कि मनुष्य के प्रत्येक अच्छे और बुरे कार्यों को अन्तरिक्ष में एक ईश्वर ही देखता है। उसने बाई-तालाब की पाल का जीर्णोद्धार करवाया और अपनी जन्मभूमि के गांव वनाले में अपने पिता की स्मृति में शिवालय बनवाकर उसका नाम बल्लेश्वर तथा बावली का नाम बल्ल-बाव रक्खा। उसने कई नये शिव-मंदिर बनवाये और पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार करवाया।

महारावल लक्ष्मणसिंह ने वि० सं० १६३४ (ई० सं० १८७७) के दुर्भिक्ष के समय निर्धन व्यक्तियों के लिए अपने राज्य में अन्नक्षेत्र खोलकर लुधाना लोगों के दुःख को निवारण किया।

महारावल के अन्य कार्य

व्यापार की वृद्धि के लिए बांसवाड़ा में राजराजेश्वर शिव का मेला भरने की व्यवस्था की, जिसमें दूर-दूर से व्यापारी आने लगे। गांव दाणीपीपले में हाट का भरना उसके समय में आरम्भ हुआ और वहां के घाटे का मार्ग ठीक बनवाया गया। बांसवाड़ा से डूंगरपुर की सीमा तक गाड़ियों के चलने का रास्ता भी उसके समय में ही ठीक हुआ। उसने अपनी प्रजा की रक्षार्थ कई स्थानों पर थाने स्थापित कर लूट-खसोट बन्द की एवं तलवाड़ा के घाटे में, जहां भयानक जंगल है, भविष्य के लिए अच्छा प्रबन्ध किया। वह धार्मिक प्रवृत्ति का नरेश था और यज्ञादिक पर उसे विश्वास था इसलिए उसने अपने राज्य-समय में कई यज्ञ करवाये। उसने अपने राज्य में नया तोल और नाप जारी किया तथा सांकेतिक लिपि बनवाई, जो राजराजेश्वरी लिपि कहलाती थी। इस लिपि के कुछ अक्षर उसके सोने, चांदी और तांबे के सिक्कों एवं राजराजेश्वर के मंदिर में शिवलिङ्ग की जलहरी पर खुदे हुए देखने में आये हैं। राजपूतों में कुरीति निवारणार्थ त्याग आदि के प्रबन्ध के लिए राजपूताने के तत्कालीन एजेंट गवर्नर जेनरल कर्नल वाल्टर के नाम पर 'वाल्टरकृत राजपुत्रहितकारिणी सभा' की स्थापना होकर नियम बनाये गये, जो उसके राज्य-समय में बांसवाड़ा राज्य में भी जारी हुए, परन्तु उनसे जैसा चाहिये वैसा लाभ नहीं

हुआ। मरहटों आदि के उत्पात से राज्य की जो दुर्दशा हुई थी, वह उसके समय में किसी क्रूर मिट गई। बांसवाड़ा राज्य में कलदार सिके का चलन और तार विभाग का प्रारम्भ उसके समय में ही हुआ।

वि० सं० १६६० (ई० सं० १६०३) में महारावल के छोटे कुंवर सूर्यसिंह का देहांत हो गया, जिसका उसको बड़ा रंज हुआ और वह भी

अपने जीवन से निराश हो गया। वि० सं० १६६२
महारावल का परलोकवास (ई० सं० १६०५) की वसन्त ऋतु में महारावल

अपने राज्य में भ्रमणार्थ गया हुआ था। वहीं भीमसोर के सरदार के यहाँ वह बीमार होकर दो दिवस तक पीड़ित रहने के उपरान्त वि० सं० १६६२ (श्रमांत) चैत्र (पूर्णिमांत वैशाख) वदि ६ (ई० सं० १६०५ ता० २८ अप्रैल) को ६२ वर्ष राज्य कर परलोक सिधारा। उसका शव वहाँ से पीनस (मियाने) में रखकर बांसवाड़े लाया गया जहाँ राज-रीति के अनु-सार उसका दाह संस्कार हुआ। उसने चौदह विवाह किये थे, जिनसे कई संतानें हुईं। उनमें से कुंवर शंभुसिंह, सज्जनसिंह और सवाईसिंह उसकी मृत्यु के समय विद्यमान थे। उसका शरीर लंबा और पतला एवं मुँह गोल था।

महारावल लक्ष्मणसिंह का जीवन उच्च आदर्शों से परिपूर्ण न था। विवाहित राणियों के अतिरिक्त ग्यारह परदायतें (उपपत्नियाँ) और छः प्रीति-पात्र दासियाँ थीं, जिनसे लगभग ४५ संतानें हुईं।

महारावल का व्यक्तित्व

वह शैव धर्म का अनुयायी होने पर भी अन्य धर्मों से प्रेम रखता था। राजपूतों के जन्मतिद्ध अधिकार अश्व-शिक्षा और शस्त्र-विद्या का उसको पूरा ज्ञान था। राज्य की स्थिति के अनुसार वह उदार राजा था। उसका स्वभाव सरल और वृथा आडंबर से शून्य था। वह काव्य तथा सङ्गीत का प्रेमी और धुन का पक्का था। कुछ सरदारों और समीपवर्ती राज्यों के साथ उसका व्यवहार अच्छा न रहा, जिससे राज्य को बड़ी भारी क्षति हुई और उसे अपमान सहना पड़ा। अपने राज्य-शासन के दीर्घ समय में ओंकारेश्वर की यात्रा के अतिरिक्त वह कहीं

बाहर नहीं गया और न उसने आधुनिक रेल, तार आदि सामयिक वस्तुओं से लाभ उठाया । उसका कुंवर शंभुसिंह से मेल नहीं रहा, जिससे उसने उसको अपने राज्य से चले जाने की आज्ञा दी । तब वह (कुंवर) कुछ काल तक उदयपुर और डूंगरपुर राज्यों में जाकर रहा । महारावल बोल-चाल में बड़ा निर्भीक था और अपने विचारों को प्रकट करने में कुछ भी संकोच न करता था । मुंह पर वह कभी उस्तरा नहीं फिरवाता ब कभी मादा जानवर (घोड़ी) को सवारी के काम में लाता था ।

शंभुसिंह

महारावल शंभुसिंह का जन्म वि० सं० १६२५ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि १३ (ई० स० १८६८ ता० १४ अक्टोबर) को हुआ था । अपने पिता महारावल लक्ष्मणसिंह के देहांत के समय वह डूंगरपुर में था । जब उसके पास पिता की मृत्यु का समाचार पहुंचा तब वह बांसवाड़े गया और (आषाढादि) वि० सं० १६६१ (चैत्रादि १६६२) वैशाख सुदि ५ (ई० स० १६०५ ता० ६ मई) को उसकी गद्दीनशीनी हुई ।

शासन-कार्य चलाने के लिए महारावल लक्ष्मणसिंह के समय से ही असिस्टेन्ट रेजिडेंट (मेवाड़) के निरीक्षण में एक कौंसिल बन चुकी थी और उसमें पांच सदस्य (असिस्टेन्ट रेजिडेंट कौंसिल-द्वारा शासन-प्रबंध मेवाड़, दीवान, दो सरदार और एक नगर निवासी-साहूकार) थे । इस कौंसिल ने राज्य-कार्य अपने हाथ में लेते ही जो-जो खराबियां थीं, उन्हें दूर करने का प्रयत्न किया और राज्य के प्रत्येक विभाग में आवश्यक परिवर्तन कर कार्य सुव्यवस्थित रूप से चलाने की व्यवस्था की ।

पुलिस-विभाग का नवीन रीति से संगठन होकर प्रजा की रक्षा के लिए जगह-जगह थाने और चौकियां स्थापित की गईं । न्याय विभाग की

अंधाधुन्ध कार्यवाही की रोक का प्रबन्ध किया गया और समुचित तहकीकात होने पर निर्णय करने की प्रथा जारी हुई। कानूनों का प्रचार हुआ, जिससे मनमानी मिट गई। राज्य के आय-व्यय का हिसाब व्यवस्थित रूप से रखे जाने में जो सुस्ती और बेपरवाही होती थी वह मिटाई गई और प्रतिवर्ष आयव्यय का रजिस्ट्र बनने लगा तथा उसी के अनुसार व्यय होने लगा। सायर के महसूल की दर एक सी नियत होकर उसके अनुसार वसूल की जाने लगी। अन्न का हिस्सा लेने की प्रथा से राज्य और कृषकों को शिकायत रहती थी, अतएव उसे बन्द कर ज़मीन की पैमाइश के द्वारा उपज के अनुसार मियादी ठेके बांध दिये गये। पहले पुलिस और माल का काम एक ही अहलकार-द्वारा होता था, वह भी पृथक् किया गया। जंगल विभाग का प्रबन्ध किया गया। स्वास्थ्य-रक्षा के लिए राजधानी में म्युनिसिपल कमिटी की योजना हुई।

उस समय तक राज्य में सर्वत्र सालिमशाही सिक्के का चलन था, जिससे प्रजा को कष्ट रहता था। साथ ही उन दिनों कलदार रुपये का भाव भी बहुत अधिक बढ़ गया, जिससे प्रजा को कपड़ा आदि बाहर से आने वाला सामान महंगा मिलने लगा। तब ई० स० १९०४ (वि० सं० १९६१) में दो सौ सालिमशाही रुपये में सौ रुपये कलदार मिलने का भाव तय करके, छः महीने के भीतर सालिमशाही रुपयों को जमा कराने की मियाद स्थिर की गई और कलदार रुपये का चलन जारी कर दिया गया^१। इसपर अंग्रेज़ सरकार ने भी बांसवाड़ा राज्य के खिराज के पैंतीस हजार सालिमशाही के स्थान में सत्रह हजार पांचसौ रुपये कलदार वार्षिक रखे^२। दीवानी और फ़ौजदारी अदालतों की अपील कौंसिल में सुनी जाने लगीं। राजधानी में वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल और देहातों में चार पाठशालाएं खोली गईं। इनके अतिरिक्त राजधानी में हेमिल्टन पुस्तकालय भी स्थापित किया गया।

(१) अर्सेकिन, गैज़ेटियर ऑफ़ बांसवाड़ा; पृ० १८१।

(२) वही; पृ० १९४।

वि० सं० १९६२ मार्गशीर्ष सुदि १३ (ई० सं० १९०४ ता० १० दिसम्बर) को महाराजकुमार पृथ्वीसिंह का विवाह सिरौही के भूतपूर्व महाराज केसरीसिंह की राजकुमारी आनन्दकुमारी के साथ हुआ^१ ।

उसी वर्ष (अमांत) पौष (पूर्णिमांत माघ) वदि १ (ई० सं० १९०६ ता० ११ जनवरी) को अंग्रेज-सरकार की तरफ से महारावल शंभुसिंह को राज्याधिकार मिला^२, परंतु उसमें राज्य प्रबन्ध करने की योग्यता न होने के कारण ई० सं० १९०८ ता० ६ अक्टोबर (वि० सं० १९६४ आश्विन सुदि १५) को उसके राज्य-कार्य से इस्तीफा^३ देने पर पुनः शासन-कार्य पोलिटिकल एजेंट की अध्यक्षता में ही होने लगा ।

महारावल शंभुसिंह के राज्य-काल में नामली से बांसवाड़ा और बांसवाड़ा से डूंगरपुर तक तार की लाइनें खुल गईं । जेल का पुस्तक प्रबंध होकर उसके लिए नवीन इमारत बनवाई गई । शिक्षाविभाग में वृद्धि होकर देहातों में पाठशालाएं बढ़ाई गईं । राजपूत जाति के हित के लिए 'वाल्टर-कृत राजपुत्र हितकारिणी सभा' की एक शाखा बांसवाड़ा में स्थापित हुई, जिसका सभापति महारावल बनाया गया । मादक द्रव्यों के प्रचार में जो खराबियां थीं, उनको मिटाने के लिए आबकारी विभाग खोला गया । इमारत का महकमा (Public Works Department) अलग स्थापित हुआ । बांसवाड़ा के वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल में अंग्रेजी शिक्षा देने की व्यवस्था हुई । लोगों को उधार रुपया मिलने के लिए स्टेट बैंक खोला गया तथा ई० सं० १९०७ (वि० सं० १९६४) में पोलिटिकल एजेंट की तनख्वाह वगैरह के जो पांच हजार रुपये वार्षिक अंग्रेज सरकार को दिये

(१) मेरा; सिरौही राज्य का इतिहास; पृ० ३६६ ।

(२) असकिन; गैज़ेटियर ऑफ् बांसवाड़ा; पृ० १६६ ।

(३) एचिसन; टीटीज़ पंगेजुमेंट्स एण्ड सनदज़; पृ० ४४० ।

राजपूताने का इतिहास—



श्रीमान् रायरायण महाराजाधिराज महारावल सर पृथ्वीसिंहजी
बहादुर, के. सी आई ई.

जाते थे, वे बिलकुल बंद हो गये। इन सब कार्यों का अधिकांश श्रेय उपर्युक्त अंग्रेज़ अफ़सरों को ही है, जिनकी तत्वावधानता में राज्य-कार्य होता था।

वि० सं० १९७० (अमांत) मार्गशीर्ष (पूर्णिमांत पौष) वदि ३० (ई० सं० १९१३ ता० २७ दिसंबर) को महारावल शंभुसिंह का देहांत हो गया। उसके आठ राणियां थीं, जिनसे ६ पुत्र और दो पुत्रियां हुईं। पुत्रों में से कुंवर प्रतापसिंह तो बाल्यावस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो गया और महाराजकुमार पृथ्वीसिंह, गुलाबसिंह, लालसिंह, छत्रसिंह, किशोरसिंह, राजसिंह तथा शंकरसिंह उसकी मृत्यु के समय विद्यमान थे।

महारावल का देहांत
और संतति

महारावल पृथ्वीसिंहजी

इनका जन्म वि० सं० १९४५ आषाढ़ सुदि ७ (ई० सं० १८८८ ता० १५ जुलाई) को हुआ। प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर ये उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए मेयो कॉलेज (अजमेर) में भेजे गये।

जन्म तथा शिक्षा

वहां इन्होंने नियमानुसार विद्याध्ययन कर डिप्लोमा परीक्षा पास की। अनन्तर मेवाड़ में बेदला ठिकाने के राव नाहरसिंह के चाचा रावबहादुर राजसिंह के पास रहकर इन्होंने कुछ दिनों तक वहां की कार्यशैली का अवलोकन किया। वि० सं० १९६५ (ई० सं० १९०८) में महारावल शंभुसिंह शासन-कार्य से पृथक् हुआ और दक्षिणी राजपूताना के पोलिटिकल एजेंट ने बांसवाड़ा राज्य का कार्य संभाला, उस समय ये वहां से बुलवाये गये और इन्होंने राज्य के प्रत्येक कार्य में योग देना आरंभ किया, जिससे राज्यसंबंधी कार्यों में इन्हें अनुभव हो गया तथा ई० सं० १९११ के फ़रवरी मास (वि० सं० १९६७) से ये दक्षिणी राजपूताना के पोलिटिकल एजेंट के निरीक्षण में राज्यकार्य करने लगे।

(१) वि० सं० १९८३ आश्विन सुदि १० (ई० सं० १९२६ ता० १९ अक्टोबर) शनिवार को राजसिंह की घोड़े पर से गिर जाने के कारण मृत्यु हुई।

वि० सं० १६६६ कार्तिक शुक्ला १४ (ई० सं० १६०६ ता० २६ नवंबर) को इनकी महाराणी देवड़ी के उदर से महाराजकुमार चंद्रवीरसिंह का जन्म हुआ ।

श्रीमान् सम्राट् पञ्चम जार्ज (स्वर्गीय) ने सम्राज्ञी सहित लन्दन से भारत में पधारकर वि० सं० १६६८ पौष (ई० सं० १६११ दिसंबर) में अपने राज्याभिषेक का दिल्ली में बृहत् दरबार कर दिल्ली दरबार में सम्मिलित होना उक्त नगर को अपनी राजधानी बनाया । उस अवसर पर भारत के राजा, महाराजा तथा अन्य प्रतिष्ठित कर्मचारी एवं धनी मानी व्यक्तियों को दिल्ली में उपस्थित होने का भारत सरकार की ओर से निमंत्रण दिया गया । तदनुसार बांसवाड़ा राज्य में भी निमंत्रण आने पर ये अपने सरदारों और मंत्री आदि के साथ उक्त दरबार में सम्मिलित होने के लिए दिल्ली गये ।

मानगढ़ के पहाड़ पर, जो बांसवाड़ा व सूथ राज्य की सीमा पर है, गोविंदगिरि नामक एक साधु ने धूनी जमाकर भीलों को उपदेश देना प्रारंभ किया । उसका उद्देश्य पर्वतीय प्रदेश में भील-राज्य स्थापित करना था, इसलिए वह राजसूता के विरुद्ध भीलों को बहकाने लगा । फलतः बांसवाड़ा, डूंगरपुर आदि निकटवर्ती राज्यों के कितने एक भील उसके चंगुल में फँस गये और उन्होंने राजाज्ञा की उपेक्षा करना आरंभ किया । यह देखकर बांसवाड़ा राज्य ने वि० सं० १६७० (ई० सं० १६१३) में इस बारे में अंग्रेज सरकार से लिखा पढ़ी कर पड़ोसी राज्यों और भील कॉर्प्स आदि की सहायता मांगी । इन्होंने (जो उस समय महाराजकुमार थे) अपने यहां के सरदारों आदि की जमीयत को लेकर भीलों पर चढ़ाई कर दी और उस साधु तथा उसकी मंडली को जा दबाया । जब वे लोग हथियार डालकर राज्य की सुपुर्दगी में आने को तैयार न हुए तो उनपर गोलियां चलाई गईं, जिससे कई भील हताहत हुए और गोविंदगिरि जीवित पकड़ लिया गया ।

वि० सं० १६७० (ई० सं० १६१३) में महारावल शंभुसिंह का देहांत हो गया, तब ये पौष सुदि ११ (ई० सं० १६१४ ता० ८ जनवरी) को नियमानुसार सिंहासनारूढ़ हुए और उसी वर्ष ता० १८ मार्च=अर्मांत फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि ७ को भारत-सरकार की तरफ से राजपूताना के एजेंट द्वि दि गवर्नर जनरल सर इलियट कॉलियन ने बांस्वाड़े जाकर गद्दीनशीनी का दरबार किया और महारावल को भारत के वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज का खरीता सुनाकर राजकीय अधिकार सौंप दिये । उस अवसर पर प्रतापगढ़ (देवलिया) का महाराजकुमार मानसिंह तथा गद्दी आदि के सरदार भी उपस्थित थे।

वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१४) के योरोपीय महासमर में बांस्वाड़ा राज्य की तरफ से महारावल ने अपनी तथा अपनी प्रजा की ओर से अंग्रेज सरकार के प्रति राज-भक्ति प्रकट करते हुए स्वयं युद्धक्षेत्र में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट की, परन्तु भारत के तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड हार्डिंज ने इनके युद्ध में सम्मिलित होने की आवश्यकता न समझ धन्यवाद-पूर्वक उसे अस्वीकार किया । तब धन और जन से सहायता देकर राज्य ने अपना कर्त्तव्य पालन किया । महारावल ने ब्रिटिश सेना में भरती होनेवाले 'रिक्रूटों' को पंद्रह बीघा भूमि देने, दरबार के उन सेवकों को जो युद्ध में जाना चाहें पेंशन देने और नये रिक्रूट भरती करनेवाले व्यक्ति को प्रति रिक्रूट पांच रुपया इनाम तथा उसकी अच्छी सेवा का प्रमाणपत्र देने की घोषणा की । राज्य ने विविध फंडों में सब मिलाकर लगभग पचास हजार रुपये दिये और प्रतिमास एक हजार रुपये युद्ध-कार्य में देने का वचन दिया । इसके अतिरिक्त अट्ठावन हजार आठसौ तीस रुपये युद्ध ऋण में भी दिये ।

इनका अंग्रेज-अफ़सरों से बड़ा अच्छा व्यवहार है और भारत सरकार भी इनसे प्रसन्न है । इनके समय में कुछ वर्षों से दक्षिणी राजपूताने के

दक्षिणी राजपूताने के पोलिटिकल एजेंट का दफ्तर बांसवाड़ा से हटना

पोलिटिकल एजेंट का दफ्तर बांसवाड़ा से उठ गया है, क्योंकि महारावल और उनके सरदारों में मेल है तथा भीलों के उपद्रवों में कमी होने के कारण शासन-कार्य व्यवस्थित रूप से हो रहा है। इस समय दक्षिणी राजपूताना के पोलिटिकल एजेंट का कार्य उदयपुरस्थ मेवाड़ का रेज़िडेंट ही करता है। बांसवाड़े के जिस भवन में पोलिटिकल एजेंट का दफ्तर और निवास था, उसे राज्य ने खरीद लिया है। वह मित्रनिवास कहलाता है और उसमें राज्य के बड़े-बड़े मेहमान ठहराये जाते हैं।

भारत के वाइसराय लॉर्ड हार्डिज, चेम्सफोर्ड, रीडिंग, इर्विन और विलिंग्डन तथा भूतपूर्व सम्राट् श्रीमान् एडवर्ड अष्टम से युवराज की अवस्था में उनकी भारत यात्रा के अवसर पर, इनको मिलने के अवसर प्राप्त हुए हैं। इनके उत्तम गुणों से प्रभावित होकर अंग्रेज़-सरकार ने ई० स० १९३३ ता० १ जनवरी (वि० सं० १९८६) को इन्हें के० सी० आई० ई० का खिताब देकर सम्मानित किया है।

इनको शासन-कार्य से अनुराग है और ये अपने राज्य की उन्नति में प्रयत्नशील रहते हैं। बांसवाड़ा राज्य में इस समय जो कुछ उन्नति दिखाई पड़ रही है, वह इनके ही सुशासन का फल है। इन्होंने न्याय-विभाग में जुडिशियल कौंसिल नियत कर रखी है। बांसवाड़ा राज्य में दीवानी और फौजदारी अदालतें प्रांतीय न्यायालयों से आये हुए मुकदमों को सुनती हैं, परन्तु दीवानी और फौजदारी अदालतों के फ़ैसलों की अपीलें जुडिशियल कौंसिल द्वारा सुनी जाती हैं। कौंसिल से यदि न्याय न मिले तो स्वयं महारावल के इजलास में उज्रदारी सुनी जाती है। इसके अतिरिक्त शासन-कार्य को भली भांति चलाने के लिए लेजिस्लेटिव कौंसिल (व्यवस्थापक सभा) भी बनी है। वि० सं० १९८७ (ई० स० १९३०) में महारावल ने उसके कार्य में परिवर्तन कर उक्त कौंसिल का कार्य बाहरी (फ़ारिन) और भीतरी (होम)

महारावल को खिताब मिलना

महारावल की शासन कार्यों में अभिरुचि

दो विभागों में बांट दिया है तथा युवराज चंद्रवीरसिंह को कौंसिल का सीनियर मेम्बर नियत किया है। रेवेन्यू, हिसाब और पुलिस के कार्यों में बहुत कुछ सुधार हो गया है। इन्होंने अपने नाम पर राजकीय व्यय से एक छापाखाना स्थापित किया है। प्रजा की सुविधा के लिए 'बांसवाड़ा स्टेट गज़ट' का जन्म हुआ था और उसमें राजकीय आज्ञायें प्रकाशित की जाती थीं; परंतु अब वह बन्द हो गया है। बांसवाड़ा राज्य में म्युनिसिपैलिटी के अतिरिक्त इन्होंने पंचायत प्रथा को भी जन्म दिया है, जिससे वहां की प्रजा को बहुत कुछ अधिकार प्राप्त हो गये हैं।

जिसप्रकार महारावल को राजकार्य से प्रेम है, उसी प्रकार इनकी लोकोपयोगी कार्यों की तरफ भी पूर्ण रुचि है। इनके राज्य-समय में शिक्षा विभाग में भी उन्नति हुई है और वह एक पृथक् विभाग बनाया जाकर शिक्षा प्रचार के हेतु एक डाइरेक्टर नियत कर दिया गया है। उसकी अधीनता में दो इन्स्पेक्टर नियत हैं, जो नियमित रूप से दौरा कर शिक्षणालयों का निरीक्षण करते रहते हैं। बांसवाड़ा के दरबार स्कूल में संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और अंग्रेज़ी की नवीं क्लास तक शिक्षा दी जाती है। देहातों में भी पाठशालाओं की वृद्धि हुई है। इस समय बालिकाओं की शिक्षा की भी राजधानी में व्यवस्था की गई है। राजपूतों में शिक्षा का अनुराग उत्पन्न कराने के लिए बांसवाड़ा में राजपूत बोर्डिंग हाउस स्थापित है। निर्धन और अपाहिज लोगों के पोषणार्थ बांसवाड़े में एक अनाथालय भी खोल दिया गया है और इस कार्य को चलाने के लिए महारावल ने एक फंड खोल दिया है। आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति पर लोगों का विश्वास होने से बांसवाड़ा में आयुर्वेद-औषधालय की भी स्थापना हुई है। पाश्चात्य विधि से चिकित्सा के लिए जो अस्पताल पहले था, उसकी उन्नति कर नवीन भवन बनवा दिया है और कर्मचारियों में वृद्धि कर आवश्यक औज़ार आदि वस्तुएं मंगवा दी गई हैं, जिससे बहुत से रोगों का इलाज यहीं पर होने लग गया है। स्त्रियों की चिकित्सा के लिए योग्य दाइयां और नर्स रखी गई हैं। बीमारों के रहने के लिए

महारावल के लोकोप-
योगी कार्य

पृथक्-पृथक् चार्ड बना दिये हैं, जिनमें रोगी निवास कर अपनी चिकित्सा कराते हैं और निर्धन रोगी को खुराक राज्य से मिलने की व्यवस्था है। देहातों में भी शंफ्राखाने खोले जा रहे हैं, जिससे भविष्य में वहाँ की प्रजा को दवा मिलने की अनुकूलता हो जायगी।

वि० सं० १६८५ (ई० सं० १६२८) में इन्होंने अपनी वर्षगांठ के अवसर पर प्रजा के ज़िम्मे के बाक्ली के लगान के रुपयों में से एक लाख रुपये छोड़ दिये। दरबार स्कूल के लिए इन्होंने नवीन भवन बनवाकर उसका नाम 'किंग जार्ज फ़िफ़थ स्कूल' रक्खा है। जिस स्थान में पहले दरबार स्कूल था, उसको यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशाला का रूप देकर परलोकगत सम्राट् एडवर्ड सप्तम के नाम पर उसका नाम 'एडवर्ड धर्मशाला' रक्खा है। स्वास्थ्य सुधार के लिए बांसवाड़ा में म्युनिसिपल कमेटी स्थापित है, जिसकी मीटिंग के लिए कोई निजी भवन न होने से राजपूताना के भूतपूर्व एजेंट टू दि गवर्नर जेनरल सर इलियट काल्विन के नाम पर एक भवन बनवाकर उसका नाम 'कॉल्विन म्युनिसिपल हॉल' रक्खा है। सर कर्ज़न वाइली की स्मृति में बांसवाड़ा में सिद्धनाथ महादेव के समीप कागदी नदी पर 'वाइली ब्रिज' बनवा दिया है, जिससे आने-जानेवालों को बड़ा सुभीता हो गया है और बांसवाड़ा से झालोद तक पक्की सड़क बन रही है। रतलाम की तरफ़ जाने-वाले मार्ग (दानपुर के घाटे) को भी सुधरवा दिया है। गोशाला के लिए ११ बीघे भूमि देकर बांसवाड़ा में गोशाला बनवा दी गई है, जिसमें लूली, लंगड़ी, और बूढ़ी गायों को रक्खा जाकर उनका पालन पोषण किया जाता है। इस कार्य का समस्त व्यय राज्य देता है। बांसवाड़ा से रतलाम एवं अन्य जगहों के आवागमन के मार्ग (अपने इलाक़े में) मोटर चलने लायक बनवा दिये हैं। कृषि की उन्नति के लिए तलवाड़े में कृषि फ़ार्म खोला गया है और कृषकों को थोड़े सूद पर रुपये उधार मिलने की व्यवस्था है। इसी प्रकार व्यौपार की वृद्धि के लिए व्यौपारी-धर्म को भी कम सूद पर रुपये कर्ज़ मिलने के लिए कमर्शियल बैंक स्थापित है। औद्योगिक कार्यों की तरफ़

कचि होने से महारावल ने राजधानी बांसवाड़ा में 'कॉटन फ़ैक्टरी' बनवा दी है। जनता के आमोद-प्रमोद के लिए राजधानी के समीप इन्होंने बाई तालाब की पिछोर में एक बड़ा बाग बनवाकर हिंसक जंतुओं को उसमें रखने के लिए पिंजरे बनवा दिये हैं। प्रजा के आराम के लिए राजधानी में बिजली की रोशनी का प्रबंध है और गांवों में खास-खास थानों तक टेलीफ़ोन-द्वारा समाचार पहुंचाने की व्यवस्था हो गई है। इन्होंने कई मंदिर, कुंफ, बावलियां और तालाबों की मरम्मत करवाई है एवं कितनी ही जगह नये कुंफ, बावलियां आदि जलाशय बनवाये हैं, जिनसे बहुधा जल का कष्ट मिट गया है। बांसवाड़ा की सुन्दरता बढ़ाने के लिए तंग रास्तों को ठीक करवा दिया है और राज्य महलों के त्रिपोलिया दरवाजे पर क्लॉक टावर बनवाकर नई सड़क 'त्रिपोलिया रोड' निकलवा दी है।

शिल्पकार्यों से भी महारावल को कम अनुराग नहीं है। इन्होंने कई पुराने मकानों, महलों, देवालियों और जलाशयों का जीर्णोद्धार कराकर उन्हें सुरक्षित किया है। इन्होंने राज्य-महलों में कितने ही नवीन महल बनवाकर वहां की सुंदरता बढ़ा दी है। राजधानी में कागदी नदी के तट पर नृपति-निवास तथा विट्ठलदेव में सरिता-निवास नामक रमणीय महल बनवाये हैं। इनके तेईस वर्ष के शासन में कई नई इमारतें, महल, बंगले, पुल तथा कचहरियों के मकान बने हैं, जिनसे राजधानी की शोभा बढ़ गई है।

वर्तमान महारावल बांसवाड़ा राज्य के योग्य शासक हैं। इन्होंने बांसवाड़ा के नष्ट वैभव को पुनः जीवित किया है। इनके राज्यासीन होने के पूर्व बांसवाड़ा के नरेशों के पास राज्याचित सामान की कमी थी, जिसकी इन्होंने बहुत कुछ पूर्ति की है। इनके सुप्रबंध के फलस्वरूप राज्यकोष की दशा अच्छी है और राज्य ऋण-ग्रस्त नहीं है। ये सिंह आदि हिंसक जंतुओं का शिकार तो करते हैं, परंतु उधर इनकी अधिक आसक्ति नहीं है। इनका रहन-

महारावल के बनवाये
हुए महल आदि

महारावल के जीवन पर
विचार

सहन सरल और पुराने ढंग का है। प्राचीन संस्कृति के अनुसार आचरण करने में ही ये अपना गौरव समझते हैं। इनका अपने भाइयों, सरदारों, प्रजावर्ग तथा अन्य नृपतियों से भी मेल है। खास-खास अवसरों पर ये उनको अपने यहाँ बुलाते हैं और स्वयं भी उनके यहाँ जाते हैं। इन्होंने भारत में बम्बई, आबू, जोधपुर, ईडर, अजमेर, लखनऊ, बनारस कलकत्ता आदि की यात्रायें की हैं।

महारावल पृथ्वीसिंहजी ने चार विवाह किये हैं। पहला विवाह महाराज-कुमार होनेकी अवस्था में सिरोही में हुआ, जिससे महाराजकुमार चंद्रवीरसिंह का जन्म हुआ, परंतु प्रसूतावस्था में ही उक्त महाराणी का देहांत हो गया। तदनन्तर इनका दूसरा विवाह दांता के परमार राणा जसवंतसिंह की पुत्री से हुआ, जिसके गर्भ से राजकुमारी अंबाकुंवरी, कोमलकुंवरी तथा महाराजकुमार राजेन्द्रसिंह उत्पन्न हुए। उनमें से महाराजकुमार तो बाल्यकाल में ही परलोक सिंधारा और वि० सं० १९७२ (ई० स० १९१६) में उक्त महाराणी का भी प्रसूति रोग से शरीरांत हो गया। इसपर इन्होंने अपना तीसरा विवाह वि० सं० १९७३ (ई० स० १९१७) में काठियावाड़ के मालिया स्टेट के जाड़ेचा ठाकुर रायसिंह की पुत्री से किया, जिससे एक राजकुमारी हेतकुंवरी का जन्म हुआ। अनन्तर इन्होंने अपना चतुर्थ विवाह ईडर के महाराजा दौलतसिंह की बहिन से किया, जिसके गर्भ से महाराजकुमार नृपतिसिंह (वि० सं० १९७८ वैशाख सुदि ८=ई० स० १९२१ ता० १५ मई) और सूरजकुंवरी, मोहनकुंवरी, शेरकुंवरी नामक राजकुमारियां उत्पन्न हुईं।

ज्येष्ठ महाराजकुमार चंद्रवीरसिंह ने बांसवाड़ा में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्तकर अजमेर के मेयो कालेज में प्रवेश किया, जहां उसने डिप्लोमा क्लास तक की शिक्षा प्राप्त की है। उसके दो विवाह-भागंधरा और कडाणा-में हुए हैं, जिनसे राजकुमारियां ही उत्पन्न हुई हैं। महाराजकुमार चंद्रवीरसिंह सरलहृदय और मिलनसार व्यक्ति है, परंतु वह कुछ वर्षों से बांसवाड़ा राज्य के बाहर ही रहता है।

महारावल की ज्येष्ठ राजकुमारी अंबाकुंवरी का विवाह चरखारी (मध्य भारत) राज्य के बुंदेला नरेश अरिमर्दनसिंहजी से वि० सं० १६८४ माघ सुदि ५ (ई० स० १६२८ ता० २७ जनवरी) को और राजकुमारी कोमल-कुंवरी का विवाह जयपुर राज्य के सूरजगढ़ के शेखावत ठाकुर रघुवीरसिंह से वि० सं० १६८८ माघ सुदि १४ (ई० स० १६३२ ता० २१ फरवरी) को हुआ है ।

सातवां अध्याय

महारावल के समीपी सम्बन्धी और मुख्य-मुख्य सरदार

सरदारों के दर्जे आदि

बांसवाड़ा राज्य के सरदार चार दर्जों—भाई, सोलह, बत्तीस और गुड़ाबंदी—में विभक्त हैं। भाइयों और सोलह के सरदारों की गणना प्रथम वर्ग में होती है। द्वितीय वर्ग में बत्तीस और तृतीय वर्ग में गुड़ाबंद सरदार हैं। सोलह, बत्तीस और भाइयों के ठिकानों में से अत्रिकांश को ताज़ीम और पैर में सोना पहनने का सम्मान प्राप्त है।

चंदूजी का गुड़ा, पीपलदा, सरखन, गोरी-तेजपुर, दौलतपुरा, सागर-रोद, खांदू, तेजपुर और सूरपुर के ठिकाने महारावल के भाइयों के हैं। जिनका सम्मान सोलह के सरदारों के बराबर होता है। कुशलपुरा का सरदार शक्तावत (सीसोदिया) है। मोलां (मोटा गांव), मेतवाला, अर्थूणा गढ़ी, गनोड़ा, खेड़ा-रोहानिया, नवा गांव और मोर के सरदार चौहान हैं। कुशलगढ़, गोपीनाथ का गुड़ा तथा ओड़वाड़ा के सरदार राठोड़ हैं। गढ़ी के सरदार को डूंगरपुर की तरफ से भी जागीर है। इसी प्रकार डूंगरपुर के बनकोड़ा, ठाकरड़ा और मांडव के सरदारों को बांसवाड़ा राज्य की तरफ से जागीर है। कुशलगढ़ का राव रतलाम राज्य (मालवा) की तरफ से भी जागीर रखता है और उसका संबंध दक्षिणी राजपूताना के पोलिटिकल एजेंट से है।

कुशलगढ़ के अतिरिक्त अन्य सरदार नियत नौकरी के लिए अपनी सेना सहित स्वयं राजधानी में हाज़िर होते हैं। वे वार्षिक खिराज भी देते हैं और आवश्यकता होने पर अन्य मौकों पर भी नौकरी के लिए बुलाये जाते हैं। कभी कभी केवल जमीयत ही नौकरी के लिए बुलाई जाती है। महारावल स्वयं यदि सेना लेकर कहीं जाय तो सरदारों का अपनी

सेना सहित उपस्थित होना जागीर-प्रथा का मुख्य नियम है। अपुत्रावस्था में सरदार अपने यहां दत्तक पुत्र ले सकते हैं; परंतु वि० सं० १९३६ के समझौते के अनुसार राज्य में उसकी सूचना देना आवश्यक है। जब किसी सरदार का देहांत होता है तो उसका उत्तराधिकारी तलवारबंदी का नज़राना राज्य में दाखिल करता है, तब तलवारबंदी होती है।

महारावल के राज्याभिषेक और पाटवी कुंवर तथा कुंवरियों के विवाह के अवसर पर सरदार राज्य को नज़राना देते हैं। बांसवाड़ा राज्य के सरदारों में चौहान मुख्य हैं और किसी समय राज्य की बागडोर उन्हीं के हाथ में थी और वे ही राज्य के रक्तक माने जाते थे। इन चौहानों में पाटवी (मुख्य) ठिकाना मोलां है, परन्तु आय में गढ़ी का ठिकाना सबसे बड़ा है। भाइयों में अधिक आय का ठिकाना खांदू है। पहले सरदार निरंकुश होकर मनमानी करते थे, परन्तु शनैः शनैः अब वे दबा दिये गये हैं और उनके न्याय-सम्बन्धी अधिकार सीमित कर दिये गये हैं। कई वर्षों से राज्य और सरदारों के बीच झगड़ा चला आता था, परन्तु वि० सं० १९३६ (ई० सं० १८८३) में महारावल लक्ष्मणसिंह के समय पारस्परिक समझौता होकर कई विवादग्रस्त विषयों का निर्णय हो गया है।

महारावल के निकट के सम्बन्धी

चंदूजी का गुड़ा

यहां का सरदार गुलाबसिंह बांसवाड़ा के वर्तमान महारावल पृथ्वी-सिंहजी का सहोदर भ्राता है और उसकी उपाधि 'महाराज' है।

उसका जन्म महारावल शंभुसिंह की दूसरी राणी ईंडरवाली केसर-कुंवरी के उदर से हुआ। वह राज्य के सायर डिपार्टमेंट का अफसर भी रहा है और वर्तमान महारावल ने उसको चंदूजी का गुड़ा जागीर में दिया है।

पीपलदा

यहां का सरदार लालसिंह बांसवाड़ा के वर्तमान महारावल का तीसरा भाई है और उसकी उपाधि 'महाराज' है।

महारावल शंभुसिंह की राणी (लूणावाड़ा इलाके के ढसिया के ठाकुर खुंमारसिंह की पुत्री) लालकुंवरी के उदर से उसका जन्म हुआ। वह बांसवाड़ा राज्य में शिक्षा-विभाग का अफसर रहा है और वर्तमान महारावल ने उसको पीपलदा की जागीर दी है।

सरवन

यहां का सरदार मदनसिंह महारावल पृथ्वीसिंहजी का चतुर्थ भाई है और उसकी उपाधि 'महाराज' है।

महाराज मदनसिंह का जन्म महारावल शंभुसिंह की राणी, गांमड़ा (डूंगरपुर) के चौहान सरदार की पुत्री सूरजकुंवरी के उदर से हुआ है और महारावल पृथ्वीसिंहजी ने उसको सरवन की जागीर दी है।

गोड़ी-तेजपुर

यहां का सरदार छत्रसिंह, महारावल पृथ्वीसिंहजी का पांचवां भाई है और उसकी उपाधि 'महाराज' है।

छत्रसिंह का जन्म महारावल शंभुसिंह की नाथावत (कछवाही) राणी शिवकुंवरी के उदर से हुआ है और वर्तमान महारावल ने उसको यह जागीर दी है।

दौलतपुरा

यहां का स्वामी किशोरसिंह वर्तमान बांसवाड़ा-नरेश का छोटा भाई है। उसकी उपाधि 'महाराज' है।

उसका जन्म महारावल शंभुसिंह की राणी, गांमड़ा (डूंगरपुर) के चौहान सरदार की पुत्री सूरजकुंवरी से हुआ और वर्तमान महारावल ने उसको दौलतपुरा की जागीर दी है।

शंकरसिंह

यह महारावल शंभुसिंह का सब से छोटा पुत्र और महारावल सर पृथ्वीसिंहजी का सब से छोटा भाई है। इसका जन्म महारावल शंभुसिंह की पंवार राणी से हुआ। अभी तक इसको कोई जागीर नहीं मिली है।

सागरोद

यहां का स्वामी महारावल लक्ष्मणसिंह का वंशधर है और उसकी उपाधि 'महाराज' है।

महारावल लक्ष्मणसिंह के छोटे पुत्र सवाईसिंह को वर्तमान महारावल पृथ्वीसिंहजी ने सागरोद की जागीर दी। सवाईसिंह का पुत्र दिग्विजयसिंह वहां का वर्तमान सरदार है।

खांदू

खांदू के स्वामी गुहिलोत (अहाड़ा) हैं। उनकी उपाधि 'महाराज' है और वे 'भाई' कहलाते हैं।

महारावल पृथ्वीसिंह (प्रथम) के चार पुत्र थे, उनमें से विजयसिंह बांसवाड़े का स्वामी हुआ। दूसरे पुत्र बल्लुसिंह को वि० सं० १८४६ आषाढ सुदि ८ (ई० सं० १७८६ ता० ३० जून)^१ को महारावल विजयसिंह ने खांदू की जागीर दी। बल्लुसिंह के दो पुत्र सरदारसिंह और बहादुरसिंह हुए, जिनमें से बहादुरसिंह, पहले तेजपुर गोद गया; फिर महारावल भवानीसिंह की निःसंतान मृत्यु होने पर बांसवाड़े का स्वामी हुआ।

सरदारसिंह को महारावल उम्मेदसिंह ने वि० सं० १८७४ (ई० सं० १८१७) में मरवा डाला। तब सरदारसिंह का उत्तराधिकारी उस (सरदारसिंह) का पुत्र मानसिंह हुआ। महारावल बहादुरसिंह भी निःसंतान था, इसलिए उसने अपनी गद्दीनशीली के साथ ही सूरपुर के महाराज खुशहालसिंह के पौत्र और बल्लावरसिंह के पुत्र लक्ष्मणसिंह को अपना उत्तराधिकारी नियत किया, जो दूर का हकदार था। इसपर खांदू के महाराज मानसिंह ने अपने हक का दावा मेजर रॉबिंसन, पोलिटिकल एजेंट मेवाड़, के पास पेश किया, जिससे आपस में फ़ैसला होकर वि० सं०

(१) वंशक्रम—[१] बल्लुसिंह [२] सरदारसिंह [३] मानसिंह [४] फ़तहसिंह और [५] रघुनाथसिंह।

(२) वि० सं० १८४६ आषाढ सुदि ८ का महारावल विजयसिंह का महाराज बल्लावरसिंह के नाम का परवाना।

१८६६ (ई० स० १८३६) में महारावल ने खांदू के वार्षिक खिराज में से तेरह सौ रुपये सदा के लिए छोड़ दिये।

महाराज मानसिंह के पांच पुत्र—फ़तहसिंह, जोरावरसिंह, केसरीसिंह, गुलाबसिंह, और रत्नसिंह—हुए, जिनमें से फ़तहसिंह, मानसिंह का उत्तराधिकारी हुआ। फ़तहसिंह ने वि० सं० १६०६ (ई० स० १८५२) में थांसवाड़ा राज्य के निवासी उद्दंड भीलों को दवाने में अच्छी सेवा की। महारावल लक्ष्मणसिंह खांदू ठिकाने के अधिकारों में कुछ हस्ताक्षेप करना चाहता था, जिससे महाराज फ़तहसिंह और उसके बीच विरोध हो गया। अन्त में जब वि० सं० १६३६ (ई० स० १८८३) में महारावल और सरदारों के बीच समझौता हुआ, तब खांदू के अधिकारों के सम्बन्ध में भी फैसला हो गया^१। फ़तहसिंह का पुत्र जसवंतसिंह पिता की विद्यमानता में ही वि० सं० १६४२ (ई० स० १८८५) में मर गया। इसलिए वि० सं० १६४७ (ई० स० १८६०) में उस (फ़तहसिंह) की मृत्यु होने पर उसका पौत्र रघुनाथसिंह (जसवंतसिंह का पुत्र) अपने दादा का उत्तराधिकारी हुआ, जो खांदू का वर्तमान सरदार है। उसका वि० सं० १६३८ आश्विन सुदि ११ (ई० स० १८८१ ता० ६ अगस्त) को जन्म हुआ है।

यद्यपि खांदू और राज्य के बीच के कुछ विवादग्रस्त विषयों का फैसला महारावल लक्ष्मणसिंह के समय हो गया था तथापि शासन प्रबन्ध में परिवर्तन होने पर फिर राज्य और उसके बीच कई बातों का विवाद खड़ा हो गया। अन्त में खांदू ठिकाने से तलवारबंदी के अवसर पर एक हजार एक रुपया राज्य को देने, दाण और आबकारी की आय के पदज़ जो कर्ज़ा राज्य का खांदू के ज़िम्मे था वो सब माफ़ होकर महाराज खांदू को दस हजार रुपये कलदार देने, खांदू पट्टे के जंगल पर राज्य की दस्त-दाज़ी न होने, खांदू पट्टे के लावारिस आसामियों का सामान ठिकाने में ही रखने एवं राज्य के खालसे का कोई आसामी खांदू पट्टे में गोद जाय तो उसका नज़राना महाराज खांदू ही के लेने आदि का

कैसला वर्तमान महारावल के समय वि० सं० १६७१ मार्गशीर्ष सुदि १ (ई० सं० १६१४ ता० १८ नवम्बर) को हुआ ।

महाराज रघुनाथसिंह सुशिक्षित व्यक्ति है । वह ई० सं० १६०४-१६१४ (वि० सं० १६६१-७१) तक बांसवाड़ा स्टेट कांसिल का सदस्य रहा है । वि० सं० १६७० (ई० सं० १६१३) में जब मानगढ़ की पहाड़ी में भीलों ने उपद्रव करना आरम्भ किया, उस समय वह अपनी सेना सहित राज्य की सेना में विद्यमान था । उसको महारावल ने दूसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेट का अधिकार भी दे दिया है । उसके एक पुत्र शंकरसिंह तथा दो पौत्र भोपाल-सिंह और गंगासिंह हैं ।

तेजपुर

महारावल पृथ्वीसिंह (प्रथम) का छोटा पुत्र रणसिंह' था, जिसको उस(रणसिंह)के ज्येष्ठ भ्राता विजयसिंह ने बांसवाड़े का स्वामी होने पर तेजपुर की जागीर दी और उसकी उपाधि 'महाराज' हुई, किन्तु वह (रणसिंह) निःसंतान था, इसलिए खांबू के महाराज बस्तसिंह का छोटा पुत्र बहादुरसिंह उस(रणसिंह)का उत्तराधिकारी हुआ । महारावल भवानीसिंह के पीछे, बहादुरसिंह के बांसवाड़े का स्वामी होने पर तेजपुर की जागीर खालसा हो गई । फिर महारावल लक्ष्मणसिंह ने वह ठिकाना अपने छोटे पुत्र सुजानसिंह को दिया, परन्तु वह निःसंतान ही मर गया । तब उक्त महारावल ने वहां अपने चतुर्थ पुत्र सज्जनसिंह को नियत किया, जो इस समय तेजपुर का सरदार है ।

सूरपुर

महारावल पृथ्वीसिंह (प्रथम) के सब से कनिष्ठ पुत्र खुशहालसिंह को उस(पृथ्वीसिंह)के ज्येष्ठ पुत्र विजयसिंह ने बांसवाड़े का स्वामी होने पर सूरपुर की जागीर दी । खुशहालसिंह के दो पुत्र हंमीरसिंह और बस्तवर-

(१) ऊपर पृ० १३६ में तख्तसिंह का नाम बड़वे की ख्यात में न होना लिखा है, परन्तु उसी ख्यात में जहां राणियो के नाम दिये हैं वहां तख्तसिंह और रणसिंह दोनों का भाई होना लिखा है ।

सिंह थे। उनमें से हंमीरसिंह अपने पिता खुशहालसिंह का उत्तराधिकारी हुआ तथै बस्तावरसिंह को बनाला गांव जागीर में मिला। बस्तावरसिंह का पुत्र लक्ष्मणसिंह था, जिसको महारावल बहादुरसिंह ने निःसन्तान होने से बांसवाड़े की गद्दी पर बैठने के समय दत्तक ले लिया। इससे लक्ष्मणसिंह ने, बहादुरसिंह के पीछे बांसवाड़े का राज्य पाया। हंमीरसिंह के पीछे उसका पुत्र माधवसिंह सूरपुर का स्वामी हुआ, परन्तु वह निःसन्तान था, इसलिए महारावल लक्ष्मणसिंह ने वहां अपने पुत्र सूर्यसिंह को नियत किया, जिसकी वि० सं० १६६० (ई० सं० १६०३) में मृत्यु हो गई। सूर्यसिंह का पुत्र अभयसिंह था, जिसकी ई० सं० १६२६ (वि० सं० १६८६) में मृत्यु हुई। उसका पुत्र भारतेन्द्रसिंह सूरपुर का वर्तमान महाराज है और डेली कॉलेज, इंदौर में शिक्षा पा रहा है।

प्रथम वर्ग के ताजीमी सरदार

मोलां (मोटा गांव)

वागड़िये चौहानों के ठिकानों में मोलां का ठिकाना प्रमुख है। जब वागड़ के चौहानों के ठिकानों में कोई सरदार मर जाता है तो मोलां का सरदार जाकर उसको सफेद पगड़ी और तलवार बंधवाता है। उसके पीछे राज्य एवं दूसरे सरदारों की तरफ से यह दस्तूर होता है। बांसवाड़ा के महारावल की गद्दीनशीनी के समय भी मोलां का सरदार ही उसको गद्दी पर बिठलाता है। उसकी उपाधि 'ठाकुर' है तथा बांसवाड़ा राज्य के प्रथम वर्ग (सोलह) के सरदारों में उसकी बैठक सब से ऊपर है।

नाडोल के चौहान आस्थान का वंशधर मुंघपाल वागड़ में चला आया। उसके पीछे कुछ पीढ़ी बाद चौहान बाला का पुत्र डूंगरसी वीर राजपूत हुआ। मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (सांगा) ने उसकी वीरता के कारण उसको बदनोर का पट्टा दिया। वि० सं० १५७७ (ई० सं० १५२०) में उक्त महाराणा ने ईडर के राव रायमल राठोड़ की सहायतार्थ मल्लिकहृषेन बहमनी (निज़ामुल्मुल्क) पर, जो गुजरात के सुलतान की

तरफ़ से ईडर का हाकिम था, चढ़ाई की। उसमें डूंगरसी अपने कई भाई-बेटों सहित मारा गया। उसके एक पुत्र कान्हसिंह ने अहमदनगर के क़िले के दरवाज़े को तोड़ने के समय बड़ी वीरता दिखलाई। जब अहमदनगर के क़िले के दरवाज़े के किवाड़ों को तोड़ने के लिए हाथी से मुहरा कराया गया तो किवाड़ों पर लगे हुए तीक्ष्ण भालों को देखकर हाथी मुहरा न कर सका। तब वीर कान्हसिंह ने भालों के सामने खड़ा होकर महावत को हाथी अपने बदन पर भोंकने के लिए कहा। महावत के वैसा ही करने पर हाथी ने कान्हसिंह पर मुहरा किया, जिससे किवाड़ तो टूट गये पर कान्हसिंह का शरीर छिद गया और उसकी मृत्यु हो गई।

महारावल उदयसिंह ने जब वागड़ राज्य के दो भाग कर वागड़ का पूर्वी भाग (बांसवाड़ा राज्य) अपने छोटे पुत्र जगमाल को दे दिया और पश्चिमी हिस्सा, जिसकी राजधानी डूंगरपुर है, अपने ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीराज के लिए रक्खा, तब मोलां का ठिकाना वागड़ के पूर्वी भाग में होने से बांसवाड़ा राज्य के अधीन रहा।

कान्हसिंह का छोटा भाई सूर था, जिसका पुत्र भाण हुआ। भाण का सातवां वंशधर सूरतसिंह माही नदी के तट पर (महाराणा राजसिंह की सेना से लड़कर) काम आया। सूरतसिंह का पुत्र सरदारसिंह महाराणा जयसिंह का समकालीन था। बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वीसिंह (प्रथम) की गद्दीनशीनी के समय सरदारसिंह के पुत्र सोभासिंह ने महारावल के विरुद्ध आचरण करना आरंभ कर उस (महारावल) को गद्दी से उतारना चाहा, परंतु वह सफल मनोरथ न हुआ। तब वह मरहटी सेना को बांसवाड़े पर चढ़ा लाया। महारावल बांसवाड़ा छोड़कर भूंगड़े के पहाड़ों

(१) वंशक्रम—[१] भाण [२] करमसी [३] जसवंत [४] केशोदास [५] सांवलदास [६] गोपीनाथ [७] सूरतसिंह [८] सरदारसिंह [९] सोभासिंह [१०] सवाईसिंह [११] अजीतसिंह [१२] भवानीसिंह [१३] दौलतसिंह [१४] सरदारसिंह (दूसरा) [१५] मदनसिंह [१६] शोभितसिंह [१७] किशोरसिंह और [१८] प्रतापसिंह।

में चला गया। मरहटी सेना ने बांसवाड़ा राज्य में लूट-मार जारी की। उसका राज्य की सेना से मुक्ताबला हुआ। अंत में मरहटी सेना डूंगरपुर, प्रतापगढ़ एवं मेवाड़ के इलाकों को लूटती हुई लौट गई। बांसवाड़ा पर मरहटों को चढ़ा लाने से मेवाड़, डूंगरपुर और प्रतापगढ़ के स्वामी भी ठाकुर सोभागसिंह से अप्रसन्न हो गये, तथा उस (सोभागसिंह) के पास इन राज्यों की तरफ से जो जागीर थी, वह उन्होंने ज़ब्त कर ली। यही नहीं बांसवाड़ा की तरफ से जो जागीर थी, उसका अधिकांश भाग महारावल पृथ्वीसिंह ने खालसा कर गढ़ी के ठाकुर उदयसिंह को दे दिया।

सोभागसिंह का सातवां वंशधर मदनसिंह निःसंतान था, इसलिए उसके चचा लालसिंह का छोटा पुत्र शोभितसिंह मोलां का स्वामी हुआ, जिसकी वि० सं० १६५६ (ई० सं० १६०३) में मृत्यु हो गई। तब उस (शोभितसिंह) का उत्तराधिकारी उपर्युक्त लालसिंह का ज्येष्ठ पुत्र किशोरसिंह हुआ। किशोरसिंह का जन्म वि० सं० १६३१ (ई० सं० १८७४) में हुआ और वि० सं० १६६७ (ई० सं० १६११) में मृत्यु हुई। उसका पुत्र प्रतापसिंह मोलां का वर्तमान सरदार है।

मेतवाला

यहां का सरदार चौहान है, जिसकी उपाधि 'ठाकुर' है। यह ठिकाना मोलां (मोटां गांव) से निकला है।

मेतवाले का चौहान मानसिंह बड़ा प्रभावशाली व्यक्ति था। बांसवाड़े के महारावल मानसिंह की खांदू के भीलों के मुखिया-द्वारा मृत्यु हो जाने पर वह (चौहान मानसिंह) बांसवाड़े का स्वामी बन बैठा। वह इतना ज़बरदस्त था कि उसको बांसवाड़े से निकालने के लिए मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह और डूंगरपुर के महारावल सहस्रमल ने कुछ सेना भेजी, परंतु वह वहां से न निकाला जा सका। अन्त में वागड़ के दूसरे चौहान सरदारों ने उसको समझाया, तब उसने महारावल जगमाल के ज्येष्ठ पुत्र किशनसिंह के पौत्र उग्रसेन को, जो कल्याणमल का बेटा था, उसके ननिहाल से बुलाकर बांसवाड़े का स्वामी बनाया। महारावल उग्रसेन के समय राज्य की आधी

आय मानसिंह लेता और महारावल के आधे महलों में भी बही रखा करता था।

वि० सं० १६४६ (ई० सं० १५६२) के पीछे कई कारणों से महारावल और मानसिंह के बीच विरोध हो गया। अन्त में राठोड़ सूरजमल और केशवदास की सहायता से महारावल ने मानसिंह को बांसवाड़े से निकाल दिया, जिसपर उसने दिल्ली जाकर मुगल बादशाह अकबर को प्रसन्न कर बांसवाड़े का फ़रमान अपने नाम लिखवा लिया और वहां पर अधिकार करने के लिए मिर्जा शाहख़ान के साथ वह शाही सेना लेकर आया, परन्तु उसे सफलता नहीं हुई, जिससे वहां से लौटकर वह पुनः बादशाह के पास चला गया। महारावल के सरदार सूरजमल तथा ठाकुरसी राठोड़ उसके पीछे लगे हुए थे। वि० सं० १६५८ (ई० सं० १६०१) में एक दिन वे अचानक पाकर बुरहानपुर में मानसिंह के खेमे में घुस गये और उन्होंने मानसिंह पर प्रहार किया। मानसिंह मारा गया, पर मरते-मरते उसने ठाकुरसी को भी मार लिया। मानसिंह का पुत्र शत्रुसाल था, जिसका वंशधर विजयसिंह इस समय मेतवाले का सरदार है।

अर्थुणा

यहां के सरदार हाथीयोत (हाथीरामोत) चौहान हैं और उनकी उपाधि 'ठाकुर' है।

वागड़िये चौहान बाला का एक पुत्र डूंगरसी और दूसरा हाथी' था। वागड़ के स्वामी महारावल उदयसिंह ने गनोड़ा की जागीर हाथी को दी थी। जब उक्त महारावल ने वागड़ राज्य के दो विभाग कर माही नदी का पूर्वी भाग (वर्तमान बांसवाड़ा राज्य) अपने छोटे पुत्र जगमाल को दिया, तब गनोड़ा माही नदी से पूर्व में होने के कारण वहां का स्वामी जगमाल की तरफ़ रहा और फिर जगमाल तथा उसके ज्येष्ठ भ्राता पृथ्वी-

(१) वंशक्रम—[१] हाथी [२] किशनसिंह [३] कपूर [४] ईसर [५] भीमसिंह [६] जसकरण [७] प्रतापसिंह [८] सरदारसिंह [९] गुलालसिंह [१०] पद्मसिंह [११] सुशाहाबसिंह [१२] दीक्षितसिंह [१३] भैरवसिंह [१४] भगवंतसिंह [१५] कृतहसिंह और [१६] पृथ्वीसिंह (निःसंतान मृत्यु हुई)।

राज के बीच युद्ध हुआ, उस समय किशनसिंह जगमाल के पक्ष में रह कर लड़ा। इसपर महारावल जगमाल ने उसको अर्थूणा की जागीर दी; किन्तु थोड़े ही समय बाद अर्थूणा जूत हो गया। जब मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह की बांसवाड़े पर महारावल समरसिंह के समय वि० सं० १६६२ (ई० सं० १६३५) में चढ़ाई हुई, तब किशनसिंह का प्रपौत्र भीमसिंह, धीरतापूर्वक युद्ध कर काम आया। इसपर उक्त महारावल ने फिर अर्थूणा उसके वंशजों को दे दिया। भीमसिंह का पुत्र जसकरण था। उस (जसकरण) का ११ वां वंशधर पृथ्वीसिंह थोड़े वर्ष हुए निःसंतान गुज़र गया है; इसलिए अर्थूणा इस समय राज्य के अधिकार में है।

गढ़ी

यहां का स्वामी चौहान क्षत्रिय है और उसकी उपाधि 'राव' है।

वनकोड़ा (डूंगरपुर राज्य) के ठाकुर परसा का पुत्र केसरीसिंह हुआ। उसका दूसरा पुत्र अग्रसिंह तथा तीसरा चंदनसिंह डूंगरपुर राज्य को छोड़कर बांसवाड़े के महारावल विष्णुसिंह के पास चले गये, जिनको उक्त महारावल ने निर्वाह के लिए कुछ जीविका (भूमि) निकाल अपने यहां रख लिया। थोड़े समय बाद उक्त महारावल ने अग्रसिंह को सेम-लिया और चंदनसिंह को बसई (बसी) गांव जागीर में दिया। अपनी योग्य सेवा से वे दोनों भाई शीघ्र ही महारावल के विश्वासपात्र बन गये और राज्य के उत्तरदायित्व पूर्ण कार्यों को भी करने लगे। महारावल विष्णुसिंह के समय के वि० सं० १७८६ वैशाख वदि ८ के ८५००१ रुपये के एक इक्करारनामे में (जो मेवाड़ राज्य के मुसाहब धायभाई नगराज और पंचोली कान्ह सहीवाला को लिखकर दिया गया था) महारावल विष्णुसिंह की स्वीकृति है और लेखक का नाम चौहान अग्रसिंह दिया है, जिससे स्पष्ट है कि अग्रसिंह उस समय महारावल के मुसाहब के पद तक पहुंच गया था।

(१) वंशक्रम—[१] अग्रसिंह [२] उदयसिंह [३] जोधसिंह [४] जसवंतसिंह [५] अर्जुनसिंह [६] रत्नसिंह [७] गंभीरसिंह [८] संप्रामसिंह [९] रायसिंह और [१०] हिम्मत्सिंह ।

महारावल विष्णुसिंह का देहांत होने पर उसका पुत्र उदयसिंह छोटी आयु में बांसवाड़े का स्वामी हुआ। उस समय महारावल के कुटुंबी नौगावां के भारतसिंह ने उपद्रव करना आरम्भ किया, तब ठाकुर अगरसिंह और चंदनसिंह के साथ उनको दवाने के लिए सेना भेजी गई। वि० सं० १७६४ मार्गशीर्ष (अमांत, पूर्णिमांत पौष) वदि २, ३ (ई० सं० १७३७ ता० २८, २९ नवम्बर) को उनका भारतसिंह से मुकाबला हुआ, जिसमें वे दोनों भाई लड़कर मारे गये। चौंच गांव में अगरसिंह और चंदनसिंह की स्मारक छत्रियां बनी हुई हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि वहां पर ही यह युद्ध हुआ होगा। वि० सं० १८०३ (ई० सं० १७४६) में महारावल उदयसिंह थोड़ी आयु में ही मर गया और उसका भाई पृथ्वीसिंह राजगद्दी पर बैठा। उस समय भी राज्य में उपद्रव हो रहा था, जिसको दवाने में अगरसिंह के पुत्र उदयसिंह ने बड़ी तत्परता दिखलाई, जिससे उक्त महारावल के समय उसको अच्छी जागीर मिल गई। उन्हीं दिनों बांसवाड़ा राज्य और सूथ राज्य के बीच खींचतान हो गई और ठाकुर उदयसिंह का कुटुंबी गंभीरसिंह मारा गया, जिसका बदला लेने के लिए उदयसिंह ने अपने राजपूतों को साथ लेकर सूथ पर आक्रमण किया। उस समय वहां का राजा बालक था, इसलिए उस (उदयसिंह) को रोकनेवाला वहां कोई न मिला, जिससे उसने निःसंकोच वहां के शेरगढ़ और चिलकारी परगनों पर अपना अधिकार कर लिया। इंगरपुर के महारावल शिवसिंह की आज्ञानुसार ठाकुर उदयसिंह, मोरी के सरदार को, जो राज्य से विद्रोही हो गया था, पकड़ लाया। इसपर उक्त महारावल ने उसे चीनरी तथा घाटा की जागीर प्रदान की। फिर उसने सेमलिया गांव से उत्तर में एक मील दूर चांप नदी के किनारे गढ़ बनवाकर वहां अपने नाम से गांव आबाद किया, जो गढ़ी कहलाता है। वि० सं० १८३१ (ई० सं० १७७४) में ठाकुर उदयसिंह का देहांत हुआ और उसका पुत्र जोधसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ।

उदयपुर के महाराणा भीमसिंह की वि० सं० १८५० (ई० सं० १७९४) में बांसवाड़े पर चढ़ाई हुई। तब महारावल विजयसिंह ने जोधसिंह के द्वारा

महाराणा के पास तीन लाख रुपये भेजकर सुलह कर ली। ठाकुर जोधसिंह की वि० सं० १८५८ (ई० सं० १८०१) में मृत्यु हुई। तब उसका पुत्र जसवंतसिंह गढ़ी का ठाकुर हुआ, परन्तु वह कुछ ही वर्ष जिया और वि० सं० १८६८ (ई० सं० १८११) में उसके निःसंतान मर जाने पर डूंगरपुर राज्य के ठाकुरदे के सरदार दुर्जनसिंह का भाई अर्जुनसिंह गोद जाकर गढ़ी का ठाकुर हुआ। अर्जुनसिंह अपने समय का वीर और बुद्धिमान सरदार था। मरहटों, सिंधियों और पिंडारियों के उपद्रव के समय उसने बांसवाड़ा राज्य की बड़ी सेवा की। जब डूंगरपुर के महारावल जसवंतसिंह (दूसरे) को सिंधियों ने पकड़ लिया और वहां अपना अधिकार कर लिया, तब उस (अर्जुनसिंह) ने वहां से सिंधियों को निकालने में पूरा उद्योग किया। इसपर उक्त महारावल ने सिंधियों के क़ब्जे से छूट जाने पर अर्जुनसिंह को फिर चतरी की जागीर दे दी, जो बीच में राज्य के अधिकार में चली गई थी। अपने उत्तम आचरण और कर्त्तव्यनिष्ठा के कारण उस समय ठाकुर अर्जुनसिंह की ख्याति और प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई थी, जिसका वर्णन सर मॉल्कम ने भी अपनी 'मेमोइर्स इन सेंट्रल इंडिया इनफ्ल्यूइंग मालवा' नामक पुस्तक में किया है। अर्जुनसिंह का वि० सं० १८६८ (ई० सं० १८४१) में देहांत होने पर उसका पुत्र रत्नसिंह गढ़ी का ठाकुर हुआ, जो बहुत ही समझदार व्यक्ति था। उसकी पुत्री इंद्रकुंवरी का विवाह मेवाड़ के महाराणा शंभुसिंह से (जब वह बागोर का महाराज था) हुआ था, जिससे वि० सं० १८२८ (ई० सं० १८७१) में उक्त महाराणा ने उसको ताज़ीम, बांह-पसाव आदि की इज़्ज़त देकर 'राव' का खिताब दिया। कुछ कारणों से महारावल लक्ष्मणसिंह और राव रत्नसिंह के बीच विरोध हो गया, परन्तु महारावल की तरफ से बाग के एवज़ में दूसरी ज़मीन दिये जाने तथा महसूल राहदारी का संतोषप्रद निबटारा हो जाने से फिर मेल हो गया और वि० सं० १८३१ (ई० सं० १८७४) में महारावल ने उसे अपना मन्त्री बनाया। ठाकुर रत्नसिंह सन्तानहीन था, पर उसने अपने जीवनकाल में ही ठाकुरदे से गंभीरसिंह को बुलाकर दत्तक रख लिया; इसलिये

वि० सं० १९३८ (ई० सं० १८८१) में उसकी मृत्यु होने पर गंभीरसिंह गढ़ी का राव हुआ। उन दिनों बांसवाड़ा राज्य के सरदारों और महारावल के बीच नौकरी, खिराज आदि के विषय में कई बातें विवाद-ग्रस्त थीं, जिसका महारावल-द्वारा वि० सं० १९३९ (ई० सं० १८८३) में फ़ैसला होने पर गढ़ी के राव के गणगौर के त्योंद्वार और मेले के अवसर पर स्वयं बांसवाड़ा जाकर नौकरी न देने का निर्णय हुआ।

वि० सं० १९४५ (ई० सं० १८८८) में राव गंभीरसिंह निःसंतान मर गया। तब संग्रामसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ, जो उसके भाई (ठाकरड़े के सरदार) उदयसिंह का पुत्र था। वि० सं० १९६१ (ई० सं० १९०४) में संग्रामसिंह भी अपुत्र मरा। तब गामड़े से रायसिंह गोद गया, जिसकी वि० सं० १९७४ (ई० सं० १९१७) में मृत्यु हुई। उस- (रायसिंह) का पुत्र हिम्मतसिंह गढ़ी का वर्तमान राव है। राव हिम्मतसिंह ने मेयो कॉलेज, अजमेर में शिक्षा पाई है। वह 'क्रिकेट' का अच्छा खिलाड़ी है। गढ़ी में राव की तरफ़ से एक अच्छा स्कूल, अस्पताल आदि हैं, तथा देहातों में भी कई जगह प्रारंभिक पाठशालाएं हैं। राव की बाल्या-वस्था के कारण गढ़ी ठिकाने पर जब राज्य का प्रबन्ध रहा, उस समय महारावल ने वहां के मैनेजर को न्याय सम्बन्धी तीसरे दर्जे के दीवानी तथा फ़ौजदारी के अधिकार देकर सुभीता कर दिया था।

गनोड़ा

यहां का सरदार चौहान है और डूंगरपुर राज्य के बनकोड़ा ठिकाने के ठाकुर केसरीसिंह के छोटे पुत्र फ़तहसिंह का वंशज है। उसकी उपाधि 'ठाकुर' है। वर्तमान ठाकुर सरदारसिंह, मोतीसिंह का पुत्र है।

खेड़ा-रोहानिया

यहां का सरदार चौहान है और मांडव (डूंगरपुर राज्य) के ठाकुर प्रतापसिंह के पुत्र भीमसिंह का वंशज है। उसकी उपाधि 'ठाकुर' है।

(१) वंशक्रम के लिए देखें मेरा 'राजपूताने का इतिहास,' जिल्द ३, भाग १, पृ० १०९।

वि० सं० १६८५ (ई० सं० १६२८) में ठाकुर केसरीसिंह की मृत्यु होने पर उसका पुत्र दुर्गानारायणसिंह उस (केसरीसिंह) का उत्तराधिकारी हुआ, जो खेड़ा-रोहानिया का वर्त्तमान सरदार है। डूंगरपुर राज्य की तरफ से उसके पास ठाकुरड़े की जागीर है।

नवा गांव

यहां का सरदार चौहान है और डूंगरपुर राज्य के बनकोड़ा के ठाकुर लालसिंह के छोटे पुत्र सुरतानसिंह का वंशज है। उसकी उपाधि 'ठाकुर' है और डूंगरपुर राज्य की तरफ से उसे मांडव की जागीर मिली है।

सुरतानसिंह का सातवां वंशधर दलपतसिंह निःसंतान मरा, इसलिए वर्त्तमान ठाकुर उम्मेदसिंह गामड़ा (डूंगरपुर राज्य) से गोद आया।

मौर

यहां का सरदार चौहान है और उसकी उपाधि 'ठाकुर' है। मौर की जागीर बांसवाड़ा राज्य से बनकोड़ा (डूंगरपुर राज्य) के ठाकुर को दी गई है, जो डूंगरपुर राज्य का प्रमुख सरदार है। बनकोड़े का वर्त्तमान सरदार सज्जनसिंह है और पूर्ववत् मौर की जागीर पर उसका अधिकार है।

कुशलगढ़

कुशलगढ़ के स्वामी रामावत राठोड़ हैं। उनकी उपाधि 'राव' है और बांसवाड़ा राज्य की तरफ से तांवेसरा का पट्टा उनकी जागीर में है।

जोधपुर के सुप्रसिद्ध राव जोधा का एक पुत्र घरसिंह था, जो बहुत दिनों तक अपने भाई दूदा के साथ मेड़ते में रहा। मेड़ते में रहते हुए दूदा और घरसिंह के बीच मनो-मालिन्य हो गया, जिससे दूदा बीकानेर चला गया। इधर अवसर पाकर एक दिन मुसलमानों ने आक्रमण कर घरसिंह को पकड़कर कैद कर लिया। यह समाचार सुनकर दूदा बीकानेर से चढ़ा

(१) वंशक्रम के लिए देखो मेरा 'राजपूताने का इतिहास,' जिल्द ३, भाग १, पृ० २०६।

(२) वही; पृ० २०३-४।

और मुसलमानों को मेड़ते से निकालकर वरसिंह को छुड़ा लाया । फिर दूदा का मेड़ते पर और वरसिंह के वंशजों का रीयां (मारवाड़) पर अधिकार रहा । वरसिंह के ज्येष्ठ पुत्र सिंहा के वंशज भावुआ के स्वामी हैं । उसका दूसरा पुत्र आसकरण था, जिसके वंशजों ने मालवे की तरफ जाकर वहां की भूमि पर अधिकार किया । आसकरण के पौत्र रामसिंह के लिए प्रसिद्ध है कि जब वि० सं० १६८८ (ई० सं० १६३१) के लगभग बांसवाड़ा राज्य की गद्दी के लिए चौहानों और राठोड़ों में लड़ाई हुई, उस समय वह उसमें मारा गया । उसके तेरह पुत्र थे, जो रामावत राठोड़ कहलाये । फिर उस (रामसिंह) का तीसरा पुत्र जसवन्तसिंह गद्दी पर बैठा । जसवन्तसिंह का ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंह था, जिसने साठ गांवों के साथ खेड़ा की जागीर प्राप्त की, जो रतलाम राज्य में है । तदनन्तर अमरसिंह बादशाह औरंगजेब की सेना से लड़कर मारा गया । उसके कोई संतति न थी, इसलिए जसवन्तसिंह का छोटा पुत्र अखैराज अपने ज्येष्ठ भ्राता अमरसिंह का उत्तराधिकारी हुआ ।

अखैराज के पीछे क्रमशः कल्यानसिंह, कीर्तिसिंह, दलसिंह, केसरीसिंह, अचलसिंह, भगवंतसिंह और जालिमसिंह कुशलगढ़ के स्वामी हुए । ठाकुर जालिमसिंह को मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह ने वि० सं० १८४० (ई० सं० १७८३) में 'राव' का खिताब देकर सम्मानित किया था, जिससे उसके वंशजों की उपाधि 'राव' हुई । राव जालिमसिंह का उत्तराधिकारी हंमीरसिंह हुआ ।

राव हंमीरसिंह और रतलाम के स्वामी के बीच कई बातों का विवाद हो जाने से झगड़ा बढ़ गया और अन्त में अंग्रेज़ सरकार के पास शिकायत होने पर वहां से वि० सं० १८१२ (ई० सं० १८५५) में यह निर्णय हुआ कि कुशलगढ़ का राव बांसवाड़ा राज्य के मातहत है । वि० सं० १८१५ (ई० सं० १८५८) में सिपाही विद्रोह के समय जब बागी दल के मुखिया तांतिया टोपी के साथ के विद्रोही कुशलगढ़ होते हुए बांसवाड़ा की तरफ

बढ़े तो मार्ग में राव हंमीरसिंह ने अपनी सेना के साथ उपस्थित होकर उनको रोकने का बहुत कुछ प्रयत्न किया, परन्तु बागियों की संख्या अधिक होने से उसे सफलता नहीं मिली और बागी आगे बढ़ते ही गये। सिपाही विद्रोह के समय राव-द्वारा की गई सेवाओं की अंग्रेज़ सरकार में प्रशंसा हुई और उसे खिलअत दी गई।

महारावल लक्ष्मणसिंह के समय कुछ बातें ऐसी हुईं, जिनसे राव हंमीरसिंह और उसके बीच मनमुटाव हो गया, जो बढ़ता ही गया और राव हंमीरसिंह अपने को स्वतन्त्र मानकर बांसवाड़ा राज्य की आज्ञाओं की उपेक्षा करने लगा। जब उसकी उदूलहुकमी और सर्कशी की शिकायतें हुईं तो उसने पोलिटिकल एजेंट को स्पष्ट जवाब दिया कि मेरी रियासत बांसवाड़ा से बिल्कुल पृथक् है। यदि बांसवाड़ा के द्वारा मुझ से लिखा-पढ़ी होगी तो मैं कदापि उत्तर न दूंगा। उसे बहुत समझाया कि वह बांसवाड़ा राज्य के मातहत है और सरकार का अहदनामा बांसवाड़ा से है, उसके साथ नहीं, परन्तु उसने न माना। पोलिटिकल एजेंट के बुलाने पर राव बांसवाड़े गया, पर महारावल के पास नहीं गया, इससे महारावल और उसके बीच का विरोध और भी बढ़ गया।

महारावल, कुशलगढ़ के राव के ज़िम्मे खिगाज आदि की रकम बाक़ी निकालकर उससे वसूल करना चाहता था। इसी बीच वि० सं० १६२३ (ई० सं० १८६६) में कर्लिजरा के धाने से एक क़ैदी भाग गया, जिसके लिए यह बात फैलाई गई कि उक्त क़ैदी को कुशलगढ़ के राव का कुंवर कई आदिमियों को घायल कर लुड़ा ले गया है। बांसवाड़ा राज्य ने इस बात की आड़ लेकर कुशलगढ़ के राव के विरुद्ध कड़ी शिकायत की। तब पोलिटिकल अफ़सर्गों ने राव को क़ैदी सौंप देने की आज्ञा दी, पर वह क़ैदी कुशलगढ़वालों की तरफ़ से हमला कर नहीं लुड़ाया गया था, इसलिए कुशलगढ़ के राव ने अपनी निर्दोषिता बतलाते हुए कई उज्र किये, किन्तु कर्नल निकसन ने उसके उज्र ठीक न समझे। अन्त में उक्त कर्नल के रिपोर्ट करने पर अंग्रेज़ सरकार ने कुशलगढ़ के राव की रतलाम की

जागीर पर भी ज़ब्त होने की कार्यवाही की।

इस पर कुशलगढ़ के राव ने इस फ़ैसले के विरुद्ध पैरवी की तो पुनः इस मामले की जांच का हुक्म हुआ। फिर यह मामला मेजर मैकेंज़ी आदि खैरवाड़ा के अफ़सरों को सौंपा गया, जिन्होंने घटनास्थल पर जाकर तहकीकात की और महारावल के कामदार कोठारी केसरीसिंह ने इंगरपुर के कामदारों की मारफ़्त वास्तविक हाल उक्त अफ़सर को ज़ाहिर करा दिया और महारावल से भी किसी प्रकार ऐसा तहरीरी इकरार करा लिया कि अपराधी का भागना कुशलगढ़ की मदद से न था, राज्य के अहल-कारों की गफ़ज़त से सुनने में आया और इस मामले में कामदारों ने सब कार्यवाही मेरे (महारावल के) हुक्म से की है।

इसी बीच वि० सं० १६२५ मार्गशीर्षसुदि ५ (ई० सं० १८६८ ता० १६ नवम्बर) बुधवार को राव हंमीरसिंह की मृत्यु हो गई, और उसका पुत्र जोरावरसिंह कुशलगढ़ का राव हुआ। बांसवाड़ा और कुशलगढ़ के भगड़े के संबंध में फिर उक्त अफ़सरों ने जब अंग्रेज़ सरकार में विस्तृत रिपोर्ट पेश कर महारावल की शिकायत की, तो सरकार ने नाराज़ होकर ई० सं० १८६६ ता० १ अगस्त (वि० सं० १६२६ श्रावण वदि ८) को महारावल की सलामी में चार तोपें छः वर्ष के लिए घटाकर ग्यारह तोपें नियत कर दीं। गांव ज़ब्त करने के बदले कुशलगढ़ के राव को ६३३७ रुपये हरजाने के दिलाना तजवीज़ होकर भविष्य में कुशलगढ़ के भीतरी मामलों में महारावल के किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करने, कुशलगढ़ के इलाके में से जानेवाली व्यापार की वस्तुओं का महसूल राव के ही लेने, ११०० रुपये सालिमशाही वार्षिक खिराज के पोलिटिकल एजेंट के द्वारा बांसवाड़ा को देते रहने और अंग्रेज़ अफ़सर बांसवाड़े का स्वत्व समझ कर जो बात कहे, उसकी तामील करने का फ़ैसला हुआ।

उपर्युक्त फ़ैसले से कुशलगढ़ का राव बांसवाड़ा से बिल्कुल स्वतन्त्र सा हो गया। उसके ठिकाने की गणना अंग्रेज़ सरकार के संरक्षित ठिकानों में होने लगी एवं उसके न्यायसम्बन्धी अधिकार नियत कर दिये

गये। वार्षिक खिराज नियमित रूप से बराबर दाखिल करने और खास-खास अवसरों अर्थात् महारावल की गद्दीनशीनी, कुंवर तथा कुंवयियों के विवाह पर स्वयं बांसवाड़ा में उद्दिष्ट रहने के अतिरिक्त उसका अन्य कुछ भी सम्बन्ध बांसवाड़ा राज्य से न रहा।

इस निर्णय से कुशलगढ़ बांसवाड़ा राज्य के दबाव से मुक्त हो गया और उसको अपना वकील असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट के पास नियत करने का स्वत्व मिल गया। भारत सरकार के फ़ॉरेन सेक्रेटरी डबल्यू० एस० सेटनकर-द्वारा ई० स० १८६६ ता० २२ जुलाई (वि० सं० १६२६ आपाठ सुदि १४) को इस निर्णय की सूचना आने पर राव ने असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट के पास अपना वकील नियत कर दिया तथा ई० स० १८७३ के जनवरी (वि० सं० १६२६) मास में उसने खिराज भी दाखिल कर दिया, परन्तु तलवारबंदी का नज़राना, जिसके लिए महारावल का उज्र था, दाखिल नहीं किया। अन्त में पोलिटिकल एजेंट मेवाड़ के सिफ़ारिश करने पर ई० स० १८७५ (वि० सं० १६३२) में वह (नज़राना) भी अंग्रेज़ सरकार ने माफ़ कर दिया।

राजपूताने के अन्य राज्यों की भांति कुशलगढ़ ठिकाने में भी बहुत समय तक प्रजा पर अन्याचार होते रहे और ई० स० १८७१ (वि० सं० १६२८) में वहां एक वृद्धा भीलनी को, जो ८० वर्ष की थी, डाकिनी प्रकट कर वृक्ष पर लटका कर मार डाला। इसकी सूचना पोलिटिकल एजेंट को मिलने पर तद्दलीक़ात आरम्भ हुई और सब रहस्य प्रकट हो गया। फिर एजेंट गवर्नर-जेनरल राजपूताना की आज्ञा से कादिर बोहरा (कामदार कुशलगढ़) और विश्वा भोपा (डाकिनी पकड़नेवालों) को पांच-पांच वर्ष तथा अली बोहरा (कोतवाल) को एक वर्ष कैद की सज़ा दी गई और तीनों अजमेर के जेलखाने में भेजे गए। कुशलगढ़ के राव पर दो हज़ार रुपये जुरमाना हुआ, जिसमें से एक हज़ार रुपये उक्त वृद्धा के पुत्रों को दिलवाए गए^१।

वि० सं० १६४८ (ई० सं० १८६१) में राव जोरावरसिंह का देहान्त हुआ । उस(जोरावरसिंह)के उदयसिंह, दीपसिंह और जसवन्तसिंह नामक तीन पुत्र हुए । राव जोरावरसिंह के समय में कुशलगढ़ में पाठशाला और दवाखाने की स्थापना हुई एवं मुसाफिरों के ठहरने के लिए एक सराय भी बनवाई गई । तदनन्तर उस(जोरावरसिंह)का ज्येष्ठ पुत्र उदयसिंह कुशलगढ़ का स्वामी हुआ । ई० सं० १६११ (वि० सं० १६६८) में श्रीमान् सम्राट् पञ्चम जॉर्ज (परलोकवासी) ने भारत में आकर दिल्ली में अपने राज्याभिषेकोत्सव का बृहत् दरबार किया । उस अवसर पर दरबार में सम्मिलित होने के लिए भारत सरकार की तरफ से राव उदयसिंह के पास निमन्त्रण पहुंचने पर उसने भी दिल्ली जाकर श्रीमान् सम्राट् की सेवा में उपस्थित होने का सम्मान प्राप्त किया । वि० सं० १६७१ (ई० सं० १६१४) में यूरोप में महासमर की आग भड़क उठने पर राव उदयसिंह ने अपने पुत्रों सहित रणक्षेत्र में जाने की इच्छा प्रकट की और यथाशक्ति धन आदि से सहायता देकर अंग्रेज सरकार के प्रति राजभक्ति का परिचय दिया । एकसठ वर्ष की आयु हो चुकने पर वि० सं० १६७२ (ई० सं० १६१६) में राव उदयसिंह की मृत्यु हुई । उसके तीन पुत्र—रणजीतसिंह, लक्ष्मणसिंह और छत्रसिंह—हुए ।

कुशलगढ़ के वर्त्तमान राव रणजीतसिंह का जन्म वि० सं० १६३६ वैशाख सुदि १४ (ई० सं० १८८२ ता० २ मई) को हुआ और अपने पिता उदयसिंह के पीछे वह वि० सं० १६७२ पौष सुदि ६ (ई० सं० १६१६ ता० १३ जनवरी) को कुशलगढ़ का स्वामी हुआ ।

कुशलगढ़ के ठिकाने से रतलाम राज्य को १२०५ और बांसवाड़ा राज्य को ११०० रुपये सालिमशाही प्रतिवर्ष खिराज के दिये जाते थे, परंतु ई० सं० १६०४ से सालिमशाही रुपये का चलन बंद हो गया । तब से वह रतलाम राज्य को लगभग ६०० रुपये और बांसवाड़ा राज्य को ५५० रुपये कलदार देता है । रतलाम का खिराज वह स्वयं और बांसवाड़ा का इन्निणी राजपूताना के पोलिटिकल एजेंट-द्वारा भेजता है । वहां की

समस्त लिखा-पढ़ी पोलिटिकल एजेंट-द्वारा ही होती है। उसको न्याय संबंधी अधिकार भी प्राप्त हैं, परंतु संगीन मामलों की रिपोर्ट पोलिटिकल एजेंट के पास करना आवश्यक है एवं मृत्युदंड, आजीवन कैद, निर्वासन आदि के बड़े मुक्तदमों का फ़ैसला एजेंट गवर्नर-जेनरल की आज्ञा से होता है।

नवीन राव की गद्दीनशीनी के अवसर पर भावुआ का राजा कुशलगढ़ आकर तलवार बंधवाता है। कुशलगढ़ में एक अच्छा स्कूल, अस्पताल, डाक-खाना आदि हैं और देहातों में भी कुछ स्थानों में पाठशालाएं हैं। कुशलगढ़ का क्षेत्रपाल ३४० वर्ग मील है और ई० स० १९३१ की मनुष्य गणना के अनुसार ३५५६४ मनुष्य वहां निवास करते हैं। ठिकाने में ५ सवार और ६० पुलिस के सिपाही तथा ३ काम लायक तोपें हैं। वर्तमान समय में कुशलगढ़ की आय १५६००० रुपये हैं।

राव रणजीतसिंह के ब्रजबिहारीसिंह, भारतसिंह, उदयनारायणसिंह रामचंद्रसिंह और देवीसिंह नामक पांच पुत्र हुए, जिनमें से कुंवर ब्रजबिहारीसिंह की वि० सं० १९८६ माघ सुदि १४ (ई० स० १९३३ ता० ६ फ़रवरी) को २८ वर्ष की आयु में मृत्यु हो गई। उस (ब्रजबिहारीसिंह) का पुत्र हरेन्द्रकुमारसिंह विद्यमान है, जिसका जन्म वि० सं० १९८१ पौष सुदि ७ (ई० स० १९२४ ता० ११ मई) को हुआ और वह मेयो कॉलेज, अजमेर में शिक्षा पा रहा है।

गोपीनाथ का गुढ़ा (तलवाड़ा)

यहां का सरदार मेड़तिया राठोड़ है और उसकी उपाधि 'ठाकुर' है। राठोड़ समरदान का पुत्र वल्लभनाथ और उसका गोपीनाथ था, जिसने गोपीनाथ का गुढ़ा बसाया। गोपीनाथ का चौथा वंशधर जोरावरसिंह रावपुर की गढ़ी के भगड़े में काम आया। जोरावरसिंह की सातवीं पीढ़ी में शेरसिंह हुआ, जो सिंधिया की फ़ौज के साथ झोडण में लड़कर काम आया। उसके पीछे मोहम्मतसिंह, भवानीसिंह, गुलाबसिंह और बस्तावरसिंह,

गोपीनाथ के गुड़ा के स्वामी हुए। ब्रह्मावरसिंह का पुत्र प्रतापसिंह और उसका मोतीसिंह हुआ, जो यहां का वर्त्तमान सरदार है।

ओरीवाड़ा (ओड़वाड़ा)

यहां का सरदार मेड़तिया राठोड़ है और उसकी उपाधि 'ठाकुर' है।

बांसवाड़े के महारावल लक्ष्मणसिंह के समय ओरीवाड़े का सरदार ओंकारसिंह मर गया तब दौलतसिंह वहां नियत किया गया। दौलतसिंह का पुत्र अनूपसिंह और उसका लक्ष्मणसिंह हुआ, जो ओरीवाड़े का वर्त्तमान सरदार है।

कुशलपुरा

यहां का सरदार सीसोदियों की शक्तावल शाखा से है, जो मेवाड़ के भीड़र ठिकाने से निकली है। उसकी गणना महारावल के 'भाइयों' में होती है और उसका खिराज माफ़ है।

ठाकुर जसवंतसिंह की मृत्यु होने पर उसका उत्तराधिकारी दलपतसिंह हुआ, जो कुशलपुरे का वर्त्तमान सरदार है।

द्वितीय वर्ग के सरदार

संख्या	ठिकाना	खांप	सरदार का नाम	विशेष वृत्त
१	भुवासा	चौहान	हरिसिंह	
२	भूखिया	"	कुरिसिंह	
३	बेवदा	अहाड़ा	मानसिंह	
४	कुवानिया	"	केसरीसिंह	
५	भीमसोर	"	लालसिंह	
६	आमजा	"	माधोसिंह	
७	बीछावाड़ा	चौहान	गंभीरसिंह	
८	छांजा	"	केसरीसिंह	
९	उंवाड़ा	"	मोतीसिंह	
१०	नरवाली	शक्तावत सीसोदिया	शंभुसिंह	
११	मोइयावासा	चौहान	मोहब्बतसिंह	
१२	कुंडला	कुंभावत सीसोदिया	हंमीरसिंह	
१३	बस्ती	चौहान	लालसिंह	
१४	देलवाड़ा	"	बलवंतसिंह	
१५	गरखिया	चूंडावत सीसोदिया	शिवसिंह	
१६	सेमलिया		ओंकारसिंह	

परिशिष्ट-संख्या १

गुहिल से लगाकर घागड़ राज्य के संस्थापक सामंतसिंह तक
मेवाड़ के गुहिलवंशी राजाओं की शोध-पूर्ण वंशावली

- १ गुहिल ।
- २ भोज ।
- ३ महेन्द्र ।
- ४ नाग (नागादित्य) ।
- ५ शीलादित्य (शील)—वि० सं० ७०३ ।
- ६ अपराजित—वि० सं० ७१८ ।
- ७ महेन्द्र (दूसरा) ।
- ८ कालभोज (बापा)—वि० सं० ७६१—८१० ।
- ९ खुम्माण—वि० सं० ८१० ।
- १० मत्तट ।
- ११ भर्तृभट (भर्तृपट्ट) ।
- १२ सिंह ।
- १३ खुम्माण (दूसरा) ।
- १४ महायक ।
- १५ खुम्माण (तीसरा) ।
- १६ भर्तृभट (भर्तृपट्ट, दूसरा)—वि० सं० ९९६, १००० ।
- १७ अल्लट—वि० सं० १००८, १०१० ।
- १८ नरबाहन—वि० सं० १०२८ ।
- १९ शालिवाहन ।
- २० शक्तिकुमार—वि० सं० १०३४ ।
- २१ अंबाप्रसाद ।
- २२ शुचिधर्मा ।

- २३ नरवर्मा ।
 २४ कीर्तिवर्मा ।
 २५ योगराज ।
 २६ वैरट ।
 २७ हंसपाल ।
 २८ वैरिसिंह ।
 २९ विजयसिंह—वि० सं० ११६४, ११७३ ।
 ३० अरिसिंह ।
 ३१ चोड़सिंह ।
 ३२ विक्रमसिंह ।
 ३३ रणसिंह (कर्णसिंह) ।

(मेवाड़ की शाखा)		(सीसोदे की राणा शाखा)
३४ क्षेमसिंह	माहप	राहप
३५ सामंतसिंह ^१ (वि० सं० १२२८-३६)	३६ कुमारसिंह	बर्तमान राजवंश का मूल पुरुष मेवाड़ के

(१) सामंतसिंह ने पहले मेवाड़ में राज्य किया, तदनन्तर वागड़ में जाकर नवीन राज्य की स्थापना की । फिर कुमारसिंह मेवाड़ का स्वामी हुआ । कुमारसिंह के पीछे मथनसिंह, पद्मसिंह, जैत्रसिंह, तेजसिंह, समरसिंह और रत्नसिंह मेवाड़ के स्वामी हुए । महारावल रत्नसिंह के समय वि० सं० १३६० (ई० स० १३०३) में दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने चित्तोड़ पर आक्रमण किया, जिसमें महारावल रत्नसिंह वीरतापूर्वक युद्ध करता हुआ काम आया । अनन्तर सीसोदे की राणा शाखा के (राहप के वंशधर) वीर हंसीरसिंह ने पीछा चित्तोड़ पर अधिकार कर लिया । उसके वंशज इस समय मेवाड़ के स्वामी हैं ।

परिशिष्ट-संख्या २

वागड़ राज्य के संस्थापक गुहिलवंशी सामंतसिंह से लगाकर
महारावल उदयसिंह तक की वंशावली

१ सामंतसिंह (पहले मेवाड़ का स्वामी हुआ, फिर वागड़ पर राज्य किया)
(वि० सं० १२२८-३६) ।

२ जयतसिंह ।

३ सीहड़देव (वि० सं० १२७७-६१) ।

४ विजयसिंह (जयसिंह)
(वि० सं० १३०६-८) ।

५ देवपालदेव (देदा रावल) ।

६ वीरसिंहदेव (वरसी रावल)
(वि० सं० १३४३-५६) ।

७ भूचंड (भचूंड) ।

८ डूंगरसिंह ।

९ कर्मसिंह ।

१० कान्हड़देव ।

११ प्रतापसिंह (पाता रावल) ।

१२ गोपीनाथ (गेपा रावल)
(वि० सं० १४८३-६८) ।

१३ सोमदास
(वि० सं० १५०६-३६) ।

१४ गंगदास
(वि० सं० १५३६-५३) ।

१५ उदयसिंह
(वि० सं० १५५५-८४) ।

१६ पृथ्वीराज ।

(डूंगरपुर की शाखा)

जगमाल ।

(बांसवाड़े की शाखा)

परिशिष्ट-संख्या ३

बांसवाड़ा राज्य के संस्थापक महारावल जगमाल से लगाकर
वर्तमान समय तक की बांसवाड़े के राजाओं की वंशावली

नाम	व्याप्तों में उल्लिखित राज्याभिषेक के संवत्		शिलालेखों से ज्ञात संवत्	ग्रंथकर्ता के मतानुसार गद्दी- नशीनी का संवत्
	क्रि.पू. संवत्	क्रि.पू. संवत्		
महारावल जगमाल	१५८५	१५८६	१५७५-१६०१	१५७५ के आस पास
” जयसिंह	१५९६	१५९६	...	वि० सं० १६०२ के आस पास
” प्रतापसिंह	१५९८	१५९८	१६०७-१६३६	” १६०६ के आस पास
” मानसिंह	१६३०	१६३०	...	” १६३७
” उग्रसेन	१६५०	१६४३	१६४६-१६७०	” १६४३
” उदयभाण	१६७०	१६७०	...	” १६७०
” समरसिंह	१६७५	१६७१	१६७१-१७०७	” १६७१
” कुशलसिंह	१७००	१७१७	१७१८-१७४३	” १७१७
” अजयसिंह	१७४४	१७४४	१७४८-१७५८	” १७४४
” भीमसिंह	१७६२	१७६२	१७६३	” १७६२
” विष्णुसिंह	१७६६	१७६६	१७७०-१७९३	” १७६६
” उदयसिंह	१७९३	१७९३	१७९४-१७९६	” १७९३
” पृथ्वीसिंह	१८०४	१८०३	१८०३-१८४०	” १८०३
” विजयसिंह	१८४२	१८४२	१८४५-१८७२	” १८४२
” उम्मेदसिंह	१८७२	...	१८७४-१८७५	” १८७२
” भवानीसिंह	१८७६	...	१८७७-१८९५	” १८७६
” बहादुरसिंह	१८९५	” १८९५
” लक्ष्मणसिंह	१९००	” १९००
” शंभुसिंह	” १९६२
” पृथ्वीसिंहजी दूसरे (विद्यमान)	” १९७०

परिशिष्ट-संख्या ४

बांसवाड़ा राज्य के इतिहास का कालक्रम

महारावल जगमाल से जयसिंह तक

वि० सं० ई० सं०

- (१५७५) (१५१८) महारावल उदयसिंह का वागड़ का आधा राज्य (बांस-
वाड़ा) अपने दूसरे पुत्र जगमाल को देना ।
- १५७५ १५१८ सुन्नणपुर का महारावल उदयसिंह और महा(राज)-
कुंवर जगमाल का शिलालेख ।
- १५७७ १५२० चोंच गांव का महारावल जगमाल का शिलालेख ।
- १५७७ १५२० जगमाल का गुजरात की सेना से युद्ध करना ।
- १५८४ १५२७ जगमाल का खानवे के युद्ध में घायल होना ।
- (१५८४) (१५२७) पृथ्वीराज का बांसवाड़े पर अधिकार करना ।
- १५८७ १५३० गुजरात के सुलतान बहादुरशाह का वागड़ में आकर
जगमाल को आधा राज्य दिलाना ।
- (१५९७) (१५४०) जगमाल का चित्तोड़ से बणबीर को निकालने में महा-
राणा उदयसिंह का साथ देना ।
- (१६०२) (१५४५) जगमाल का देहांत ।
- (१६०२) (१५४५) जयसिंह का गद्दी बैठना ।

महारावल प्रतापसिंह

- (१६०६) (१५४६) प्रतापसिंह की गद्दीनशीनी ।
- १६१३ १५५७ हाजीबों की सहायतार्थ महाराणा उदयसिंह के साथ
प्रतापसिंह का जाना ।

(१) () इस चिह्न में उल्लिखित संवत् आनुमानिक हैं ।

वि० सं० ई० स०

१६३४ १५७७ प्रतापसिंह का बादशाह अकबर की सेवामें उपस्थित होना ।

१६३५ १५७८ महाराणा प्रतापसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।

(१६३५) (१५७८) राव चंद्रसेन का बांसवाड़े में जाकर रहना ।

(१६३७) (१५८०) प्रतापसिंह का देहांत ।

महारावल मानसिंह

(१६३७) (१५८०) मानसिंह की गद्दीनशीनी ।

१६४० १५८३ मानसिंह का देहांत ।

महारावल उग्रसेन

(१६४३) (१५८६) उग्रसेन का गद्दी बैठना ।

१६५८ १६०१ उग्रसेन का चौहान मान को मरवाना ।

१६६० १६०३ बांसवाड़े पर शाही सेना का आना ।

१६६५ १६०८ डूंगरपुर के स्वामी कर्मसिंह से युद्ध ।

१६७० १६१३ उग्रसेन का देहांत ।

महारावल उदयभाण

१६७० १६१३ उदयभाण की गद्दीनशीनी ।

१६७१ १६१४ उदयभाण का देहांत ।

महारावल समरसिंह

१६७१ १६१४ समरसिंह का गद्दी बैठना ।

१६७२ १६१५ बांसवाड़े का फ़रमान मेवाड़ के कुंवर कर्णसिंह के नाम होना ।

१६७४ १६१७ समरसिंह का बादशाह जहांगीर के पास मंडा जाना ।

वि० सं० ई० स०

- १६८४ १६२७ बादशाह शाहजहाँ का समरसिंह को मनसब देना ।
 १६६२ १६३५ महाराणा जगतसिंह (प्रथम) का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।
 (१७००) (१६४३) बांसवाड़े का मेवाड़ से अलग होना ।
 १७१५ १६५८ बादशाह औरंगज़ेब का बांसवाड़े का फ़रमान महाराणा राजसिंह के नाम करना ।
 १७१६ १६५६ महाराणा राजसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।
 १७१७ १६६० महारावल का देहांत ।

महारावल कुशलसिंह

- १७१७ १६६० महारावल की गर्दीनशीनी ।
 १७३० १६७४ महाराणा राजसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।
 (१७३५) (१६७८) बांसवाड़े का फ़रमान महारावल कुशलसिंह के नाम होना ।
 १७३३ १६८६ मेवाड़ के महाराणा जयसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।
 १७४४ १६८८ महारावल का देहांत ।

महारावल अजयसिंह

- १७४४ १६८८ महारावल का राज्याभिषेक ।
 १७४८ १६९१ महाराणा जयसिंह का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।
 १७५५ १६९८ महाराणा अमरसिंह (दूसरा) का बांसवाड़े पर सेना भेजना ।
 १७५६ १७०२ डांगल ज़िले के २७ गांवों पर, जो महाराणा राजसिंह ने ज़ब्त किये थे, किसी तरह का दखल न देने के लिए अजयसिंह के नाम वज़ीर असदुल्ला का पत्र ।

वि० सं० ई० स०

१७६२ १७०६ महारावल का देहांत ।

महारावल भीमसिंह

१७६२ १७०६ भीमसिंह की गद्दीनशीनी ।

१७६६ १७१२ भीमसिंह का देहांत ।

महारावल विष्णुसिंह

१७६६ १७१२ विष्णुसिंह का राज्याभिषेक ।

१७७४ १७१७ मेवाड़ के मन्त्री बिहारीदास का सेना लेकर बांसवाड़े जाना ।

१७८५ १७२८ बांसवाड़ा राज्य से खिराज वसूली का अधिकार पेशवा-
द्वारा मल्हारराव होल्कर व ऊदाजी पंवार को दिया
जाना ।

१७८५ १७२८ मरहटा सेनापति राघोजी कदमराव और सवाई काटसिंह
कदमराव का आकर बांसवाड़े में लूटमार करना ।

१७८७ १७३० महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) का बांसवाड़े पर सेना
भेजना ।

१७८७ १७३० महारावल का अपनी बहिन का विवाह बूंदी के पद-
च्युत राव बुधसिंह से करना ।

१७६३ १७३७ महारावल का देहांत ।

महारावल उदयसिंह

१७६३ १७३७ उदयसिंह की गद्दीनशीनी ।

१७६८ १७४१ मरहटी सेना का बांसवाड़ा राज्य में आना ।

१८०३ १७८६ उदयसिंह का देहावसान ।

वि० सं० ई० सं०

महारावल पृथ्वीसिंह (प्रथम)

- १८०३ १७४६ पृथ्वीसिंह का राज्याभिषेक ।
 (१८०३) (१७४६) धार के स्वामी आनन्दराव का बांसवाड़े में आकर धन लेना ।
 १८०४ १७४७ महारावल का साहू राजा से सतारे जाकर मिलना ।
 १८०५ १७४९ धार के स्वामी के उपद्रवों की जांच के लिए पेशवा का मेघश्याम बापूजी को भेजना ।
 १८०७ १७५० पृथ्वीसिंह का सतारे से लौटना ।
 १८१३ १७५६ लूणावाड़ा के राणा शक्तिसिंह से युद्ध ।
 १८४२ १७८६ महारावल का परलोकवास ।

महारावल विजयसिंह

- १८४२ १७४६ विजयसिंह की गद्दीनशीनी ।
 १८५० १७९४ मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह की बांसवाड़े पर चढ़ाई ।
 १८५५ १७९८ महाराणा भीमसिंह की बांसवाड़े पर दूसरी बार चढ़ाई ।
 १८५७ १८०० धार के स्वामी आनन्दराव (दूसरा) की बांसवाड़े पर चढ़ाई ।
 १८६२ १८०५ बांसवाड़े में मेवाड़ की सेना का आना ।
 १८६६ १८१२ विजयसिंह का अंग्रेज़ सरकार की संरक्षणता में जाने का प्रस्ताव करना ।
 १८७० १८१४ खुदादादखां सिंधी से युद्ध होना ।
 १८७२ १८१५ होल्कर के सेनापति रामदीन का उपद्रव ।
 १८७२ १८१६ महारावल का परलोकवास ।

वि० सं० ई० सं०

महारावल उम्मेदसिंह

- १८७२ १८१६ महारावल की गद्दीनशीनी ।
 १८७४ १८१७ करीमख़ां पिंडारी का बांसवाड़े में आना ।
 १८७५ १८१८ महारावल की अंग्रेज़ सरकार से संधि होना ।
 १८७६ १८१९ महारावल का देहांत ।

महारावल भवानीसिंह

- १८७६ १८१९ महारावल की गद्दीनशीनी ।
 १८७६ १८२० अंग्रेज़ सरकार से चढ़े हुए ख़िराज आदि का अहद-
 नामा होना ।
 १८७६ १८२३ ख़िराज के सम्बन्ध का दूसरा अहदनामा होना ।
 १८८० १८२४ सेना व्यय के ८४०० रुपये देने का इक़रार होना ।
 १८८६ १८२६ पोलिटिकल एजेंट का शासन कार्य में दख़ल देना ।
 १८९३ १८३६ महारावल का शासन कार्य व्यवस्थित रूप से चलाने का
 इक़रार करना ।
 १८९५ १८३८ महारावल की मृत्यु ।

महारावल बहादुरसिंह

- १८९५ १८३८ महारावल की गद्दीनशीनी ।
 १९०० १८४४ महारावल का देहांत ।

महारावल लक्ष्मणसिंह

- १८९६ १८३९ लक्ष्मणसिंह का जन्म ।
 १९०० १८४४ लक्ष्मणसिंह की गद्दीनशीनी ।
 १९१३ १८५६ राज्याधिकार सौंपा जाना ।
 १९१५ १८५९ बाघीदल का बांसवाड़े में आना ।

वि० सं० ई० स०

- १६१८ १८६२ बांसवाड़ा राज्य को गोद लेने की सनद मिलना ।
 १६२१ १८६४ बेणेश्वर के मंदिर का फ़ैसला होना ।
 १६२५ १८६८ अपराधियों के लेन देन का मुआहदा होना ।
 १६२६ १८६६ कुशलगढ़ के बारे में अंग्रेज़ सरकार से फ़ैसला होना ।
 १६२६ १८६६ बांसवाड़े में असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट की नियुक्ति ।
 १६२८ १८७१ गुढे के ठाकुर हिम्मतसिंह का बांसवाड़े की सेना से मुकाबला होना ।
 १६३३ १८७७ दिल्ली दरबार के उपलक्ष में भंडा आना ।
 १६५६ १८८६ महारावल का शासन कार्य से पृथक् होना ।
 १६६० १९०३ महारावल के दूसरे कुंवर सूर्यसिंह का देहांत ।
 १६६२ १९०५ महारावल का परलोकवास ।

महारावल शंभुसिंह

- १६२५ १८६८ शंभुसिंह का जन्म ।
 १६६२ १९०५ शंभुसिंह का राज्याभिषेक ।
 १६६२ १९०५ महाराजकुमार पृथ्वीसिंह का विवाह ।
 १६६२ १९०६ शंभुसिंह को राज्याधिकार मिलना ।
 १६६५ १९०८ शंभुसिंह का राजकार्य छोड़ना ।
 १६७० १९१३ शंभुसिंह का देहांत ।

महारावल सर पृथ्वीसिंहजी

- १६४५ १८८८ महारावल का जन्म ।
 १६६५ १९०८ शासन कार्य में अनुभव प्राप्ति के लिए अवसर मिलना ।
 १६६६ १९०६ युवराज चंद्रवीरसिंह का जन्म ।
 १६६८ १९११ राजकुमार अवस्था में दिल्ली दरबार में जाना ।
 १६७० १९१३ मानगढ़ की पहाड़ी पर भीलों का उपद्रव ।

वि० सं० ई० स०

- १६७० १६१४ महारावल का गद्दी बैठना ।
 १६७० १६१४ राज्याधिकार मिलना ।
 १६७३ १६१७ महारावल का तीसरा विवाह होना ।
 १६७८ १६२१ महाराजकुमार नृपतिसिंह का जन्म ।
 १६८४ १६२८ ज्येष्ठ राजकुमारी अंबाकुंवरी का विवाह ।
 १६८५ १६२८ महारावल का लगान की बाकी रकम में से एक लाख रुपये माफ़ करना ।
 १६८८ १६३२ राजकुमारी कोमलकुमारी का विवाह ।
 १६८६ १६३३ महारावलजी को के० सी० आई० ई० का खिताब मिलना ।

परिशिष्ट-संख्या ५

बांसवाड़ा राज्य के इतिहास के प्रणयन में जिन-जिन
पुस्तकों से सहायता ली गई उनकी सूची

संस्कृत और प्राकृत

संस्कृत—

अमरकाव्य ।

अमरसिंहाभिषेककाव्य ।

जैनलेखसंग्रह (पूर्णचंद्र नाहर) ।

ब्राह्मणभाग (अग्निरहस्यकांड) ।

„ (एकपादकाव्यकांड) ।

मत्स्यपुराण ।

राजप्रशस्तिमहाकाव्य (रणछोड़ भट्ट) ।

हरिभूषणमहाकाव्य (गंगाराम) ।

प्राकृत—

पाइअलच्छीनाममाला (धनपाल) ।

हिन्दी, डिंगल, मराठी, गुजराती, उर्दू, फ़ारसी आदि

हिन्दी—

अकबरनामा (मुंशी देवीप्रसाद) ।

इतिहास राजस्थान (चारण रामनाथ रत्नू) ।

पेतिहासिक बातें (कविराजा बांकीदास) ।

गढ़ी ठिकाने की ख्यात ।

जहांगीरनामा (मुंशी देवीप्रसाद) ।

जोधपुर राज्य की ख्यात ।

झुंमरपुर राज्य के राणीमंगे की ख्यात ।
 दयालदास की ख्यात ।
 बांसवाड़ा राज्य की एक पुरानी वंशावली ।
 बांसवाड़ा राज्य के बड़वे की ख्यात ।
 महाराणा उदयसिंहजी का जीवन चरित्र (मुंशी देवीप्रसाद) ।
 मुंहणोत नैणसी की ख्यात ।
 राजपूताने का इतिहास (गौरीशंकर हीराचंद ओझा) ।
 राव कल्याणमलजी का जीवन चरित्र (मुंशी देवीप्रसाद) ।
 वीरविनोद (कविराजा श्यामलदास) ।
 शाहजहानांमा (मुंशी देवीप्रसाद) ।
 सिरोही राज्य का इतिहास (गौरीशंकर हीराचंद ओझा) ।

डिंगल—

भीमविलास (कृष्ण कवि) ।
 राजविलास (मान कवि) ।
 वंशभास्कर (मिश्रण सूर्यमल्ल) ।

मराठी—

धारच्या पंवारा चे महत्त्व व दर्जा (लेले व ओक) ।
 सिलेकशन्स फ्रॉम दि सतारा राजाज़ एण्ड दि पेशवाज़ डायरीज़ ।

गुजराती—

गुजरात राजस्थान (कालीदास देवशंकर पंड्या) ।
 लूणावाड़े की ख्यात ।

फ़ारसी, उर्दू—

अकबरनामा (अबुलफज़ल) ।
 तबक्काते अकबरी ।
 तारीख़े अलफ़ी ।
 मिराते सिकंदरी ।
 चक्राये राजपूताना (मुंशी ज्वालासहाय) ।

अंग्रेजी ग्रंथ

- Aberigh-mackay, G. R.**—The Native Chiefs of India and their States (1877).
- Aitchison, C. U.**—Treaties, Engagements and Sanads.
- Annual Reports of the Rajputana Museum Ajmer.**
- Bayley**—History of Gujarat.
- Beveridge, A. S.**—The Babar-nama in English (Memoirs of Babar)
- Beveridge, H.**—Translation of Akbarnama.
- Briggs, John**—History of the Rise of the Mohammadan power in India (Translation of Tarikh-i-Ferishta).
- Campbell, J. M.**—Gazetteer of Bombay Presidency.
- Chiefs and Leading Families of Rajputana.**
- Elliot, Sir H. W.**—The History of India as told by its own Historians.
- Epigraphia Indica.**
- Erskine, K. D.**—Gazetteer of the Banswara State.
- Gazetteer of the Banswara State (1879) in Rajputana Gazetteer.**
- Hendley, Doctor T. H.**—The Rulers of India and the Chiefs of Rajputana.
- Indian Antiquary.**
- Journal of the Asiatic Society of Bengal.**
- Jwala Sahai**—The Loyal Rajputana.
- Malcolm, J.**—Memoirs of Central India.
- Markand N. Mehta and Mannu N. Mehta**—Hind Rajasthan.
- Memorandum on the Indian States.**
- Powlet**—Gazetteer of Bikaner.
- Rapson, E. J.**—Catalogue of the coins of the Andhra Dynasty, the Western Ksatrapas, the Traikutaka Dynasty and the Bodhi Dynasty.
- Rogers, A. and Beveridge, H.**—The Tuzuk-i-Jahangiri (Memoirs of Jahangir).
- Syed Nawab Ali and Seddon**—Mirat-i-Ahmadi Supplement, Translated from the Persian of Ali Mohammad Khan.
- The Ruling Princes, Chiefs and Leading Personages in Rajputana and Ajmer.**
- Showers**—A Missing Chapter in the Indian Mutiny.
- Vedi-velu, A.**—The Ruling Chiefs, Nobles, and Zamundars of India.

अनुक्रमणिका

(क) वैयक्तिक

अ

अकबर (बादशाह)—४५, ४८, ७६,
७८-८०, ८७-९०, ९३, २२३ ।

अखेकुंवरी (बांसवाड़े के महारावल अजब-
सिंह की पुत्री)—११६ ।

अखेरज (कुशलगढ़ का राठोड़ ठाकुर)
—१०७-१०८, २२९ ।

अखेरज (मादावत)—११५ ।

अगरसिंह (गढ़ी का चौहान ठाकुर)—
१२१, १२६-२९, २२४-२५ ।

अग्रसेन (देखो उग्रसेन) ।

अचलसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ ठाकुर)
—२२९ ।

अज्जदुलमुल्क (गुजरात का सरदार)—४३ ।

अजबसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—
१११-१५, १२९, २४० ।

अजबसिंह (भाला)—११५ ।

अजबसिंह (राठोड़)—११७ ।

अजयपाल (गुजरात का सोलंकी राजा)
—३८, ४२ ।

अजयवर्मा (भाला के परमार राजा)—
५७-८ ।

अजीतसिंह (जोधपुर का महाराजा)—
१०५, १२० ।

अजीतसिंह (बूरी का महाराज)—१३७ ।

अजीतसिंह (मोला का चौहान ठाकुर)
—२२१ ।

अनूपकुंवरी (महारावल कुशलसिंह की
तंवर राणी)—१०९, १११ ।

अनूपसिंह (ओरीवाड़े का राठोड़ ठाकुर)
—२३५ ।

अनूपकुंवरी (महारावल पृथ्वीसिंह की
राठोड़ राणी)—१३७ ।

अपराजित (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४०, ४१, २३७ ।

अतुलकृजल (ग्रंथकार)—८१ ।

अभयसिंह (जोधपुर का महाराजा)—
५६, १२० ।

अभयसिंह (सूरपुर का महाराज)—
१३७, २२० ।

अमरकुंवरी (बांसवाड़े के महारावल
अजबसिंह की पुत्री)—११६ ।

अमरजी (कोठारी)—१४७ ।

अमरसिंह (प्रथम, मेवाड़ का महाराजा)
—३०, ३२-३, ३६ ।

अमरसिंह (बांसवाड़े के महारावल कुशलसिंह का पुत्र) — १११ ।

अमरसिंह (दूसरा, मेवाड़ का महाराणा) — ११२-१३, ११६ ।

अमरसिंह (बांसवाड़े का सरदार) — ११७ ।

अमरसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ ठाकुर) — २२६ ।

अमरा (ब्राह्मण) — १३८ ।

अमृतपाल (गुहिलवंशी राजा) — ३८, ४२ ।

अरिमर्दनसिंह (चरखारी का बुंदेला राजा) — २१३ ।

अरिसिंह (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा) — ४१, २३८ ।

अर्जुनसिंह (गढ़ी का ठाकुर) — १२८, १४४, १६७, २२४, २२६ ।

अर्सकिन, के० डी० (मंथकार) — १, १२, ४२, १०८ ।

अलाउद्दीन खिलजी (सुलतान) — २३८ ।

अली बाहुरा (कोतवाल) — २३२ ।

अल्लट (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा) — ४१, २३७ ।

असदख़ां (औरंगज़ेब का वज़ीर) — ११३ ।

अहमदशाह (गुजरात का सुलतान) — ४२ ।

आ

आनन्दकुमारी (बांसवाड़े के महारावल पृथ्वीसिंहजी की राणी) — २०४ ।

आनन्दकुंवरी (बांसवाड़े के महारावल समरसिंह की राठोड़ राणी) — १०२, ११० ।

आनन्दराव (धार का पंवार राजा) — १३०, १४४ ।

आनन्दराव (दूसरा, धार का पंवार राजा) — १४४ ।

आनन्दसिंह (ईंदर का महाराजा) — १२०-२१ ।

आशाशाह देपुरा (माहेश्वरी महाजन) — ७१ ।

आसकरण (इंदरपुर का महारावल) — ७५-६, ७६-८०, १७२ ।

आसकरण (जोधपुर के राव चन्द्रसेन का पुत्र) — ८५-६ ।

आसकरण (राठोड़ वरसिंह का पुत्र) — २२६ ।

आस्थान (नाडोल का चौहान) — २२० ।

आसक़ुआं (खानेजहां, गुजरात का सरदार) — ६७ ।

आसक़ुआं (अकबर का सेनापति) — ७८ ।

इ

इन्द्रकुंवरी (महाराणा शंभुसिंह की राणी) — २२६ ।

इन्द्रभाण (महारावल जगमाल का रवसुर) — ४३, ४८ ।

इन्द्रसिंह (महारावल अजबसिंह का पुत्र) — ११६ ।

इर्विन (लॉर्ड, वाइसराय) — २०८ ।

ई

ईश्वरदत्त (महादत्तप) — २७, ३१ ।

ईसर (अर्थूणा का चौहान ठाकुर) — २२३ ।

ईसरदास (बांसवाड़े के महारावल अजबसिंह का पुत्र) — ११६ ।

उ

- उग्रसेन (अग्रसेन, बांसवाड़े का महारावल)
—२१, ८३, ११, २२२, २४०।
उत्तमचन्द्र पंढ्या (नागर)—१३८।
उद्धव व्यास (ब्राह्मण)—१०६-१०।
उदयकर्ण (चौहान)—६६।
उदयनारायणसिंह (राठोड़, कुशलगढ़ के
राव रणजीतसिंह का पुत्र)—
२३४।
उदयभाण (बांसवाड़े का महारावल)—
२१, ६१-२, २४०।
उदयराम (कुंवर)—१३६।
उदयवर्मा (परमार, महाकुमार)—५८।
उदयसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—
७२, १२२-२३, १२७-२८, १३०,
२२५, २४०।
उदयसिंह (मोटा राजा, जोधपुर का महा-
राजा)—७६-८०।
उदयसिंह (वागढ़ का राजा)—२२,
४३-५, ४७-८, ५०-५३, ५८-६४,
७०, ६३, २२१, २२३, २३६।
उदयसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—४८,
७०-१, ७४, ७६-७, ६३।
उदयसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राव)
—२३३।
उदयसिंह (डूंगरपुर के महारावल राम-
सिंह का पुत्र)—५७।
उदयसिंह (गढ़ी का चौहान ठाकुर)—
१२६-२७, १३३-१३६-४०, २२२,
२२४-२५।
उदयसिंह (चौहान)—१५०, १५५।

- उदयसिंह (लूणावाड़ा के राणा बल्लभसिंह
का चाचा)—१३४।
उदयसिंह (राठोड़)—१३६।
उदयसिंह (ठाकुरों का चौहान सरदार)
—२२७।
उदयादित्य (मालवे का परमार राजा)
—३७।
उमरखां (गुजरात का सरदार)—६७।
उम्मेदबाई—१४७।
उम्मेदसिंह (बांसवाड़े का महारावल)
—१०४, १४५-४७, १५०-५५,
१५७, १५६, १६८, २१७, २४०।
उम्मेदसिंह (नवागांव का चौहान ठाकुर)
—२२८।
उम्मेदसिंह (डूंगरपुर के महारावल राम-
सिंह का पुत्र)—५७।
उषवदात (शक सेनापति)—३१।

ऊ

- ऊदाजी (पंवार, धार राज्य का संस्थापक)
—११६, १३०।

ऋ

- ऋषभदास (कोठारी)—१५६।

ए

- एचिसन (ग्रंथकार)—१५१, १५४,
१५६, १६२-६३, १६५, १७५-७६,
१८१-८३, १६०, १६६-६७, १६९,
२०४।

एडवर्ड (सप्तम, भारतसम्राट्)—२१० ।

एडवर्ड (अष्टम, भूतपूर्व भारतसम्राट्)
—२०८ ।

एब्रीमेके, जी. आर. (ग्रंथकर्ता)—५६ ।

एडम्, जे०, (गवर्नर जनरल की कौंसिल
का मेम्बर)—१५४ ।

ओ

ऑक्टरलोनी (रेजिडेन्ट)—१६२ ।

ओक (ग्रंथकार)—१०८, ११६ ।

ओमा (कसारा)—१४७ ।

ओंकारसिंह (ओरीवाड़े का राठोड़ ठाकुर)
—१८४, २३५ ।

ओंकारसिंह (सेमलिया का सरदार)—
२३६ ।

औ

औठारिया (रावत, भील)—१६१ ।

औरंगज़ेब (मुग़ल बादशाह)—६८,
१०५-१०७, ११२, ११६, २२६ ।

अं

अंवाकुंवरी (बांसवाड़े के महारावल पृथ्वी-
सिंहजी की पुत्री)—२१२-१३ ।

अंबाप्रसाद (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४१, २३७ ।

क

कणजी (करणजी, चौहान)—११०

कनकेड (मेजर)—१६० ।

कनीराम (राठोड़)—१४६ ।

कन्ह (सेनापति)—१७, ३४ ।

कपूर (अर्थूणे का चौहान ठाकुर)—
२२३ ।

करमसी (मोलां का चौहान सरदार)—
२२१ ।

करीमखां (पिंडारी)—१४६-५०,
१५६ ।

कर्जन (लॉर्ड, बॉइसराय)—५२ ।

कर्जन वाहली (सर, कर्नल)—२१० ।

कर्ण (गुजरात का सोलंकी राजा)—
१५, ३७ ।

कर्णसिंह (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा
देखो रणसिंह) ।

कर्णसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—६२,
६४, ६७ ।

कर्मसिंह (वागड़ का गुहिलवंशी राजा),
—४२, ८६-९०, २३६ ।

कल्याणदास (जैसलमेर का महारावल)
—५५ ।

कल्याणमल (बांसवाड़े के महारावल जग-
माल का पौत्र)—७६, ८४, २२२ ।

कल्याणमल (बीकानेर का राठोड़ राजा)
—७७-८ ।

कल्याणसिंह (राठोड़)—१६७ ।

कल्याणसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़)—
२२६ ।

कल्याणसिंह (बांसवाड़े के महारावल
जगमाल का पौत्र)—८४-५ ।

कल्ला (ब्राह्मण)—२१ ।

काटसिंह (कदमराव, कंठा, सवाई)—
११६-२०, १२५ ।

- कादिर बोहरा (कुशलगढ़ का कामदार)
 —२३२ ।
 कांघल (सीसोदिया)—८४ ।
 कानइदे (देखो किशनसिंह) ।
 कान्ह (पंचोली, सहीवाला)—१२०,
 २२४ ।
 कान्हइदेव (चागढ़ का गुहिलवंशी राजा)
 —४२, २३६ ।
 कान्हसिंह (चौहान)—२२१ ।
 कार्नाइल (पुरातत्ववेत्ता)—४० ।
 कालभोज (बापा राजा, गुहिलवंशी राजा)
 —४१, २३७ ।
 कालीदास देवशंकर पंथ्या (ग्रंथकार)—
 १३२ ।
 किशनसिंह (कानइदे, बांसवाड़े के महा-
 राजा जगमाल का ज्येष्ठ पुत्र)—
 ७२, ७६, ८५, २२२-२४ ।
 किशोरसिंह (मोलां का चौहान सरदार)
 —२२१-२२ ।
 किशोरसिंह (बांसवाड़े के महाराज
 शंभुसिंह का पुत्र)—२०५-२०६ ।
 कीर्तिवर्मा (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
 —४१, २३८ ।
 कीर्तिसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राजा)—
 २२६ ।
 कीर्तिसिंह (महाराज कुशलसिंह का
 पुत्र)—१११ ।
 कीर्तिसिंह (राठोड़)—१२४ ।
 कुतुबजां (गुजरात का सरदार)—६७ ।
 कुंभकर्ण (कुंभा, मेवाड़ का महाराजा)
 —४२, ६३ ।
 कुमारपाद (गुजरात का सोलंकी राजा)
 —३८ ।
 कुमारसिंह (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
 —४१, २३८ ।
 कुरिसिंह (भूखिया का चौहान सरदार)
 —२३६ ।
 कुलचंद्र (परमार राजा भोज का मंत्री)
 —३६ ।
 कुशलसिंह (बांसवाड़े का महाराज)
 —१०२, १०४-१३, ११६, २४० ।
 कुशला (भील)—१०७ ।
 कृपाशंकर (भट्ट)—१३६ ।
 कृष्णकवि (महाकाव्य चारण)—१४१-४२ ।
 कृष्णदास (सीसोदिया खंगार का पुत्र)
 —८४ ।
 केशवदास (चौहान)—१२४ ।
 केशवा (जोशी, ब्राह्मण)—१०६ ।
 केशोदास (चोलीमाहेश्वर का राठोड़)—
 ८६, २२३ ।
 केशोदास (राठोड़)—१०० ।
 केशोदास (मोलां का चौहान सरदार)—
 २२१ ।
 केसरकुंवरी (महाराज शंभुसिंह की
 राणी)—२१५ ।
 केसरी (राठोड़)—१४० ।
 केसरीसिंह (सिरौही का महाराज)—२०४ ।
 केसरीसिंह (कोठारी, बांसवाड़े का दीवान)
 —१७०, १७३, १७७, २३१ ।
 केसरीसिंह (खांदू के महाराज मानसिंह
 का पुत्र)—२१८ ।
 केसरीसिंह (छांजा का चौहान ठाकुर)
 —२३६ ।
 केसरीसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राजा)—
 २२३ ।

केसरीसिंह (खेड़ा रोहानिया का चौहान ठाकुर) — २२८ ।

केसरीसिंह (कुवानिया का अहाड़ा ठाकुर) — २३६ ।

केसरीसिंह (बनकोड़े का चौहान सरदार) — १२१, २२४, २२७ ।

केसरीसिंह (बांसवाड़ा के महारावल समरसिंह का पुत्र) — १०२ ।

केसरीसिंह (राजपूत) — १६७ ।

कैनिंग (लॉर्ड, गवर्नर जनरल) — १७२ ।

कोमलकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वीसिंहजी दूसरे की पुत्री) — २१२-१३ ।

कॉलफील्ड (जेम्स, कप्तान) — १५१, १५३-५४ ।

कॉलविन (सर इलियट, एजेंट गवर्नर जनरल) — २०७, २१० ।

कंकदेव (परमार) — ३३ ।

केमसिंह (गुहिलवंशी राजा) — ४१, २३८ ।

रत्न

कीशराज (दधिवाड़िया चारण) — ७७ ।

खुदादादज़ा (सिंधी) — १४४-४५ ।

खुदाबंदज़ा (गुजरात का सरदार) — ६७ ।

खुमायसिंह (हूंगरपुर का महारावल) — ११३ ।

खुराहालसिंह (सूरपुर का महाराज) — १३६, १६८, २१७, २१६-२० ।

खुराहालसिंह (अर्थूणे का चौहान ठाकुर) — २२३ ।

खुमाय (गुहिलवंशी राजा) — ४१, २३७ ।

खुमाय (दूसरा, गुहिलवंशी राजा) — ४१, २३७ ।

खुमाय (तीसरा गुहिलवंशी राजा) — ४१, २३७ ।

खुमायसिंह (ठसिया का ठाकुर) — २१६ ।

खेतसी (राठोड़ बरसिंह का पुत्र) — ८८ ।

खोटिकदेव (राठोड़ राजा) — ३३ ।

खंगार (रत्नसिंह सीसोदिया का पुत्र) — ८४ ।

ग

गर्निंग (मेजर) — १८६ ।

गयासुद्दीन (मालवे का सुलतान) — ४३ ।

गांगा (गोड़) — ८७ ।

गांगा (भील) — १६६ ।

गिरधर (शक्कावत) — ६६ ।

गुमानकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल प्रतापसिंह की राठोड़ राणी) — ८२ ।

गुमानकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल भीमसिंह की पुत्री) — ११६, १२२ ।

गुमानसिंह (भुक्तिया का ठाकुर) — १६६-६७ ।

गुलाबकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल उम्मेदसिंह की पुत्री) — १५५ ।

गुलाबकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल भवानीसिंह की पुत्री) — १६६ ।

गुलाबसिंह (कुवानिया का ठाकुर) — १६७ ।

गुलाबसिंह (चंदूजी के गुदे का महा-राज) — २०५, २१५ ।

गुलाबसिंह (खांदू के महाराज मानसिंह का पुत्र)—२१८ ।

गुलाबसिंह (तलवाड़े का राठोड़ ठाकुर)—२३४ ।

गुलाबसिंह (अर्थूयो का चौहान ठाकुर)—१२७, २२३ ।

गुहिल (गुहिलवंश का मूल पुरुष)—४०, २३७ ।

गैपा (रावल, देखो गोपीनाथ) ।

गोपाल (पाठक)—१३२ ।

गोपीनाथ (गैपा रावल, वागड़ का स्वामी)—४२-३, ६३, २३६ ।

गोपीनाथ (चौहान)—२२१ ।

गोपीनाथ (राठोड़)—१२५, २३४ ।

गोपीनाथ (राठोड़)—४७ ।

गोरधनदास (बारहठ)—१३८ ।

गोविंदगिरि (साधु)—२०६ ।

गोविंददास (राठोड़)—८३ ।

गोविंददास (संढायच चारण)—१३६ ।

गंगदास (वागड़ का स्वामी)—२, १३, ४३, ६३, २३६ ।

गंगाकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल विजयसिंह की राणी)—१४६ ।

गंगाराम (कवि)—७५ ।

गंगासिंह (खांदू के कुंवर शंकरसिंह का पुत्र)—२१६ ।

गंभीरसिंह (गढ़ी के ठाकुर का कुटुम्बी)—१३३, २२५ ।

गंभीरसिंह (गढ़ी का चौहान राय)—१६६-६७, २२४, २२६-२७ ।

गंभीरसिंह (राठोड़)—१५० ।

गंभीरसिंह (बीड़ावाड़े का चौहान ठाकुर)—२३६ ।

घ

वसामोतिक (चन्नप)—३१ ।

च

चख (वागड़ का परमार राजा)—६२ ।

चष्टन (महात्तत्रप)—३१ ।

चाचिगदेव (जैसलमेर का रावल)—५५ ।

चाचिणीदेवी (सोलंकी चामुंडराज की बहन)—३६ ।

चामुंडराज (वागड़ का परमार राजा)—१८, २०, २२, ३४ ।

चामुंडराज (गुजरात का सोलंकी राजा)—३६ ।

चार्ल्स गेट (असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्ट)—१६२ ।

चांदकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वीसिंह प्रथम की पुत्री)—१३६ ।

चांपा (राठोड़)—८३ ।

चांपा (हुंबड़)—२२ ।

चिमनलाल कोठारी (बांसवाड़े का मंत्री)—१८७, १८६ ।

चूंडा (रावल)—८४ ।

चेम्सफोर्ड (लॉर्ड, वाइसरॉय)—२०८ ।

चैनकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल अजयसिंह की पुत्री)—११६ ।

चोड़सिंह (गुहिलवंशी राजा)—४१, २३८ ।

चौरसीमल (वागड़ का सरदार)—४२ ।

चंद्रप (वागड़ का परमार राजा)—३३ ।

चंदनसिंह (बसई का चौहान सरदार)

—१२८-२६, २२४-२५ ।

चंदनसिंह (बांसवाड़ा के महारावल उम्मेद-
सिंह का पुत्र)—१५५ ।

चंदनसिंह (कुवाणियावालों का पूर्वज)
—८४ ।

चंद्रगुप्त (दूसरा, गुप्तवंशी राजा)—३० ।

चंद्रभान (मुन्शी)—६७ ।

चंदवीरसिंह (बांसवाड़ा के महारावल
पृथ्वीसिंहजी का पुत्र)—२०६,
२०६, २१२ ।

चंद्रसेन (मारवाड़ का राठोड़ राव)—
७६-८०, ८५ ।

छ

छत्रसिंह (बांसवाड़ा के महारावल शंभुसिंह
का पुत्र)—२०५, २१६ ।

छत्रसिंह (राठोड़)—२३३ ।

ज

जगतसिंह (महाराणा कर्णसिंह का पुत्र)
—६४-८, १०३, १०६, २२४ ।

जगतसिंह (दूसरा, मेवाड़ का महाराणा)
—१२६ ।

जगमाळ (जग्गा, बांसवाड़ा राज्य का
संस्थापक)—१, १२-४, २०-१,
४३-५४, ५८-७४, ७६, ८४,
२२१-२४, २३६-४० ।

जगमाळ (राठोड़)—८३ ।

जगप्रसाद (मालवे का सेनापति)—४३ ।

जयतसिंह (वागड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४२, २३६ ।

जयतसिंह (जैसलमेर का रावल)—५५ ।

जयद्रामा (जयप)—३१ ।

जयमल (मेवाड़ का राठोड़)—८८ ।

जयवर्मा (मालवे का परमार राजा)
—५७, ५६ ।

जयशंकर (खवास)—१४७ ।

जयसिंह (सिद्धराज, गुजरात का सोलंकी
राजा)—१५, ३५, ३७-८ ।

जयसिंह (मालवे का परमार राजा)—
१७, ३४ ।

जयसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—
७१, ७२, ७४, ७६, २४० ।

जयसिंह (जयपुर का कछवाहा महाराजा)
—१२० ।

जयसिंह (परमार)—१४८ ।

जयसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—
१११-१३, २२१ ।

जयसिंहदेव (देखो विजयसिंहदेव) ।

जसकरणा (अर्थूणा का चौहान ठाकुर)—
२२३-२४ ।

जसवंत (मोलों का चौहान सरदार)—
२२१ ।

जसवंतराव (धार का पंवार राजा)—
१३०-३२, १४० ।

जसवंतसिंह (डूंगरपुर का महारावल)—
१०६-७ ।

जसवंतसिंह (दूसरा, डूंगरपुर का महा-
रावल)—१४४-४५, २२६ ।

जसवंतसिंह (दांता का परमार राणा)—
२१२ ।

जसवंतसिंह (खांदू के महाराज फ़तहसिंह
का पुत्र)—२१८ ।

जसवंतसिंह (गढ़ी का चौहान राव)—
२२४, २२६ ।

जसवंतसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राव)
—२२६ ।

जसवंतसिंह (कुशलगढ़ के राठोड़ राव
जोरावरसिंह का पुत्र)—२३३ ।

जसवंतसिंह (सीसोदिया, कुशलपुरे का
ठाकुर)—२३५ ।

जहांगीर (सलीम, बादशाह)—६०,
६२-४, ६६, १०० ।

जाजराय (मेवाड़ के महाराणा रत्नसिंह
का वकील)—६७ ।

जगन्निमसिंह (उगमणिया का राठोड़
ठाकुर)—१४७ ।

जगन्निमसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राव)
—२२६ ।

जांबुवती (मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह
की माता)—६७ ।

जीजा (भील)—१६६ ।

जीवणा (बारठ)—१४० ।

जीवदामा (महाक्षत्रप, महाक्षत्रप दामधस
का पुत्र)—३१ ।

जैतमाल (राठोड़)—८३ ।

जैतसिंह (बांसवाड़ा के महारावल विष्णु-
सिंह का पुत्र)—१२३ ।

जैतसिंह (राठोड़)—१२४ ।

जैतसी (बीकानेर का स्वामी)—७८ ।

जैसा (राठोड़)—८३ ।

जैत्रसिंह (मेवाड़ का महारावल)—२३८ ।

जोधसिंह (हूँडरिया राठोड़)—६६ ।

जोधसिंह (गढ़ी का चौहान ठाकुर)—
१४१, २२४-२६ ।

जोध (जोधपुर का राठोड़ राव)—८६,
८८, २२८ ।

जोरावरसिंह (कुंडला का ठाकुर)—
१६६-६७ ।

जोरावरसिंह (खांदू के महाराज मानसिंह
का पुत्र)—२१८ ।

जोरावरसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राव)
—२३१, २३३ ।

जोरावरसिंह (मेढ़तिया राठोड़)—२३४ ।
जॉर्ज (पंचम, सम्राट्)—२०६, २२३ ।

झ

झूमा (सीसोदिया)—१२५ ।

ट

टैवर (कर्नल)—५१ ।

ठ

ठाकुरसी (कल्लावत, राठोड़)—८८,
२२३ ।

ड

डफरिन् (गवर्नर जनरल)—१८२ ।

डलहौज़ी (लॉर्ड)—१७१ ।

ड्यूरेड (एच० एम०, गवर्नमेंट ऑफ़
इंडिया का फ़ॉरेन सेक्रेटरी)—१८२ ।

डूंगरसिंह (वागड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४२, २३६ ।

डूंगरसी (वागड़ का चौहान)—८२,
२२०-२१, २२३ ।

डूंगरसी (मेवाड़ के महाराणा रत्नसिंह का
वकील)—६७ ।

बॉइसवेल (गवर्नमेंट की कौंसिल का मेंबर)
—१५४।

बंजरसिंह (वागड़ का परमार राजा)
—३२।

त

तद्वतराम (गुरु)—१२६।

तद्वतसिंह (बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वी-
सिंह प्रथम का पुत्र)—१३६, २१६।

तांतियाटोपी (शहर के समय का प्रसिद्ध
विद्रोही)—१७०-७१।

तेजसिंह (मेवाड़ का महारावल)—२३८।

थ

थिओक्रिलस मेटकॉफ (अंग्रेज़ सरकार का
प्रतिनिधि)—१५१।

द

दक्षमित्रा (शक उपवदात की स्त्री)—३१।

दयालदास (ग्रंथकार)—७७।

दलता जोशी (ब्राह्मण)—१२६।

दलपत (सोलंकी)—६६।

दलपतराय (ईंडर का राजा)—६८।

दलपतसिंह (नवागांव का चौहान ठाकुर)
—२२८।

दलपतसिंह (कुशलपुरे का सीसोदिया
ठाकुर)—२३५।

दल्ला (रावत, भीलों का मुखिया)—
१८८-८९।

दलसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ ठाकुर)
—२२६।

दामभसद (दामजदभी, महाचत्रप)—३१।

दामजदभी (दूसरा, महाचत्रप)—२८,
३१।

दामजदभी (चत्रप)—२८, ३१।

दामसेन (महाचत्रप)—२८, ३१।

दाराशिकोह (बादशाह शाहजहाँ का शाह-
ज़ादा)—६८।

दिविजयसिंह (सागरोद का महाराज)
—२१७।

दीनीक (शक)—३१।

दीपसिंह (बांसवाड़ा के महारावल उम्मेद-
सिंह का पुत्र)—१५५।

दीपसिंह (कुवाणिय. का सरदार)—१६७।

दीपसिंह (कुशलगढ़ के राव जोरावरसिंह
का पुत्र)—२३३।

दुर्गानारायणसिंह (खेदारीहानिया का
चौहान सरदार)—२२८।

दुर्लभराज (गुजरात का सोलंकी राजा)
—३६।

दुर्जनसाल (घाणेरवाव का राठोड़ ठाकुर)
—६६।

दुर्जनसिंह (ठाकरके का सरदार)—२२६।

दुलहसिंह (कुंवर)—१३६।

दूदा (राव जोधा का पुत्र)—२२८, २२६।

दूलहसिंह (गांवड़ा का ठाकुर)—१६६-६७।

देदू (देखो देवपालदेव)।

देवकर्ण (जैसलमेर का महारावल)—५५।

देवकृष्ण (भट्ट)—१४०।

देवदत्त (ब्राह्मण)—२१।

देवदत्त (भट्ट)—१४०।

देवपालदेव (देदू, वागड़ का गुहिलवंशी
राजा)—४२, २३६।

देवा (भील)—१६१।

- देवीदास (सोलंकी)—२१ ।
 देवीदास (ब्राह्मण)—१०१ ।
 देवीप्रसाद (मुंशी, ग्रंथकार)—७७,
 ८८, ६२ ।
 देवीसिंह (सीसोदिया)—१४८ ।
 देवीसिंह (कुशलगढ़ के राव रणजीतसिंह
 का पुत्र)—२३४ ।
 दोला (कसारा)—१४७ ।
 दोलिया (भट्ट)—१४७ ।
 दौलतकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल
 पृथ्वीसिंह प्रथम की राखी)—१३७ ।
 दौलतराव (सिंधिया)—१४३ ।
 दौलतसिंह (मोलां का चौहान सरदार)—
 १३७, २२१ ।
 दौलतसिंह (झोरीबाके का राठोड़ ठाकुर)
 —१८४, २३५ ।
 दौलतसिंह (ईंदर का महाराजा)—२१२ ।
 दौलतसिंह (अर्थुणा का चौहान ठाकुर)
 —२२३ ।

ध

- धन्ना (चौहान)—१२५ ।
 धनिक (वागड़ का परमार राजा)—
 १७-३२ ।
 धरणीवराह (आबू का परमार राजा)
 —३६ ।
 धांधड़ा भारता (चारण)—१४७ ।
 धोमण (डोलिया)—११४ ।

न

- नगराज (धायभाई)—१२०, २२४ ।

- नरवर्मा (मालवे का परमार राजा)—
 १५, ३५, ३७ ।
 नरवर्मा (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
 —४१, २३८ ।
 नरवाहन (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
 —४१, २३७ ।
 नरसिंह (भट्ट)—१४० ।
 नवाबअली (ग्रंथकार)—१०५, ११८ ।
 नहपान (चतुर्प)—३१ ।
 नाग (गुहिलवंशी राजा)—४०, २३७ ।
 नागराज (गुजरात का सोलंकी)—३६ ।
 नाथजी (राठोड़)—१३८ ।
 नाथजी (गुरु)—१४७ ।
 नाथजी (कोठारी)—१४७ ।
 नानक (सोलंकी)—२१ ।
 नारायणदास (ईंदर का स्वामी)—७८ ।
 नारू (चौहान)—१०५, ११० ।
 नासिरखां (गुजरात का सुलतान)—४३ ।
 नासिरुलमुल्क (देखो पीरमुहम्मद सरवान्नी) ।
 नाहरसिंह (बेदला का राव)—२०५ ।
 नाहरसिंह (तंवर)—१५०, १५६ ।
 निक्सन (कर्नल, मेवाड़ का पोलिटिकल
 एजेंट)—११, १७४, २३० ।
 निज़ामखां (पठान)—१४० ।
 निज़ामुलमुल्क (मलिक हुसेन बहमनी,
 गुजरात का सरदार)—४३, २२० ।
 नृपतिसिंह (बांसवाड़ा के महारावल
 पृथ्वी-
 सिंहजी दूसरे का पुत्र)—२४,
 २१२ ।
 नैयासी (मुंहणोत, ग्रन्थकार)—६४, ७२,
 ७७, ८२, ८४-५, ८७-६ ।

प	
परसिंह (मेवाड़ का महारावल) — २३८ ।	पृथ्वीराज (पृथ्वीसिंह, इंदूरपुर का महा- रावल) — १४, ४४-७, ४६, ५१, ५३, ५८-७०, ७२, २२१, २२३, २३६ ।
परसिंह (बांसवाड़ा के महारावल भीम- सिंह का पुत्र) — ११७ ।	पृथ्वीराज (जैतावत, मालदेव का सरदार) — ७६, ७८ ।
परसिंह (अर्थूया का चौहान ठाकुर) — २२३ ।	पृथ्वीसिंह (पहला, बांसवाड़े का महा- रावल) — ७२, १२३, १३०, १३१, १३४-३७, १३६-४१, १४७, १६८, २१६, २२१-२२२, २२५, २४० ।
परमा (खवास) — ८२ ।	पृथ्वीसिंह (कानोड़ का रावल) — १२७ ।
पन्ना (भाय) — ७० ।	पृथ्वीसिंहजी (दूसरा, बांसवाड़ा के वर्त- मान महारावल) — १५७, २०४-५, २१२, २१५-१७, २४० ।
पन्नाकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल उदय- सिंह की राणी) — ४५ ।	पृथ्वीसिंह (अर्थूया का चौहान ठाकुर) — २२३-२४ ।
परबत (चौहान) — १२५ ।	पृथ्वीसेन (चतुर्प) — ३१ ।
परबतसिंह (राठोड़) — ४७, ६४-६ ।	पेमा (राठोड़ मनोहरदास का पुत्र) — १०० ।
परबतसिंह (श्रीवाड़े का राठोड़ ठाकुर) — १८४ ।	प्रतापसिंह (पाता रावल, वागड़ का गुहिल- वंशी राजा) — ४२, २३६ ।
परसा (बनकोड़े का चौहान ठाकुर) — २२४ ।	प्रतापसिंह (मेवाड़ का महाराणा) — ७८-६, ८४, ६३, २२२ ।
पाउलेट (कर्नल, ग्रंथकार) — ७७ ।	प्रतापसिंह (बांसवाड़े का महारावल) — ७४-७, ७६-८२, २४० ।
पाता रावल (देखो वागड़ का गुहिल- वंशी प्रतापसिंह) ।	प्रतापसिंह (रावल खंगार का पुत्र) — ८४ ।
पिन्हे (ए० एफ०, बांसवाड़े का असि- स्टेंट पोलिटिकल एजेंट) — १८२ ।	प्रतापसिंह (श्रीवाड़े का राठोड़ ठाकुर) — १८४ ।
पीरमुहम्मद सरवानी (नासिरुलमुल्क, सेनापति) — ७६ ।	प्रतापसिंह (देवदान का ठाकुर) — १६६- ६७ ।
पुंजराज (इंदूरपुर का महारावल) — ८६ ।	
पूजा (जोशी) — १०६ ।	
पूजा (वाघेला) — १२४ ।	
पृथ्वीराज (मेवाड़ के महाराणा रायमल का कुंवर) — ७० ।	

प्रतापसिंह (मोलां का चौहान सरदार)
—२२१-२२ ।

प्रतापसिंह (बांसवाड़ा के महारावल शंभू-
सिंह का पुत्र)—२०५ ।

प्रतापसिंह (अर्थूणा का चौहान सरदार)
—२२३ ।

प्रतापसिंह (मांडव का चौहान ठाकुर)
—२२७ ।

प्रतापसिंह (गोपीनाथ के गुदे का राठोड़
ठाकुर)—२३५ ।

प्रभाकरणा (पंचोली, नागर ब्राह्मण)—
१४८ ।

प्रेमकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल समर-
सिंह की परमार राणी)—१०२ ।

प्रेमा (पटेल)—१३६ ।

फ

फ़तहज़ां (गुजरात का सरदार)—६७ ।

फ़तहचंद (कायस्थ, मेवाड़ के महाराणा
राजसिंह का प्रधान)—६५, ६६ ।

फ़तहसिंह (कुंवर)—५६ ।

फ़तहसिंह (खांदू का महाराज)—१६६
—६७, २१७-१८ ।

फ़तहसिंह (अर्थूणा का चौहान ठाकुर)
—२२३ ।

फ़तहसिंह (बनकोड़ा के चौहान ठाकुर
केसरीसिंह का पुत्र)—२२७ ।

फ़तेकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल उम्मेद-
सिंह की पुत्री)—१५५ ।

फ़तेहबाई (खवास जयशंकर की पुत्री)
—१४७ ।

फ़र्रुख़सीयर (बादशाह)—११७ ।

फ़ीरोज़ (विद्रोही)—१७१ ।

फ़ौमजी भीकाजी (पारसी, पोलिटिकल
एजेंट का असिस्टेंट)—१७८, १८३,
१६२ ।

ब

बल्लतकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल
पृथ्वीसिंह प्रथम की पुत्री)—१३६ ।

बल्लतराम (गुरु)—१२६ ।

बल्लतसिंह (खूणावाड़े का राणा)—
१३४-१३५ ।

बल्लतसिंह (खांदू का महाराज)—१३६,
१६८, २१७, २१६ ।

बल्लतसिंह (झुंगरपुर के महारावल रामसिंह
का पुत्र)—५६-७ ।

बल्लतसिंह (बांसवाड़ा के महारावल भीम-
सिंह का पुत्र)—११६ ।

बल्लतसिंह (मेड़तिया राठोड़)—११६ ।

बल्लतसिंह (जोधपुर के महाराजा अभय-
सिंह का छोटा भाई)—१२० ।

बल्लता (मेड़तिया गोपीनाथ का पुत्र)—१२५ ।

बल्लतावरसिंह (बांसवाड़ा के महारावल
पृथ्वीसिंह प्रथम का पुत्र)—१३६,
१६८, २१७, २१६-२० ।

बल्लतावरसिंह (तलवाड़े का ठाकुर)
—१६६-६७ ।

बल्लतावरसिंह (गोपीनाथ के गुदे का राठोड़
ठाकुर)—२३४-३५ ।

बदनसिंह (सूथ के राणा रत्नसिंह का
चौथा पुत्र)—१३३ ।

बदनसिंह (बारठ)—१४० ।

बनराय (खाला)—११५ ।

बल्लभनाथ (मेड़तिया राठोड़)—२३४ ।

बलवंतसिंह (मेतवाले का सरदार)—

१६६-६७ ।

बलवंतसिंह (देलवाड़े का चौहान सरदार)—२३६ ।

बहादुरशाह (गुजरात का सुलतान)—

४३-४, ६४, ६६-७०, ६३ ।

बहादुरसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—

१३६, १६७-६८, २१७, २१६-२०, २४० ।

बहादुरसिंह (चौहान)—१२६ ।

बहादुरसिंह (तंवर)—१६६ ।

बाघसिंह (राठोड़)—१३८ ।

बापा रावल (देखो कालभोज) ।

बाबर (मुगल बादशाह)—४३-४, ४८, ५६, ८४ ।

बाला (चौहान)—८२, २२०, २२३ ।

बालाजी बाजीराव (पेशवा)—१३१ ।

बासना (बांसना, भील)—१, १२ ।

बांकीदास (जोधपुर का कविराजा, ग्रंथकार)—४५, ५३, ७७, १०८ ।

बिहारीदास पंचोली (प्रधान)—११७-१८ ।

बीका (देवलिये का रावल)—७५-६ ।

बीसनसिंह (महारावल, देखो विष्णुसिंह) ।

बुधसिंह (बूंदी का महारावल)—११७, १२२ ।

बेभर्ड (कप्तान)—१६८ ।

बेयीराम (बड़वा)—५६ ।

बेंसन (कर्नल)—१७१ ।

ब्रजबिहारीसिंह (कुशलगढ़ के रावल रणजीतसिंह का पुत्र)—२३४ ।

भ

भगवतसिंह (बांसवाड़ा के महारावल अजबसिंह का पुत्र)—११६ ।

भगवंतसिंह (अर्थूखे का चौहान ठाकुर)—२२३ ।

भगवंतसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ रावल)—२२६ ।

भबुंड (वागड़ का गुहिलवंशी राजा)—४२ ।

भर्तृदामा (महाचक्रप)—२६ ।

भर्तृदामा (चक्रप)—२६, ३१ ।

भर्तृभट (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)—४१, २३७ ।

भर्तृभट (दूसरा, मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)—४१, २३७ ।

भवानीशंकर (भट)—१३६, १४७ ।

भवानीसिंह (डूंगरपुर का महारावल)—५६ ।

भवानीसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—१३६, १५५-१५७, १६२-१६४, १६६-१६८, २१७, २१६, २४० ।

भवानीसिंह (चौहान)—२२१ ।

भवानीसिंह (गोपीनाथ के गुदे का राठोड़ ठाकुर)—२३४ ।

भागचंद (कायस्थ, महाराष्ट्र जगतसिंह का प्रधान)—६४-५, ६ ।

भाण (सारंगदेवोत)—७६ ।

भाण (चौहान सूरु का पुत्र)—२२१ ।

भायल (ब्राह्मण)—२१ ।

भारतसिंह (बांसवाड़ा के महारावल अजबसिंह का पुत्र)—११६, १२६, २२५ ।

भारतसिंह (कुशलगढ़ के रावल रणजीतसिंह का पुत्र)—२३४ ।

भारतेन्द्रसिंह (सूरपुर का महाराज) —

२२० ।

भीमदेव (गुजरात का सोलंकी राजा)

—३६ ।

भीमदेव (दूसरा, भोलाभीम, गुजरात का

सोलंकी राजा) —३८-३९, ४२ ।

भीमसिंह (मेवाड़ का महाराजा) —

१४१-४२, २२५, २२६ ।

भीमसिंह (बूंदी के महाराज रामसिंह का

पुत्र) —१६६ ।

भीमसिंह (चौहान) —२२७ ।

भीमसिंह (सलूबर का रावत) —१४५ ।

भीमसिंह (महारावल अजबसिंह का पुत्र)

—११५-१७, १२३, २४० ।

भीमसिंह (अर्थूणे का चौहान ठाकुर)

—६६, २२३-२४ ।

भूचंद (वागड़ का गुहिलवंशी राजा)

—२३६ ।

भूपत (सिलहदी का पुत्र) —६८ ।

भूमक (लत्रप) —३१ ।

भैरवसिंह (अर्थूणे का चौहान ठाकुर) —

२२३ ।

भैरूदास (राठोड़) —८३ ।

भैरूसिंह (सलूबर के रावत भीमसिंह का

दूसरा पुत्र) —१४५ ।

भोज (मालवे का परमार राजा) —

१७, २१-२, ३३-४, ३६ ।

भोज (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा) —

४०, २३७ ।

भोपालसिंह (खांदू के कुंवर शंकरसिंह

का पुत्र) —२१६ ।

म

मणिशंकर (नागर ब्राह्मण) —२४ ।

मत्तट (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा) —

४१, २३७ ।

मथनसिंह (मेवाड़ का महारावल)

—२३८ ।

मदन (चौहान) —१२५, २२१-२२ ।

मदनसिंह (बांसवाड़ा के महारावल शंभु-

सिंह का पुत्र) —२०५, २१६ ।

मनु एन० मेहता (ग्रंथकार) —१३४ ।

मनोहरदास (भाटी) —५५ ।

मनोहरदास (राठोड़) —१०० ।

मनोहरदास (बारहठ) —१३६ ।

मयाकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल भीम-

सिंह की चौहान राणी) —११७ ।

मयानाथ (मेहड़) —१३८ ।

मलक (गोहिल) —१११ ।

मलिक तोगाई (गुजरात का सरदार)

—६७ ।

मलिक हुसेन बहमनी (देखो निज़ामुलमुल्क) ।

महमूदखिलजी (मांडू का सुलतान) —

४३ ।

महमूद गज़नवी (सुलतान) —३६ ।

महमूद (मालवे का सुलतान) —६८ ।

महमूदशाह (शाहज़ादा) —४७, ४६ ।

महादेव (उज्जैन का हाकिम) —३८ ।

महायक (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)

—४१, २३७ ।

महासिंह (भाळा) —६६ ।

महेन्द्र (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा) —

४०, २३७ ।

महेन्द्र (दूसरा, मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)—४१, २३७ ।
 महाराराव (होल्कर)—११६ ।
 माधवसिंह (राठोड़)—६६ ।
 माधवसिंह (सूरपुर का महाराज)—
 १६८, २२० ।
 माधवसिंह (सीसोदिया, कानोड़वालों का पूर्वज)—६६ ।
 मांडव्य (राठोड़)—८३ ।
 माधोसिंह (चौहान)—४७ ।
 माधोसिंह (सूरपुर के महाराज हंमीरसिंह का पुत्र)—१३६ ।
 माधोसिंह (सुलकिया का ठाकुर)—
 १६७ ।
 माधोसिंह (अहाड़ा, आमजा का ठाकुर)—
 २३६ ।
 मान (मेतवाले का चौहान सरदार)—
 ८२-८, ६०, २२२-२३ ।
 मान भारती (गोसाईं)—४५-६ ।
 मानसिंह (बांसवाड़े का महाराज)—
 ८१-३, २२२, २४० ।
 मानसिंह (प्रतापगढ़ का महाराजकुमार)—
 २०७ ।
 मानसिंह (खांदू का महाराज)—१६८,
 २१७-१८ ।
 मानसिंह (रावत, सारंगदेवोत)—६६ ।
 मानसिंह (अहाड़ा, देवदा का ठाकुर)—
 २३६ ।
 मानसिंह (कछुवाहा)—७८ ।
 मार्कंड पुन० मेहता (ग्रंथकार)—१३४ ।

माल्कम (सर जॉन, पोलिटिकल एजेंट)—
 १५१, १५३, १५६, १६२
 २२६ ।
 माल्कम (ग्रंथकार)—५०, १४४ ।
 मालदेव (मारवाड़ का राजा)—७६-६ ।
 माहप (सीसोदे का राणा)—४१, २३८ ।
 मुकंद (ब्राह्मण)—१०१ ।
 मुजफ्फरशाह (गुजरात का सुल्तान)—
 १३, ४३, ६१ ।
 मुज्जाहिदुलमुल्क (गुजरात का अफसर)—
 ६१ ।
 मुराद (शाहजादा)—८८, ६८ ।
 मुहम्मदसिंह (भींडर का शहावत स्वामी)—
 ६६ ।
 मुहाफिज़ुल्ला (गुजरात का सरदार)—
 ४४ ।
 मुंज (मालवे का परमार राजा)—१७,
 ४१ ।
 मुंभपाल (चौहान आस्थान का पुत्र)—
 २२० ।
 मूलराज (गुजरात का सोलंकी राजा)—३६ ।
 मेघरथाम बापूजी (पेशवा का सेना-नायक)—
 १३०-३२ ।
 मेरा (चौहान)—६४-६६ ।
 मेयो (गवर्नर जनरल)—१८१ ।
 मैकडॉनल्ड (कप्तान)—१५६, १६२ ।
 मैकेंज़ी (मेजर)—१७२-७३, १७५, २३१ ।
 मेटकाफ़ (गवर्नमेंट का सेक्रेटरी)—
 १५४ ।
 मोतीसिंह (गनोड़ का चौहान)—२२७ ।
 मोतीसिंह (गोपीनाथ के गुदे का राठोड़
 ठाकुर)—२३५ ।

मोतीसिंह (उंबाके का चौहान ठाकुर)

—२३६।

मोरली (मुरली, ब्राह्मण)—१३८।

मोहकमसिंह (राठोड़)—११६।

मोहकमसिंह (अक्षोर गांव का ठाकुर)

—१२५।

मोहनकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल
पृथ्वीसिंहजी की पुत्री)—२१२।

मोहब्बतसिंह (गोपीनाथ के गुहे का
राठोड़ ठाकुर)—२३४।

मोहब्बतसिंह (मोहयावास का चौहान
सरदार)—२३६।

मंडलीक (मंडनदेव, वागड़ का परमार
राजा)—१७, १८, ३३-४।

घ

अशोदामा (महाब्रतप)—२८, ३१।

अशोदामा (ब्रतप)—३०, ३२।

अशोवर्मा (यशोवर्मदेव, मालवे का
परमार राजा)—१५, ३५, ३७,
५७-८।

योगराज (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४१, २३८।

र

रघुनाथसिंह (सलुंबर का रावल)—६६।

रघुनाथसिंह (खांदू का महाराज)—
२१७।

रघुनाथसिंह (खांदू के महाराज कृतेहसिंह
का पौत्र)—२१८-१९।

रघुवीरसिंह (सुरतगढ़ का शेखावल
ठाकुर)—२१३।

रणछोड़ (कसारा)—१४७।

रणछोड़दास (रावल)—६६।

रणजीतसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राव)
—२३३-३४।

रणबाज्रखं (नवाब)—११४।

रणमल (मारवाड़ का राठोड़ राव)—८३।

रणसिंह (कर्णसिंह, मेवाड़ का गुहिलवंशी
राजा)—४१, २३८।

रणसिंह (रणजीतसिंह, तेजपुर का महा-
राज)—१३६, १६८, २१३।

रतनजी (पंडित)—१५१।

रतना (जोशी)—११४।

रत्नसिंह (मेवाड़ का महारावल)—२३८।

रत्नसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—६७-
७०,

रत्नसिंह (कांधलोत)—८४।

रत्नसिंह (सुंथ का राणा)—१३२-३३।

रत्नसिंह (गरी का राव)—१८५-८६,
२२४, २२६।

रत्नसिंह (खांदू के महाराज मानसिंह का
पुत्र)—२१८।

राधोजी कदमराव (मरहटा अफसर)—
११६।

राजकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल उदय-
सिंह की राणी)—४५।

राजकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल भवानी-
सिंह की राणी)—१६६।

राजश्री (वागड़ के परमार राजा सत्य-
राज की चौहान राणी)—३३।

राजपाल (कायस्थ)—३५।

राजसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—६५,
१७-८, १०३-१०७, ११३, २२१ ।
राजसिंह (बांसवाड़ा के महारावल शंभु-
सिंह का पुत्र)—२०५ ।
राजसिंह (बेदला के राव नाहरसिंह का
चाचा)—२०५ ।
राजसिंह (बघेला)—११५ ।
राजसिंह (चूडावत, बंगू का रावत)—
६६ ।
राजि (सोलंकी)—३६ ।
राजेन्द्रसिंह (बांसवाड़ा के महारावल
पृथ्वीसिंहजी दूसरे का पुत्र)—२१२ ।
राधानाथ (जोशी)—११४ ।
राम (राव मालदेव का पुत्र)—७६-८० ।
रामकिशन (जोशी)—११४ ।
रामचंद्रसिंह (कुशलगढ़ के राव रणजीत-
सिंह का पुत्र)—२३४ ।
रामदीन (होल्कर का सेनापति)—१४४-
४५ ।
रामरसदे (महाराणा राजसिंह की परमार
राणी)—१०४ ।
रामसिंह (बूंदी का महाराव)—१६६ ।
रामसिंह (राठोड़ आसकरण का पौत्र)—
२२६ ।
रामसिंह (जोधपुर का महाराजा)—५६ ।
रामसिंह (डूंगरपुर का महारावल)—
५६-७ ।
रामसिंह (खंगारोत, सीसोदिया, रावत)—
८४ ।
रायमल (राव मालदेव का पुत्र)—७६ ।
रायमल (मेवाड़ का महाराणा)—४३,
५५, ६३ ।

रायमल (ईंदर का राठोड़ राव)—४३,
२२० ।
रायसिंह (राव चंद्रसेन का पुत्र)—८० ।
रायसिंह (गद्दी का चौहान राव)—२२४,
२२७ ।
रायसिंह (मालिया का जाड़ेचा ठाकुर)—
२१२ ।
रायसिंह (जोधपुर के महाराजा अभयसिंह
का छोटा भाई)—१२० ।
राहप (सीसोदे का राणा)—४१, २३८ ।
रीडिंग (लॉर्ड, बाइसराय)—२०८ ।
रक्मांगद (कोठारिये का रावत)—६६ ।
रुद्रदामा (महाचत्रप)—२७, ३१ ।
रुद्रसिंह (महाचत्रप रुद्रदामा का पुत्र)—
२७-२८, ३१ ।
रुद्रसिंह (चत्रप, स्वामि जीवदामा का पुत्र)
—३०, ३१ ।
रुद्रसिंह (नौगामावाला)—१२६ ।
रुद्रसेन (चत्रप)—२७ ।
रुद्रसेन (महाचत्रप)—२७-८, ३१ ।
रुद्रसेन (दूसरा)—२८-६, ३१ ।
रूपकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल भीमसिंह
की चौहान राणी)—११७, १२३ ।
रूपसिंह (मेवतिया)—१६७ ।
रूपा (चौहान)—१२४ ।
रॉबिन्सन (मेजर, मेवाड़ का पोलिटिकल
एजेंट)—२१७ ।
रंगेश्वर जानी (नागर)—१३८ ।
रंगेश्वर (ब्राह्मण)—१४७ ।
ल
लक्ष्मणसिंह (बांसवाड़े का महारावल)
—१२, १३६-३७, १६८-६९, १७५,

१७७-७८, १८८, १९२, १९९-
२०२, २१५, २१७-२२०, २२६-
२७, २३५, २४० ।
लक्ष्मणसिंह (कुशलगढ़ के राव रणजीत-
सिंह का छोटा भाई)—२३३ ।
लक्ष्मणसिंह (श्रीवाड़े का राठोड़ सर-
दार)—२३५ ।
लक्ष्मीवर्मा (लक्ष्मीवर्मदेव, मालवे का
परमार महाकुमार)—५७-८ ।
लालकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल उम्मे-
दसिंह की पुत्री)—१५५ ।
लालकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल शंभु-
सिंह की राणी)—२१५ ।
लालसिंह (ग्रामजा का सरदार)—
१९६-९७ ।
लालसिंह (पीपलदे का महाराज)—
२०५, २१५ ।
लालसिंह (झुंगरपुर राज्य के बनकोड़े का
ठाकुर)—२२८ ।
लालसिंह (भीमसोर का अहाड़ा सर-
दार)—२३६ ।
लालसिंह (बसी का चौहान सरदार)—
२३६ ।
लासवाई (लाछवाई, लाछकुंवरी, बांसवाड़ा
के महारावल जगमाल की राणी)
—१३, ७२-७४ ।
लाला दवे (ब्राह्मण)—१०९ ।
लिटन (लॉर्ड, गवर्नर जनरल)—१९२ ।
लिम्बरज (वागड़ का परमार राजा)
—३३-३४ ।
लियरमाउथ (मेजर)—१७१ ।
लीमा (देवड़ा)—१२४ ।

लूणकर्ण (जैसलमेर का भाटी राजकुमार)
—५५ ।

लेले (ग्रंथकार)—१०८, ११९ ।

ख

वज्जा (डोली)—१३९ ।

वज़ीरखां (नवाब)—८१ ।

वणवीर (दासीपुत्र)—७०-१ ।

वरसिंह (राठोड़ राव जोधा का पुत्र)—
८६, ८८, २२८-२९ ।

वरसी (रावल, देखो वीरसिंहदेव) ।

वल्लभराज (गुजरात का सोलंकी राजा)
—३६ ।

वाक्पतिराज (मालवे का परमार राजा)
—३२ ।

वाक्पतिराज (दूसरा, सांभर का चौहान
राजा)—१४ ।

वाजीराव (देखो बाजीराव) ।

वाड एण्ड पार्सनिज़ (ग्रंथकार)—
१२०, १३१ ।

वामन (ब्राह्मण)—२१ ।

वामन (कायस्थ)—३५ ।

वालटर (कर्नल)—२०० ।

वालभ (कायस्थ, सांघिचिग्रहिक)—३५ ।

विवटोरिया (साम्राज्ञी)—१७१-७२,
१९२ ।

विक्रमसिंह (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४१, २३८ ।

विक्रमादित्य (मेवाड़ का महाराजा)—
७० ।

विजयकीर्ति (जैन आचार्य)—२२ ।

विजयकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल
विष्णुसिंह की चौहान राणी)—
१२३ ।

विजयराज (परमार राजा)—१६, २०,
३५ ।

विजयपाल (गुहिलवंशी राजा)—३८ ।

विजयसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—
१३६, १४०, १४६-१५०, १५५,
१६८, २१७, २१९, २२५, २४० ।

विजयसिंह (गुहिलवंशी राजा)—४१,
२३८ ।

विजयसिंह (जोधपुर का ठाठेड़ महाराजा)
—५६ ।

विजयसिंह (सोनगरा)—४५ ।

विजयसिंह (मेतवाले का चौहान ठाकुर)
—२२३ ।

विजयसिंहदेव (जयसिंहदेव, वागड़ का
गुहिलवंशी राजा)—४२, २३६ ।

विजयसेन (क्षत्रप)—२८ ।

विजयसेन (महाक्षत्रप)—२८, ३१ ।

विनेकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल विष्णु-
सिंह की राणी)—१२६, १२६ ।

विमलशाह (पोरवाड़ मंत्री)—१५ ।

विलिंग्डन (लॉर्ड, वाइसराय)—२०८ ।

विशना (भोपा)—२३२ ।

विश्वसिंह (क्षत्रप)—२६ ।

विश्वसिंह (महाक्षत्रप)—२६, ३१ ।

विश्वसेन (क्षत्रप)—२६, ३१ ।

विष्णुसिंह (बिसनसिंह, बांसवाड़े का महा-
रावल)—११७-१२७, १२६-३०,
१४०, २२४-२५, २४० ।

वीरदामा (क्षत्रप)—२८, ३१ ।

वीरभाय (चौहान)—८२, ८६ ।

वीरसिंह (बांसवाड़ा के महारावल उदय-
सिंह का श्वसुर)—४५ ।

वीरसिंहदेव (वरसीरावल, वागड़ का महा-
रावल)—४२, २३६ ।

वैरट (गुहिलवंशी राजा)—४१, २३८ ।

वैरसिंह (गुहिलवंशी राजा)—४१,
२३८ ।

श

शक्रसिंह (शक्रसिंह, सखतसिंह, क्षत्र-
सिंह, लूणावाड़े का राणा)—१३४-
३५ ।

शक्रा (खडिया)—१४६ ।

शक्रिकुमार (गुहिलवंशी राजा)—४१,
२३७ ।

शहामतअलीखान (सुंशी, बांसवाड़ा राज्य
का अहलकार)—१६६ ।

शत्रुशाल (चौहान)—२२३ ।

शामजी (डोलिया)—११४ ।

शालिवाहन (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)
—४१, २३७ ।

शाहजहां (मुगल बादशाह)—६३-४,
६७-८ ।

शाहसुल (मिर्जा, सेनानायक)—८८-६,
२२३ ।

शाहू (सितारे का राजा)—१३१-१४० ।

शिवकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल शंभु-
सिंह की राणी)—२१६ ।

शिवनाथ (खवास, ब्राह्मण)—१४३ ।

- शिवसिंह (हुंगरपुर का महारावल)—
५७, २२५ ।
- शिवसिंह (गरखिया का सीसोदिया सरदार)—
—२३६ ।
- शील (शीलादित्य, मेवाड़ का गुहिलवंशी
राजा)—४०, २३७ ।
- शुचिर्मा (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)—
—४१, २३७ ।
- शुजा (बादशाह शाहजहाँ का पुत्र)—
६८ ।
- शुजाउलमुल्क (गुजरात का अफसर)—
—६१ ।
- शेखा (पटेल प्रेमा का पुत्र)—१३६ ।
- शेरकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वी-
सिंहजी दूसरे की पुत्री)—२१२ ।
- शेरशाह सूरी (दिल्ली का सुलतान)—७६,
७८ ।
- शेरसिंह (राठोड़)—१४५, २३४ ।
- शोभाचंद (कोठारी)—१४७, १६७ ।
- शोभितसिंह (मोलां का चौहान सरदार)—
—२२१, २२२ ।
- शॉवर्स (कसान, ग्रंथकार)—१७०-७१ ।
- शंकरनाथ (खवास, ब्राह्मण)—१४४ ।
- शंकरसिंह (खांदू के महाराज रघुनाथसिंह
का पुत्र)—२१६ ।
- शंकरसिंह (बांसवाड़ा के महारावल शंभु-
सिंह का पुत्र)—२०५, २१६ ।
- शंभुसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—१८६,
२२६ ।
- शंभुसिंह (बांसवाड़े का महारावल)—
२०१-२०२, २०४-२०५, २०७,
२१५-१६, २४० ।

- शंभुसिंह (नरवाली का सीसोदिया सरदार)—
—२३६ ।
- श्यामबाई (महारावल समरसिंह की माता)—
—१००, १०१ ।
- श्यामदास (ब्राह्मण)—१०१ ।
- श्यामलदास (बारठ)—१४० ।
- श्यामलदास (कविराजा, ग्रंथकार)—
५१, १०४, ११३, ११८, १२१-
१२२ ।
- श्रीहर्ष (सीयक दूसरा, मालवे का परमार
राजा)—३३ ।

स

- सम्प्रदातप्रां (सिपाही विद्रोह का एक
अपराधी)—१८६ ।
- सज्जनसिंह (मेवाड़ का महाराणा)—
१६२ ।
- सज्जनसिंह (बनकोबे का चौहान सरदार)—
—२२८ ।
- सज्जनसिंह (तेजपुर का सरदार)—१३६,
२०१, २१६ ।
- सत्यदामा (चत्रप)—३१ ।
- सत्यराज (वागड़ का परमार राजा)—
३३ ।
- सक्रदरगं (गुजरात का अफसर)—६१ ।
- सबलसिंह (मोलां का चौहान सरदार)—
—४७ ।
- समरथ (चारण)—१३६ ।
- समरदान (गोपीनाथ के गुदे का राठोड़
ठाकुर)—२३४ ।
- समरसिंह (मेवाड़ का महारावल)—१३८ ।

- समरासिंह (बांसवाड़े का महारावल)—
११, ६४, ६०-६, ६६, १०६,
११०, २२४, २४० ।
- सरदार (नायक)—११५ ।
- सरदारख्वां (पठान)—१४० ।
- सरदारसिंह (गनोड़े का चौहान ठाकुर)—
—२२७ ।
- सरदारसिंह (सोलंकी)—१२५ ।
- सरदारसिंह (ठाकुर)—११५ ।
- सरदारसिंह (खांधू का महाराज)—
१५५, १६८, २१७ ।
- सरदारसिंह (मोलां का चौहान ठाकुर)—
—२२१ ।
- सरदारसिंह (दूसरा, मोलां का चौहान
ठाकुर)—२२१ ।
- सरदारसिंह (अर्थुंगे का चौहान ठाकुर)—
—२२३ ।
- सरदारसिंह—१३७ ।
- सरदारसिंह (मेवाड़ के महाराणा राज-
सिंह का पुत्र)—६८ ।
- सरदारू (नायक)—११३ ।
- सरूपसिंह (भाला ठाकुर)—११६,
१२५ ।
- सरूपसिंह (राठोड़)—१२४ ।
- सरूपसिंह (रावल)—१२५ ।
- सवा (ब्राह्मण)—११५ ।
- सवा (पंडा)—११० ।
- सवाईसिंह (बांसवाड़ा के महारावल
लक्ष्मणसिंह का पुत्र)—२०१, २१७ ।
- सवाईसिंह (मोलां का चौहान ठाकुर)—
—२२१ ।
- सहदेव (ब्राह्मण)—५७ ।
- सहस्रमल (हुंगरपुर का महारावल)—
२२२ ।
- सादुल्लाखां (शाहजहां का यज़ीर)—६७ ।
- सामर्जी (डोलिया)—११२ ।
- सामंतसिंह (हुंगरपुर राज्य का संस्थापक,
गुहिलवंशी राजा)—२५, ३५,
३८-६, ४१-२, २३८-३६ ।
- सामंतसिंह (गुजरात का चावड़ावंशी
राजा)—३६, ३६ ।
- सामंतसिंह (राठोड़)—१३६ ।
- साहेबकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल
अजयसिंह की पुत्री)—११६ ।
- साहेबकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल भीम-
सिंह की परमार राणी)—११७ ।
- सांत (सिद्धराज जयसिंह का मंत्री)—३७ ।
- सांवलदास (चौहान)—८२, २२१ ।
- सिकंदरख्वां (भिवाग का नायक)—६८ ।
- सिलहरी (रायसेन का तंदर राजा)—६८ ।
- सिधुगज (माजवे का परमार राजा)—
१७, ३४, ३६ ।
- सिंह (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)—
४१, २३७ ।
- सिंहा (राठोड़, भावुआवालों का पूर्वज)—
—२२६ ।
- सीहदेव (वागड़ का गुहिलवंशी राजा)—
—३८, ४२, २३६ ।
- सुखा (पंडा)—११० ।
- सुजानसिंह (महारावल लक्ष्मणसिंह का
पुत्र)—१३६, २१६ ।
- सुरताण (सिरौही का राव)—७८ ।
- सुरताणसिंह (नवागांव का चौहान ठाकुर)—
—२२८ ।

सुजतानसिंह (मेवाड़ के महाराणा राजसिंह का पुत्र) — ६७ ।
 सुंदरसिंह (बसी के सरदार का पूर्वज) — ८४ ।
 सूजा (चौहान) — ८२-३, १२४ ।
 सूरजकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल शंभुसिंह की राणी) — २१६ ।
 सूरजकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वीसिंहजी द्वितीय की पुत्री) — २१२ ।
 सूरजमल (बांसवाड़ा के महारावल सैसमल का पुत्र) — १६ ।
 सूरजमल (बूंदी का राव) — ७० ।
 सूरजमल (जेटमालोत, राठोड़) — ८३, ८६-८, २२३ ।
 सूरजमल (चुंडावत, थाणे का रावल) — १४५ ।
 सूरतसिंह (चौहान) — २२१ ।
 सूरतसिंह (शक्कावत) — ६६ ।
 सूर्यमल (मिश्रण, ग्रंथकार) — १२२ ।
 सूर्यसिंह (बांसवाड़ा के महारावल लक्ष्मणसिंह का पुत्र) — १३७, २०१, २२० ।
 सूरा (चौहान) — २२१ ।
 सेटनकर (डब्ल्यू० एस०, भारत सरकार का फ़ॉरेन सेक्रेटरी) — १७७, १८१, २३२ ।
 सेडन (ग्रन्थकर्त्ता) — १०५, ११८ ।
 सैसमल (डूंगरपुर का महारावल) — ५६, ८३-४ ।
 सोभागसिंह (बांसवाड़ा के महारावल कुशलसिंह का पुत्र) — १११ ।
 सोभागसिंह (मोलां का चौहान सरदार) — १३१, २२१-२२ ।

सोमदत्त (ब्राह्मण) — २, १३ ।
 सोमदास (वागड़ का महारावल) — २, १३, ४३, २३६ ।
 सोमरसेट (ब्रिगेडियर) — १७१ ।
 संग्रामसिंह (सांगा, मेवाड़ का महाराणा) — ४३-६, ४८, ५३, ५५, ५६, ६१, ६७, ७०, ८४, ६३, १२०-२२, २२० ।
 संग्रामसिंह (दूसरा, मेवाड़ का महाराणा) — ११७-१८ ।
 संग्रामसिंह (गढ़ी का चौहान ठाकुर) — २२४, २२७ ।
 संघदामा (महाक्षत्रप) — ३१ ।
 संभार्जी (मरहटा) — १४० ।
 स्टूअर्ट (गवर्नर जनरल की कौंसिल का मेम्बर) — १५४ ।
 स्पियर्स (कप्तान) — १६३-६४ ।
 स्वरूपदेवी (मारवाड़ के राठोड़ राव मालदेव की भाली राणी) — ७६ ।
 स्वामिजीवदामा (महाक्षत्रप) — ३०, ३२ ।
 स्वामिरुद्रदामा (महाक्षत्रप) — ३०, ३२ ।
 स्वामिरुद्रसिंह (महाक्षत्रप) — ३०, ३२ ।
 स्वामिरुद्रसेन (महाक्षत्रप) — ३०-३२ ।
 स्वामिरुद्रसेन (दूसरा, महाक्षत्रप) — ३२ ।
 स्वामिसत्यसिंह (महाक्षत्रप) — ३२ ।
 स्वामिसिंहसेन (महाक्षत्रप) — ३२ ।

ह

हचिन्सन (कर्नेल) — १७५, १८१, १८६ ।
 हटीसिंह (राजपूत) — १४२ ।

हठीसिंह (राठोड़)—११७ ।
हरिराम (बड़वा)—५६ ।
हरिविहल (मरहटा)—१३१ ।
हरिश्चन्द्रवर्मा (हरिश्चन्द्रदेव, मालवे का परमार महाकुमार)—५८ ।
हरिसिंह (देवलिये का स्वामी)—७५ ।
हरिसिंह (भुवासे का चौहान ठाकुर)—२३६ ।
हरिन्दकुमारसिंह (कुशलगढ़ के राठोड़ राव रणजीतसिंह का पौत्र)—२३४ ।
हर्ष (बैसवंशी राजा)—३२ ।
हाजीब्रां (शेरशाह का गुलाम)—७४, ७६-८ ।
हाथी (चौहान)—४७, २२३ ।
हार्डिज (लॉर्ड, वाइसराय)—२०७-२०८ ।
हिम्मतसिंह (गुदे का ठाकुर)—१८५-६ ।
हिम्मतसिंह (गढ़ी का चौहान राव)—२२४, २२७ ।
हुमायूँ (मुगल बादशाह)—७० ।

हेतकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वी-सिंहजी द्वितीय की पुत्री)—२१२ ।
हेवर (कलकत्ते का बड़ा पादरी)—२३ ।
हेमकुंवरी (बांसवाड़ा के महारावल उम्मे-सिंह की पुत्री)—१५५ ।
हेस्टिंग्स (मार्क्स ऑफ़ हेस्टिंग्स, वाइसराय)—१५०-५१, १५४ ।
हंडली (डॉक्टर, ग्रंथकार)—५१, ६०, १६६ ।
हंमीरसिंह (महाराणा)—२३८ ।
हंमीरसिंह (कुशलगढ़ का राठोड़ राव)—२२६-३१ ।
हंमीरसिंह (सूरपुर का महाराज)—१३६, १६८, २१६-२० ।
हंमीरसिंह (खड़िया शाखा का पुत्र)—१४६ ।
हंमीरसिंह (कुंडले का सीसोदिया ठाकुर)—२३६ ।
हंसपाल (मेवाड़ का गुहिलवंशी राजा)—४१, २३८ ।

(ख) भौगोलिक

अ

- अचलपुरा (गांव)—५ ।
 अजमेर (नगर)—१६, १६-२०, २६,
 ७६, ७६-८०, ६७, २०५, २१२,
 २३२, २३४ ।
 अजंदा (गांव)—१६० ।
 अडोर (गांव)—११६, १२५ ।
 अणहिलवाड़ा (गुजरात की राजधानी)
 —३६ ।
 अनाम (नदी)—३ ।
 अफ़ग़ानिस्तान (देश)—२५ ।
 अमरपुरा (गांव)—८३, ६० ।
 अमरेई (गांव)—१४६ ।
 अर्थूणा (गांव)—३. ६-१०, १६-७, २२,
 २६, ३३-४, ४७, ६६, १२७, १२६,
 २१४, २२३-२४ ।
 अर्चली (पहाड़, देशो आबू) ।
 अलवर (राज्य, नगर)—७६ ।
 अवन्ति (देखो उज्जैन) ।
 अहमदनगर—२२१ ।
 अहमदाबाद (नगर)—११६, १७० ।

आ

- आऊवा (गांव)—१६६ ।
 आगरा (नगर)—४८, ६७ ।

- आबू (अर्चली, पर्वत)—१४, ३६, ७८,
 २१२ ।
 आमभरा (क़स्बा)—२, १३७ ।
 आमजा (आमभा, गांव)—१११, १६६,
 २३६ ।
 आसन (गांव)—३ ।
 आसीरगढ़—८८ ।
 आसोदा (गांव)—६ ।
 आहाद (आघाटपुर, नगर)—३०, ३८,
 ४०-१ ।
 आंजणा (गांव)—६, १०१ ।
 आंबेर (नगर)—७८ ।

इ

- इटाउवा (गांव)—८०, ८३ ।
 इंदौर (राज्य, नगर)—२, ११६, १८६,
 २२० ।

ई

- ईडर (राज्य, नगर)—४३, ४६, ४८-६,
 ६८, ७८, ६३, १२०-२१, १४१-
 ४२, १५५, १८५, २१२, २१५,
 २२०-२१ ।
 ईरान (देश)—२५ ।
 ईसरीवास (गांव)—१२६ ।

उ

- उगमशियां (गांव)—१४७ ।
 उजैन (अवन्ति, नगर)—३२, ३८,
 ४५, ५७, १००, १०७, १३१ ।
 उदयपुर (राज्य, नगर)—२, ३५, ४०,
 ४१, ४६, ४८, ५६, ६४, ६८,
 ६९, १०६, ११७, १२२, १२४,
 १२६, १८६, १८६, १९२, १९८,
 २०२, २०८, २२५ ।
 उबरदी (गांव)—१३६ ।
 उमेदगढ़ी (गांव)—१३६, १४७ ।
 उबाबा (गांव)—२३६ ।

ऊ

- ऊंदेरा (गांव)—१२४ ।

ए

- एकलिंगजी (तीर्थस्थान)—४१ ।
 एरो (एराव, नदी)—३ ।

ओ

- ओरीवाड़ा (ओडवाड़ा, गांव)—१०,
 १८४, २१४, २३५ ।
 ओवरी (गांव)—५७ ।
 ओहोरो (ओहोरा, गांव)—१३६ ।

अं

- अंतकारिया (गांव)—११७ ।

क

- कण्ड (राज्य)—२५, ३६ ।

- कबाणा (गांव)—२१२ ।
 कझोज (नगर)—३२, ३६ ।
 करची (करजी, घाटी)—६७ ।
 कर्णाटक (देश)—३३ ।
 कलकत्ता (नगर)—२३, १८१, १८२,
 २१२ ।
 कलिंजरा (गांव)—३, ६, २३, १७४,
 २३० ।
 कलोल (नाला)—३ ।
 कागदी (नदी)—३, २१०-११ ।
 काटियावाड़ (देश)—२५, ३६, १७८,
 २१२ ।
 कानोड़ (गांव)—७६, ८६, १२७ ।
 कालपी (नगर)—४८ ।
 कांकोली (कस्बा)—१७१ ।
 कांठल (प्रदेश)—१६२ ।
 किशनगढ़ (राज्य, नगर)—१०२ ।
 कुआणिया (कुवाणिया, गांव)—४७,
 ८४, १६७, १७४-८५, १६७,
 २३६ ।
 कुशलकोट (गांव)—१११ ।
 कुशलगढ़ (कस्बा)—२, ६, ८-१०, २४,
 १०७-८, १२६, १३६, १७०, १७३-
 ७७, १८३, १८६, १८०-६१, १६३,
 १६८, २१४, २२८-३४ ।
 कुशलपुरा (गांव)—१०, ११२, २१४,
 २३५ ।
 कुंडला (गांव)—१३८, १६६, २३६ ।
 कुंडा (गांव)—४० ।
 कुभलगढ़ (किला)—७१ ।
 कोटड़ा (गांव)—६ ।
 कोठरिया (गांव)—६६, ११७ ।

कोनिया (गांव)—१३८-३९ ।

कोंकण (देश)—२१ ।

कंथकोट (किला) ।

ख

खमेरा (गांव)—५, ६ ।

खलिघट (घाटी)—३३ ।

खानपुरा (गांव)—६७ ।

खानवा (रणक्षेत्र)—४४, ४८, ५८-६०,
६३-४, ८४, ९३ ।

खांदू (खांधू, गांव)—२, ६-१०, ८१-३,
१३६, १५५, १६७-६८, १६४-६६,
२१४-१५, २१७-१९, २२२ ।

खेड़ा (गांव)—१७६, २२६ ।

खेड़ा (रोहानियां, गांव)—२१४, २२७ ।

खैरवाड़ा (झावनी)—१७५, १८७,
२३१ ।

खैराबाद (गांव)—६७ ।

खोडन (गांव)—३, ६, २३४ ।

खंभात (नगर)—२, ६७ ।

ग

गढ़ा (गांव)—१४७ ।

गठड़ (गरड़ा, गांव)—६० ।

गनोड़ा (गांव)—३, ६-१०, २१४,
२२३, २२७ ।

गया (तीर्थ)—१४७ ।

गरखिया (गांव)—१३७, १४८, २३६ ।

गलियाकोट (गांव)—१४४ ।

गातोड़ (देखो वीरपुर) ।

गांगी (गांगरी, गांव)—६१ ।

गांसड़ा (गांव)—२१६, २२७-२८ ।

गांवड़ा (गांव)—१६६ ।

गढ़ी (कस्बा)—३, ६-१०, १६, १०१,
१२१, १२६, १२८-२९, १३७,
१४०, १४४, १४८, १६७, १८५-८६,
१९०, १९३, १९५-९६, २०७,
२१४-१५, २२२, २२४-२७ ।

गढ़ी (रायपुर की, गांव)—२३४ ।

गुजरात (देश)—२, ५, ८, १३-४, १८,
२५, ३५-८, ४२-३, ४६, ६१,
६४, ६६, ६७, ६९-७०, ७८, ८१,
८३, १०५, ११६, २२० ।

गुड़ा (भालों का)—११६, १२५ ।

गुड़ा (सूजा का)—१२४ ।

गुड़ा (गांव)—१८५-८६ ।

गुड़ा (चंदूजी का)—२१४-१५ ।

गोगुंदा (गांव)—७६ ।

गोदावरी (नदी)—१३२ ।

गोधरा (नगर)—५ ।

गोपीनाथ का गुड़ा (गांव)—१०, २१४,
२३४-३५ ।

गोरी तेजपुर (गांव)—२१४, २१६ ।

ग्वाखियर (राज्य)—२ ।

घ

घाटा (गांव)—१२५ ।

घाटोदि (घांठरीय, गांव)—८८ ।

घाटोज (गांव)—३, ६ ।

घाणेराम (कस्बा)—६६ ।

घंटाछा (गांव)—१०२ ।

च

चटायणा (गांव)—१६२, १६८ ।

वरखारी (नगर)—२१३ ।

वाप (नदी)—३, १६, २२५ ।

वावंड (गांव)—४६-७, ४६ ।

वांदरबाड़ा (गांव)—६ ।

विताव (गांव)—१३८ ।

चित्तोड़ (चित्तोड़गढ़, किला)—४१, ४५,

५५, ५६, ६७-८, ७०-१, ६३,

६६-८, २३८ ।

चिलकारी (परगना)—१३३, १६०,

१६२, १६८, २२५ ।

चीतली (चीतरी, गांव)—२, १३,

१८६, २२६ ।

चींच (छींछ, गांव)—५, ६, २०-१,

६०-२, ७३, १०१, १२६, १२८-६,

२२५ ।

चुंढा (परगना)—१२६ ।

चोपासाग (गांव)—६ ।

छ

छप्पन (प्रदेश)—३२ ।

छापनिया (गांव)—१३६ ।

छांजा (गांव)—२३६ ।

छोटी पाड़ी (देखो पाड़ी छोटी) ।

ज

जगत (गांव)—३८ ।

जगमेरु (पहाड़)—१४, ६०, ६६-७० ।

जयपुर (नगर)—१२०, २१३ ।

जहाज़पुर (कस्बा)—६७ ।

जानपाल्या (गांव)—१६८ ।

जानपुरा (गांव)—१६८ ।

जानावाली (गांव)—१४७ ।

ज़ाज़िमपुरा (गांव)—१६८ ।

जीरापुर (गांव)—१७१ ।

जैसलमेर (जैसलमेर, राज्य, नगर)

—५५ ।

जोधपुर (राज्य, नगर)—४५-५३, ७७-

८०, ८५, ८८, १०५, १०८, १२०,

२१२, २२८ ।

जोबदखा (गांव)—१३६ ।

झ

झाबुआ (राज्य, नगर)—२, ८१, ८६,

१६०, १६८, २२६, २३४ ।

झालोद (कस्बा)—२, ५, १६८, २१० ।

ट

टेकला (गांव)—१३८ ।

ठ

ठाकरदा (गांव)—२१४, २२६-२२८ ।

ठीकरिया (गांव)—६१ ।

ड

डडूका (गांव)—१३७, १४८ ।

डोंगरडूंगर (गांव)—१११ ।

डोंगल (ज़िला)—१०४, १०६, ११२-३ ।

डूंगरपुर (राज्य, नगर)—१-२, १३,

२२, ३५, ३८-४०, ४२, ४३-७,

४६, ५१-३, ५६-७, ५६, ६१-२,

६४-८, ७१-२, ७५-६, ७६-८०, ८३,

८६-६०, ८२-४, ८७-८, १०६-७,

१११, ११३, ११७, १२१, १४१-४२,

१४४, १४५, १५१, १६२, १७२,

१७५, १८३-८६, १६८, २००,

२०२, २०४, २०६, २१४, २१६,

२२१-२२, २२४-२८, २३१, २३६ ।

ढ

ढसिया (गांव)—२१५ ।

त

तलवाड़ा (तलपाटक, क़स्बा)—३, ४,
६, १४, १६, ३४, ३७, ४७, ११०,
११६, १२४, १४५-४६, १६६,
२००, २१०, २३४ ।

तली (गांव)—१३६ ।

तांबेसरा (गांव)—१०८, २२८ ।

तेजपुर (गांव)—१०, ७३, १११,
१३६, १६८, २१४, २१६ ।

थ

थाणा (गांव)—१४५ ।

द

दक्षिण (देश)—१८ ।

दाखीपीपला (गांव)—२०० ।

दानपुर (गांव)—२१० ।

दांता (राज्य, नगर)—२१२ ।

द्वारिका (तीर्थ)—६७ ।

दिल्ली (नगर)—४४-४, ७०, ६३, १०३,
११२, ११६, १४६-४९, १७४,
१६२, २०६, २२३, २३३, २३८ ।

दीव (बंदरगाह)—६७ ।

दीवड़ा (बड़ा दीवड़ा)—३८ ।

देवगिरि (देखो देवलिया) ।

देवड़ा (गांव)—१११, २३६ ।

देवड़ा (गांव)—१६६ ।

देवलवाड़ा (गांव)—२३६ ।

देवलिया (देवगिरि, राज्य)—७१, ७५,
१०७, १४२ ।

दोहद (नगर)—५, १६० ।

दौलतपुरा (गांव)—२१४, २१६ ।

ध

धार (धारानगरी, राज्य)—२, ३६-७,
६०, १०८, ११६, १२७, १३०,
१४०, १४३-४४, १५१-५२, १५७,
१६०-६२ ।

ध्रांगधरा (राज्य, नगर)—२१२ ।

न

नगरी (मध्यमिका)—३० ।

नरवाली (गांव)—१०५, ११०, २३६ ।

नर्मदा (नदी)—३३ ।

नवागांव—१३५, २१४, २२८ ।

नागदा (प्राचीन स्थान)—४१ ।

नागदी (नाला)—३ ।

नागवाड़ा (गांव)—१०० ।

नागौर (नगर)—८० ।

नाडोल (क़स्बा)—२२० ।

नामली (गांव)—५, २०४ ।

नीमच (छावनी)—१७१ ।

नूतनपुर (देखो नोगांवां) ।

नोगांवां (नूतनपुर, नौगामा, गांव)—
३, ६, २२, ४५, ५८, ६२, १२६,
२२५ ।

प

पदाल (गांव)—१२६ ।

परखा (गांव)—१४० ।

परतापुर (प्रतापपुरा, गांव)—८, ६, ८१ ।

पाढ़ी (छोटी, गांव)—७३, १३२ ।

पाणाहेड़ा (पांशुलाखेटक, गांव)—१७,
३२-४ ।

पानरवा (गांव)—१८५ ।

पार (गांव)—३ ।

पारवा (गांव)—१४४ ।
 पाराहेवा (गांव)—१२५ ।
 पारोदा (गांव)—८-६, ७४, १४२ ।
 पांडिया (नाला)—३ ।
 पिपलाय (गांव)—३ ।
 पिपलुंद (गांव)—८० ।
 पीपलखुंट (गांव)—१६१ ।
 पीपलदा (गांव)—२१४-१५ ।
 पीपलूआ (गांव)—१०१ ।
 पीलाखाल (युद्धक्षेत्र)—४५, ४८ ।
 पुर (कस्बा)—६७-८ ।
 पुष्कर (तीर्थ)—३० ।
 पेटलावद (परगना)—२ ।
 पेरोन (गांव)—१७१ ।
 पोन्न (नाला)—३ ।
 पोसीना (गांव)—१६६, १८५ ।
 पंचमहाल (जिला)—२ ।
 प्रतापगढ़ (राज्य, नगर)—२, ३, ७५,
 ६२, ६७-८, १०७, ११२, १४२,
 १६३, १६६, १८२-५, १८८-९१,
 १६८, २०७, २२२ ।

फ

फतेपुरा (गांव)—१४७ ।
 फलोदी (कस्बा)—५६ ।
 फूलिया (परगना)—६७ ।

ब

बखतपुरा (गांव)—१२६ ।
 बदा सालिआ (गांव)—१०६ ।
 बड़ी पहाड़ (गांव)—११४ ।
 बड़ी बसी (गांव)—१०१ ।

बड़ौदा (नगर, राज्य)—१४६ ।
 बड़ौदा (वटपदक, वागव की प्राचीन राज-
 धानी)—३६, ४२ ।
 बड़ौदिया (गांव)—६ ।
 बदनोर (कस्बा)—६७, २२० ।
 बनकोड़ा (गांव)—८३, १२१, २१४,
 २२४, २२७-२८ ।
 बनारस (नगर)—२१२ ।
 बनेड़ा (कस्बा)—६७ ।
 बरोड़ा (गांव)—१४२ ।
 बसी—(गांव)—८४, १२६, १४५,
 १४८, २२४, २३६ ।
 बागोर (गांव)—२२६ ।
 बारी गावां (गांव)—१५०, १५५ ।
 बागीदोरा (बागीदोरा, व्याघ्रदोरक, गांव)
 —३, ६, २२ ।
 बांसवाड़ा (बांसवाला, बंसबहाल, राज्य,
 नगर)—१-४, ६, ६, ११-४, १६-७,
 २०, २२-६, ३०, ३४-५, ३७, ४०,
 ४३-५, ४७-८, ५०-५४, ५६-६२,
 ६६-७, ६६, ७१-७, ७६-८१, ८३,
 ८४-६४, ६६-११४, ११६-२६,
 १२८-३५, १३७-३८, १४१-५४,
 १५७-६०, १६२-६३, १६५, १६७-
 ७६, १८१-६२, १८८-२१२, २१४-
 ३३, २३५, २३६-४० ।

बीकानेर (राज्य, नगर)—७७, ७८, २२८ ।
 बीछावाड़ा (गांव)—२३६ ।
 बीलाड़ा (गांव)—५६ ।
 बुरहानपुर (नगर)—८८, २२३ ।
 बूढवा (गांव)—१५०, १५५ ।

बूंदी (राज्य, नगर)—७०, १०७, १२२,

१३७, १६६ ।

बेगूं (गांव)—६६ ।

बेडवास (गांव)—६४-५, १०१ ।

बेदुका (क़स्बा)—२०५ ।

बोडीगामा (गांव)—१११ ।

बोरी (गांव)—६, १८६ ।

बंगाल (देश)—१८ ।

बंबई (नगर)—१६४, २१२ ।

बंसबहाल (देखो बांसवाड़ा) ।

भ

भखरदिया (गांव)—५७ ।

भरतपुर (राज्य, नगर)—४४, ४८ ।

भाद्राजुण (क़स्बा)—८० ।

भारत (हिन्दुस्तान, देश)—२५, ४३,

४४, ५२, १८१-८२, २०६-७,

२१२, २३३ ।

भींडर (क़स्बा)—६६, १२१, २३५ ।

भीमगढ़ (गांव)—१३४ ।

भीमसोर (गांव)—२०१, २३६ ।

भीलवण (गांव)—८७ ।

भीलवाड़ा (क़स्बा)—११३ ।

भुआसा (भुवासा, गांव)—६१, १००,

६२३ ।

भुखिया (गांव)—१६६, २३६ ।

भूगढ़ा (गांव)—६, २२१ ।

भैरोंगढ़ (रेलवे स्टेशन)—५ ।

भोपाल (राज्य, नगर)—५८, १४० ।

भोपावर (एजेन्सी)—१६० ।

भोमट (ज़िला)—४०, ८०, १८५ ।

भंवरिया (गांव)—११६, १६७ ।

भंवरिया (गांव, पाराहेड़ा का)—१२५ ।

भंवरिया (गांव)—१०० ।

म

मऊड़ा (गांव)—५५ ।

मथुरा (नगर)—२५ ।

मध्यभारत (देश)—३ ।

महमूदाबाद (नगर)—६७ ।

महियक (इलाका)—१०८ ।

महीकांठा (इलाका)—२, १६६ ।

माखिया (गांव)—१४० ।

मानगढ़ (गांव)—२०६ ।

मान्यखेट (मालखेड, नगर)—३३ ।

मारवाड़ (देश)—७८-६, ८३, ८६,

१२०, १७१ ।

मालपुरा (क़स्बा)—६८ ।

मालवा (देश)—८, १५, १७-८, २१-

२, २५, ३२-८, ४१, ४३, ५७,

६७-८, ८६, ६२-३, १००, १०५,

१०७-८, ११६, १३७, १६२, १६८,

१७०, १६०, २१४, २२६ ।

मालिया (गांव)—२१२ ।

माहिन्द्री (देखो माही) ।

माही (माहिन्द्री, मही, महीसागर, नदी)

—२-३, ४७, ५६, ६१, ६३, ६७,

७५-६, ८६, ११०, १४१, १७२,

२२१-२२ ।

मांडल (गांव)—६७-८ ।

मांडलगढ़ (क़स्बा)—६७ ।

मांडव (गांव)—२१४, २२७-८ ।
 मांडू (मालवा की राजधानी)—४३, ६०,
 ६८, ६२, ६४ ।
 मुकनपुरा (गांव)—११४ ।
 मूंगाणा (गांव)—१५६ ।
 मेढ़ता (कस्बा)—८८, २२८-२९ ।
 मेढ़ीखेड़ा (गांव)—१६८ ।
 मेतवाला (गांव)—३, १०, ४७, ८२-
 ३, १२४, १६६, २१४, २२२ ।
 मेवाड़ (देश)—२५, ३५, ३८, ४०-४,
 ४६, ४६, ६६-७१, ७८-८१, ८४,
 ९०, ९२-८, १०३-७, १११-६,
 १२४, १२६-७, १४१-३, १४५,
 १७१, १७४-५, १७७, १८३-५,
 १८६-९०, १९६, २०२, २०५,
 २०८, २१७, २२०, २२२, २२४,
 २२६, २२९, २३२, २३५, २३८-
 ३६ ।
 मेवात (प्रदेश)—७६ ।
 मोइयावास (गांव)—२३६ ।
 मोखेरी (गांव)—१६६ ।
 मोटा गढ़ा (गांव)—६, ११५ ।
 मोड़ासा (कस्बा)—६७ ।
 मोर (ठिकाना)—२१४, २२८ ।
 मोरी (ठिकाना)—२२५ ।
 मोरीखेड़ा (गांव)—१६१ ।
 मोराना (मोटा गांव)—१०, ४७, १३१,
 १३७, २१४, २१५, २२०-२१ ।
 मंदसौर (नगर)—४६, ४६ ।

य

यूरोप (खंड)—२३३ ।

र

रणोटीखेड़ा (गांव)—१४० ।
 रतलाम (राज्य, नगर)—२, ५, १७१,
 १७३-७४, १७६, १८८, २०७-८,
 २१०, २१४, २२६, २३३ ।
 राजपूताना (देश)—१८, २२, २५,
 ३०-१, ५१, ५४, ६३, १६२,
 १८३-८४, २०७, २३२ ।
 राजसमुद्र (भील)—६५, १०६ ।
 राठदिया पारदा (गांव)—१४७ ।
 रामपुरा (कस्बा)—११८ ।
 रायपुर (गांव)—२३४ ।
 रीयां (कस्बा)—२२६ ।
 रूपनगर (कस्बा)—१०५ ।
 रंचेरी (गांव)—१८६ ।
 रेवाकांठा (एजेंसी)—२ ।
 रोणियां (गांव)—१४० ।

ल

लखनऊ (नगर)—१०७, २१२ ।
 लाट (देश)—३६ ।
 लापढ़ी (गांव)—१४४ ।
 ललिवानी (गांव)—३ ।
 लूणावाड़ा (नगर)—१३३-३५, २१६ ।
 लेंबदिया (गांव)—१६७ ।
 लोहारिया (गांव)—५, ६, ४७, ६१,
 ११२, ११४ ।
 लोंधा (गांव)—१३६ ।

व

वजवाना (गांव)—३ ।

बटपट्टक (बड़ोदा, गांव) — २२, ३६, ४२ ।
 बनाला (गांव) — २००, २२० ।
 बसई (देखो बसी) ।
 बागड़ (प्रदेश) — १, १७, २२, २६,
 ३२, ३४-५, ३७-६, ४२-४, ४७,
 ४६, ५५, ५७, ५६-६२, ६४, ६६-
 ६, ७२-३, ७७, ८१, ८३-४, ६३,
 ११६, ११६, १२७, १४४-४६,
 १६२, २२०-२३, २३८-३६ ।
 बाडिया (बाडिया, गांव) — १४३-४४ ।
 विहजदेव (गांव) — १४, ७२, १ ।
 बीरपुर (गातोड़, गांव) — ३८ ।
 वैयागड़ (देखो वागड़) ।
 व्याघ्रदोरक (देखो बागीदोरा) ।

श

शकस्तान (सीथिया, देश) — २५ ।
 शामपुरा (गांव) — १४७ ।
 शाहपुरा (कस्बा) — १२६ ।
 शेरगढ़ (इलाका) — १३३, १६०, २२५ ।
 शेल्काटी (गांव) — ६ ।

स

सकरवट (गांव) — १३६ ।
 सरवन (गांव) — १६८, २१४-१५ ।
 सरवाणिया (गांव) — २६-७, १०६,
 १३६ ।
 सरा (ठिकाना) — ८१ ।
 सलूबर (कस्बा) — ८४, ६६, १४५,
 १७१ ।
 सरेबी (गांव) — ६ ।
 सागड़ोद (गांव) — १४७, २१४, २१७ ।

सागवाड़ा (कस्बा) — ४३, ६१ ।
 सांगवा (गांव) — १२४ ।
 सातलियावास (गांव) — ८८ ।
 सादबी (कस्बा) — ११४ ।
 सांभर (नगर) — ४१ ।
 सामोली (गांव) — ४० ।
 सालिष्ठा बड़ा (गांव) — १०६ ।
 सायण (गांव) — १०१ ।
 सावर (कस्बा) — ६७ ।
 सितारा (सतारा, नगर) — १३१-३२,
 १३५, १४० ।
 सिंध (देश) — ३६ ।
 सिप्री (नगर) — १७१ ।
 सिरोही (राज्य, नगर) — ७८, ८०, ६७,
 १६६, २०४, २१२ ।
 सिवाणा (जिला) — ८० ।
 सिवास (जिला) — ६८ ।
 सीकरी (नगर) — ४५, ५३ ।
 सीतल (गांव) — ६७ ।
 सीलवण (गांव) — १०६ ।
 सीसोदा (गांव) — ४१ ।
 सुजणपुर (गांव) — ४५, ५३, ६२,
 १११ ।
 सुलकिया (गांव) — १६७ ।
 सूकरचेत्र (सोरों, तीर्थ) — ६७ ।
 सुंथ (राज्य, नगर) — २, ८१, १०२,
 ११४, ११७, १३२-३४, १३७,
 १४०, १६६, १६०, १६८, २०६,
 २२५ ।
 सुरजगढ़ (कस्बा) — २१३ ।
 सूरपुर (गांव, झुंगरपुर राज्य) — ५६ ।

सुरपुर (गांव, बांसवाड़ा राज्य)—१३६-
३७, १४६-४०, १४६, १६६, १६८,
१६४, २१४, २१७, २१६-२० ।
सेमलिया (गांव)—३, १२६, १४६,
२२४-२४, २३६ ।
सेरा (गांव)—१३८ ।
सेवना (गांव)—११४ ।
सैलाना (राज्य नगर)—२, १६०,
१६८ ।
सोदकपुर (गांव)—१८८ ।

सोम (नदी)—७६, १७२ ।
सौराष्ट्र (देश)—३७ ।
स्थली मंडल (देश)—२२ ।

ह

हरमाड़ा (क़स्बा)—७७ ।
हत्तदीघाटी (रणस्थल)—७८ ।
हारन (नदी)—३ २३ ।
हिन्दुस्तान (देखो भारत) ।
हिंगोखिया (गांव)—१२६ ।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४४	८	बादशाद	बादशाह
४५	१	बांकीदान	बांकीदास
१२३	११	वि० सं० १७६४	वि० सं० १७६३
„	१२	ई० सं० १७३७	ई० सं० १७३६
१२७	१२	बांसवाड़ को	बांसवाड़े को
१२८	१३	४	२, ३
„	„	३०	२८, २९
१८५	४	कुवानया	कुवानिया
१९८	३	भगड़ा	भगड़ों
१९९	१८	शहर	शेर
२०५	१०	तथा शंकरसिंह	मदनसिंह तथा शंकरसिंह
२३०	२७	कुशलगड़	कुशलगढ़

